भूमिका.

वैद्यमनोरमा यह प्रसिद्ध ग्रंथ भिषग्वर कालिदासजीने बनाया है. इसमें तो संशय नहीं है. क्योंकि पटलांतमें इनके नामका उल्लेख है, परंतु यह ज्ञात नहीं होता है कि यह भिषग्वर किस देशके रहनेवाले थे ? इस ग्रंथमें प्रायः केरलदेशमें प्रसिद्ध औषधियोंकेही विशेषतासे प्रयोग दिखाई देते हैं. इससे यह भिषग्वर कालिदासजी केरलदेशके रहनेवाले थे ऐसा अनुमान किया जावेगा तो कुछ अन्यथा नहीं होवेगा. इस ग्रंथमें वीस पटल हैं और उनमें ज्वरादि कतिपय रोगोंकी चिकित्सा, अन्यग्रंथोंमें नहीं कही हुई, बहुत गुणवाली और अल्पप्रयाससे सिद्ध होनेवाली ऐसीही कही है. इस ग्रंथको उपयुक्त जानकर, कविराज सुखदेव वैद्य वाचस्पतिजीने सुखबोधिनी भाषाटीका और टिप्पणियोंसे अलंकृत करके उपस्थित किया है इससे वैद्योंको विशेष लाभ पहुँचेगा इसमें संदेह नहीं.

धाराकल्प ग्रंथके कर्त्ताका भी नामादिक नहीं जान पडता है. इस ग्रंथमें धारापरिषेकविधि बहुतही सरलतासे तथा स्पष्ट रीतिसे कही हैं. यद्यपि यह विधि चरक सुश्रुत वाग्भटादि ग्रंथोंमें स्वेदाध्यायमें कही हैं. तथापि उससे इस ग्रंथमें विशेष चतुराईसे कहीं हैं इसलिये इस छोटेसे ग्रंथसे वैद्योंको अधिक लाभ होगा. इस ग्रंथकोभी कविराज सुखदेव वैद्य वाचस्पतिजीने अपनी भाषाटीकासे विभूषित किया है. इनसे यदि वैद्यलोगोंको कुछ लाभ होगा तो प्रसिद्धकर्त्ता अपने परिश्रमको सफल समझेगा.

भवदीय कृपाभिलाषी-**गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास.**

अथ

वैद्यमनोरमान्तर्गतविषयानुक्रमणिका ।

चतुर्दशः पटलः ।

धाराकल्पविषयानुक्रमणिका ।

इति धाराकल्पविषयानुक्रमणिका समाप्ता ।



॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीकालिदासविरचिता

वैद्यमनोरमा।

भाषाटीकासहिता।



अथ ज्वरचिकित्साधिकारो नाम प्रथमः पटलः।



मंगलाचरणम्।

वन्दे मन्दक्वणद्भृङ्गवृन्दानन्दकरं मदैः।
हन्तारमन्तरायाणामिन्दुशेखरनन्दनम् ॥ १ ॥

आप्त पुरुषोंके कथनानुसार श्रीकालिदास प्रथम अपने वैद्यमनोरमा ग्रन्थमें इष्टदेवको नमस्कार करतेहैं इस लिये कि जिससे मैं निर्विघ्नपूर्वक ग्रंथ समाप्त करसकूं तथा इसके पढनेवालेभी इसे भली प्रकारसे पढकर सिद्धहस्त चिकित्सक होवें ॥ मदसे धीरे २ शब्द करते हुए भ्रमरसमुदायके आनंदकर्ता विघ्नोंके नाशकर्ता शिवके पुत्र गणपतिको मैं नमस्कार करताहूं ॥ १ ॥

टीकाकारकी ओरसे मंगलाचरण तथा परिचय।

योगिनो यतचित्ताक्षाः समाधौ यदुपासते।
नमामि सकलातीतं परं तद्धाम केवलम् ॥ १ ॥
प्रासोष्ट यं गुणवती सकलेन्दुशीला
लक्ष्मीः क्षमेव धृतमूर्तिरुदारलीला।
श्रीमान् प्रशस्यचरितोऽपि च यस्य तारा-
चन्द्रं पिता प्रथितसौम्यगुणप्रकर्षः ॥ २ ॥
स प्राज्यबुद्धिविभवः सुखदेवनामा-
ऽऽयुर्वेदविद्रुचिरवैद्यमनोरमायाः।
टीकां तनोति विशदां सुखबोधिनीं सन्
मोदाय बालजनशीघ्रविबुद्धये च ॥ ३ ॥

प्रथम ज्वरचिकित्साको कहता हूं।

जो पुस्तक कि वैद्यकसे सम्बन्ध रखती हो उसके प्रथम ज्वरका वर्णन दिखाई देता है, इसलिये यहां यह दर्शा देना कि क्यों ज्वरको प्रथम कहा जाता है इसलिये कि यह शरीररोगोंमें सबसे प्रथम उत्पन्न हुआहै तथा बलवान् देह इन्द्रिय और मनको संतप्त करनेवाला है और सबसे अ-

धिक यह कारण है कि यह जन्मसमय और मरणसमयमें अवश्य होना है जैसे कि धन्वन्तरिजीनेभी कहा है। " देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगाग्रजो बली । ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा ॥ अन्यच्च—ज्वरप्रभावो जन्मादौ निधने च महत्तमः ॥"

इमां मनोरमां पाणौ गृहीत्वा रोगपीडितान् ।
चिकित्सयन्तो लोकेऽस्मिन् कीर्तिमन्तो भवन्ति हि ॥ २

वैद्य इस मनोरमाको हाथमें लेकर रोगसे दुःखित पुरुषोंकी चिकित्सा करते हुए इस लोकमें कीर्तियुक्त होते हैं ॥ २ ॥

सुलभसुभगभेषजानि सिद्धा-
न्यमृतसमानफलानि यानि यानि ।
सकलगदहराणि मानवाना-
मिह कथितानि भवन्ति तानि तानि ॥ ३ ॥

सुखपूर्वक प्राप्त होनेवाले सुन्दर औषध और जो अमृतके समान फल देनेवाले हैं तथा मनुष्योंके सम्पूर्ण दुःखोंको हरनेवाले हैं वेही औषध इस मनोरमामें कहे गये हैं ॥ ३ ॥

ज्वरे लंघनानिषेधः ।

अत्यध्वश्रमशोकस्त्रीभयक्रोधादिजे ज्वरे ।
लङ्घनं न हितं तत्र पयः पथ्यं यथाऽमृतम् ॥ ४ ॥

अधिक मार्ग चलनेसे, थक जानेसे, शोकसे, अत्यन्त मैथुनसे, भयसे तथा क्रोधसे पैदा हुए ज्वरमें लङ्घन नहीं देना चाहिये इस अवस्थामें दूध अमृतके तुल्य है ॥ ४ ॥

वातादिज्वरेषु पेयादिक्रमविधिः ।

दोषजासु बलं रक्षन् लङ्घयेज्जूर्तिषु क्रमात् ।
पेयाक्वाथरसान्नाद्यैः पथ्यैः साध्यानुपक्रमेत् ॥ ५ ॥

वात, पित्त, कफ आदि दोषोंसे उत्पन्न हुए ज्वरोंमें बलकी रक्षा करते हुए साध्य ज्वरोंको क्रमसे पेया, क्वाथ, अन्नादिरससे वैद्य चिकित्सा करे ॥ ५ ॥

लंघनावश्यकता (चक्रदत्तात्)।

आमाशयस्थो हत्वाग्निं सामो मार्गान् पिधापयन् ।
विदधाति ज्वरं दोषस्तस्माल्लंघनमाचरेत् ॥

आमाशयमें स्थित दोष अग्निको नाश करके आमके सहित मार्गोंको रोककर दोषज्वरको करते हैं इससे लंघन करना चाहिये । अगर वाताधिक ज्वरमें लंघन किया जायगा तो वायुका अधिक प्रकोप हो जायगा इसीसे अत्यध्वादिजनित ज्वरमें

लंघनका निषेध है, रूक्षधर्मसे यह उत्पन्न होते हैं और रूक्ष धर्म वायुका है इसलिये इसमें निषेध है इसी बातको दर्शानेके लिये एक अन्य स्थानमेंभी इस तरहसे लिखा है । (कफपित्ते द्रवे धातु सहेते लंघनं महत् । सामे वातेऽपि लंघनम्) लंघनका फल अपने स्थानपर जो दोष और अग्नि स्थित नहीं है उनको ठीक स्थानपर करताहै । तथा दोषोंका पाचन ज्वरको दूर करताहै । अग्निको दीप्त करता है । शरीरकी लघुता और अन्नमें रुचि उत्पन्न करता है । जैसे चक्रदत्तमेंभी कहा है " अनवस्थितदोषाग्नेर्लङ्घनं दोषपाचनम् । ज्वरघ्नं दीपनं काङ्क्षारुचिलाघवकारकम् ॥ " सम्यक्तया लंघन होनेके लक्षण । " सृष्टमारुतविण्मूत्रं क्षुत्पिपासासहं लघुम् । प्रसन्नात्मेंद्रियं क्षामं वरं विद्यात् सुलंघितम् ॥ सुश्रुतः ॥ "

षडङ्गपानीयविधानम् ।

शृतशीतं शृतोष्णं वा जलं दोषाद्यपेक्षया ।
पेयं षडङ्गसिद्धं वा तप्तं वा भृष्टलोष्टकैः ॥ ६ ॥

---

१ " शुण्ठीमलयजोशीरघनपर्पटवारिभिः । षडङ्ग इति विख्यातो योगोऽयं सूरिभिः स्मृतः ॥ "

वात, पित्त, कफ आदि दोषकी अपेक्षासे पका हुआ शीत, तथा पका हुआ उष्ण अथवा षडङ्गसिद्ध (सोंठ, लाल चन्दन, खस, नागरमोथा, पित्तपापडा) जल अथवा गरम लोहेसे तप्त किया जल पीना चहिये ॥ ६ ॥

द्वितयैकांशधान्याकनागराभ्यां शृतं जलम् ।
पेयं प्रागपि सप्ताहाज्ज्वरितेनाग्निवृद्धये ॥ ७ ॥

दो भाग धनियां एक भाग सोंठ डालकर पकाया हुआ जल प्रथम सात दिन अग्निकी वृद्धिके लिये ज्वरीको पीना चहिये॥७॥

पाठोशीरजलैः सिद्धः क्राथः स्यात् पाचनं ज्वरे ।
नागराम्बुयवासैश्च पृथक् सिद्धः सपर्पटैः ॥ ८ ॥

पाठा, खस, मुस्ता इनसे सिद्ध कषाय ज्वरमें दोषोंको पकानेवाला होता है। सोंठ, मुस्ता, यवासा तथा पित्तपापडा इनसे सिद्ध कषायभी पाचक होता है ॥ ८ ॥

अमृताकणमूलनागराणा-
ममृतानागरदुस्स्पृगम्बुदानाम् ।
अनिलज्वरनाशनौ कषायौ
कथितौ ह्यागमकोविदैर्भिषग्भिः ॥ ९ ॥

गिलोय, पिप्पलामूल, सोंठ तथा गिलोय, सोठ, यवासा, मुस्ता यह दो कषाय वातज्वरके नाशके लिये शास्त्र जाननेवाले वैद्योंने कहे हैं ॥ ९ ॥

गोपाङ्गनाकमलचन्दनसेव्यमुस्ता-
यष्टीजलोत्पलमधूकशतावरीभिः ।
सिद्धं सुशीतमनु माक्षिकशर्कराढ्यं
पित्तज्वरं जयति दाहतृषाढ्यमम्बु ॥ १० ॥

श्वेत चंदन, कमल, लाल चंदन, खस, मुस्ता, मुलहटी, जलकमल, मौआ, सतावर इनसे पकाया हुआ तथा शीत किया हुआ, माक्षिक (शहत) और शर्करासे युक्त कषाय दाह तृषासे युक्त पित्तज्वरको नाश करता है ॥ १० ॥

पक्केन दाडिमफलस्वरसेन वाऽपि
सक्तून् पिबेत् प्रबलपित्तभवज्वरार्तः ।
तद्वत् षडङ्गभृतमम्बु पिबेत् सिताढ्यं
तृड्दाहजूर्तिशमनाय च दीपनाय ॥ ११ ॥

पके हुए अनारके रसके साथ सत्तुओंको पीवे तब भी

१ ‘ विश्व–’ इति पाठान्तरम् ।

प्रबल पित्तसे उत्पन्न ज्वर शान्त हो जाता है। इसी प्रकारसे षडङ्ग (सोंठ, चंदन, खस, दालचीनी, पित्तपापडा, मुस्ता) से सिद्ध जल चीनी मिलाकर पीनेसे भी प्यास, जलन, ज्वरको नाश करता है तथा अग्निको दीप्त करता है ॥ ११ ॥

पथ्याकट्फलनागराम्बुदवचाभूनिम्बधान्यद्रुमै-
र्भार्गीपर्पटकान्वितैः शृतमिदं तोयं सुशीतं पुनः।
मध्वाढ्यं परमाणुरामठयुतं श्लेष्मज्वरं नाशयेत्
कोष्ठार्तिश्वसनाग्निसादकसनारुच्यास्यशोषान्वितम् ॥ १२ ॥

हरड, कायफल, सोंठ, मुस्ता, वच, चिरायता, धनियां, भारंगी और पित्तपापडा डालकर इनसे पके हुए और ठंडे किये हुए जलमें शहत और परमाणुमात्र हींग मिलाकर पीनेसे कोष्ठकी पीडा, श्वास, अग्निमांद्य, खांसी, अरुचि, मुहका सूखना इनसे युक्त श्लेष्मज्वरका नाश होता है ॥ १२ ॥

कूष्माण्डपुष्पस्वरसेन नस्यं सविश्वसारेण कृतं ज्वरघ्नम्।
वातात्मजेनाहृतमौषधं तद्रामानुजस्येव नयेत्प्रबोधम् १३

सोंठके चूर्णके साथ पेठेके फूलका रस मिलाकर नस्य लेनेसे ज्वर इस प्रकार दूर होजाताहै, जिस प्रकार हनुमान्‌से लाई हुई औषधिसे लक्ष्मणकी मूर्च्छा दूर हो गईथी ॥ १३ ॥

प्रलापमूर्च्छाभ्रमदाहयुक्ते तृषान्विते दोषसमूहजूतौ ।
पयोऽङ्गनानां पिबतां नराणां द्रागेव जूतिः प्रशमं प्रयाति १४

प्रलाप, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, पिपासा तथा वात पित्त कफ दोषोंसे युक्त ज्वरमें स्त्रियोंके दूधके पीनेसे शीघ्र ही मनुष्यों-का ज्वर शांत हो जाता है ॥ १४ ॥

सुनिषण्णवेणुपत्रशुण्ठीमुस्ताशृतः क्वाथः ।
हन्याज्ज्वरमतिवेगं दोषसमूहोद्भवं त्रिदिनात् ॥१५॥

सुनिषण्ण (शतावरी), वंशपत्र, सोंठ, नागरमोथा इनसे बनाया कषाय त्रिदोषजन्य अतिवेगयुक्त ज्वरको तीन दिनमें शान्त करता है ॥ १५ ॥

कल्कितामारनालेन स्वच्छन्दं रजनीं पिबेत् ।
न तु देशान्तरगतो बाध्यते शीतिकादिभिः ॥ १६ ॥

कल्कित की हुई हरिद्राका इच्छानुसार कांजीके साथ पान करनेसे परदेशमें भी ठण्डका भय नहीं होता ॥ १६ ॥

तुङ्गद्रुमस्य तरुणानि फलानि चर्म
चत्वारि किञ्चिदपनीय जलस्य कुम्भे ।

---

१ " आरनालं तु गोधूमैरामैः स्यान्निस्तुषीकृतैः । पक्वैर्वा सन्धितैस्तत्तु सौवीरसदृशं गुणैः ॥ "

पक्त्वा गते तदुदके निशि पीतमेकं
संसाधयेज्ज्वरमतीव चिरन्तनं द्राक् ॥ १७ ॥

नारियलके चार तरुण फलोंको लेकर तथा छिलका दूर करके जलके कुंभमें पकावे, जब जल शुष्क हो जावे तो एक नारियलके अन्दरके जलको रातके समय पीवे तो चिरकालज-नित ज्वरको शीघ्र दूर कर देता है ॥ १७ ॥

पाठाशिफापयः पीतं प्रातरेव दिनैस्त्रिभिः ।
शीतिकां कम्पबहुलां नाशयेल्लशुनं तथा ॥ १८ ॥

तीन दिनतक प्रातःकाल ही पाठा तथा सौंफके पानीके पीनेसे शीत तथा कम्पयुक्त ज्वर तीन दिनमें ही नाश हो जाता है इसी तरह लहसनके जलके पानसे भी फल होता है ॥ १८ ॥

वन्दाको बिल्वभवस्तक्रेण घृतेन वा प्रगे पीतः ।
विषमज्वरस्य विकृतिं जयेन्निःशेषमतिविषमाम् ॥ १९

बांदा, बेलफलका चूर्ण यह तक्र तथा घृतसे प्रातःकाल पिये हुए बहुत कठिन विषमज्वरके विकारको जीतलेता है ॥ १९ ॥

जीवन्तीमूलनिर्यूहः सघृतो दाहजूर्तिजित् ।
तद्वन्न्यग्रोधपादस्य बदरीपल्लवस्य वा ॥ २० ॥

जीवन्तीकी जडका क्काथ घृतसहित पीनेसे दाहयुक्त ज्वरका नाश करता है इसी तरहसे वटवृक्ष अथवा बेरके पत्तोंके क्काथसे भी फल होता है ॥ २० ॥

सहदेवीशिफा बद्धा श्वेतसूत्रेण कन्यया ।
निहन्ति दक्षिणे पाणौ ज्वरभूतग्रहादिकान् ॥ २१ ॥

कन्यासे सहदेवीकी जडको श्वेत सूत्रके साथ दाहिने हाथ-पर बंधवानेसे भूत तथा ग्रहादि ज्वरोंका नाश होता है ॥ २१ ॥

चूर्णेन कटुरोहिण्याः पत्रैर्वा छिन्नरोहजैः ।
स्वरसैः सहदेव्या वा सिद्धं तैलं ज्वरं जयेत् ॥ २२ ॥

कुटकीके चूर्णसे तथा गिलोयके पत्तोंसे अथवा सह-देवीके रससे सिद्ध किया तैल ज्वरको शांत करता है ॥ २२ ॥

ज्वरेण मुच्यमानस्य म्रियमाणस्य चोभयोः ।
दृश्यन्ते यानि लिङ्गानि तानि तुल्यानि निर्दिशेत् ॥ २३

इति श्रीवैद्यवरकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां
ज्वराधिकारो नाम प्रथमः पटलः ॥ १ ॥

ज्वरसे छूटते हुए और मरते हुए पुरुषके जो लक्षण

होते हैं उनको तुल्य जाने अर्थात् ज्वर छूटने और मरनेके समय एकही अवस्था होती है ॥ २३ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटीकायां ज्वराधिकारो नाम प्रथमः पटलः।

अथ रक्तपित्तासृग्दरास्थिस्रावसोमरोगाधिकारो नाम द्वितीयः पटलः।

रक्तपित्तस्य निरुक्तिस्तथा निदानम्।

तस्योष्णं तीक्ष्णमम्लं च कटूनि लवणानि च।
घर्मश्चान्नविदाहश्च हेतुः पूर्वं निदर्शितः ॥

उष्ण, तीक्ष्ण, अम्ल, कडवे, नमक, धूपमें बहुत बैठना और विदाही अन्नका सेवन करना यह रक्तपित्तके उत्पन्न करनेके प्रथम कारण हैं ॥

तैर्हेतुभिः समुद्दिष्टं पित्तं रक्तं प्रपद्यते।
तद्योनित्वात् प्रपन्नं च वर्धते तत्प्रदूषयेत् ॥

पूर्वोक्त कारणोंसे कुपित पित्त रक्तके साथ प्राप्त हो जाता

है। एक जैसे ही पित्त और रक्तके धर्म होनेसे बढता है और प्रदूषित करता है ॥

संयोगाद्दूषणात्तत्तु सामान्याद्गन्धवर्णयोः।
रक्तस्य पित्तमाख्यातं रक्तपित्तं मनीषिभिः ॥

एक दूसरेको संयोगसे दूषण करनेसे, गन्ध और वर्णमें सामान्य होनेसे रक्तका पित्त इस तरह समास कर मुनियोंने इसका रक्तपित्त नाम धरा है। इसकी चिकित्सा शीघ्र करनी चाहिये जैसे कि चरकऋषिजी कहते हैं ॥ " महागरं महावीर्यमग्निवच्छीघ्रकारि च। हेतुलक्षणविच्छीघ्रं रक्तपित्तमुपाचरेत् ॥ "

चरकऋषिके मतसे चिकित्साक्रम।

अगर रक्तपित्तका प्रभाव ऊपरकी ओरसे हो तब विरेचनसे चिकित्सा करे अगर नीचेसे रक्तपित्त प्रवृत्त हो तब वमन देकर प्रथम चिकित्सा करे " अधोगे वमनं देयमूर्ध्वगे तु विरेचनम् " इसपर लिखा तो बहुतसा जा सक्ताहै पर विस्तारके भयसे नहीं लिखा गया ॥

मेघनादाभयापद्मकिञ्जल्कैः साधितं जलम्।
सक्षौद्रं रक्तपित्तघ्नं बीजं वा वास्तुकोद्भवम् ॥ १ ॥

चौलाईका शाक, हरड, कमलके केसरसे पका हुआ जल अथवा बथुवाके बीजोंसे साधित जलमें शहत मिलाकर पीनेसे रक्तपित्तका नाश होता है॥ १ ॥

इक्षुदूर्वामृताधात्रीश्वदंष्ट्रास्वस्तिकोद्भवैः।
स्वरसैर्नालिकेराम्बुपयोयुक्तैः सुकल्कितैः ॥ २ ॥

ईख, दूबका घास, गिलोय, आंवला, गोखरू, शतावरीशाक इन सबके रससे तथा नारियलके जलसे कल्क किये हुए ॥ २ ॥

चातुर्जातपयोवृक्षमुकुलाम्बुपयोधरैः।
सारिवोशीरयष्ट्याह्वसितोपलहिमामयैः ॥ ३ ॥
सिद्धं घृतं नवं तूर्णं रक्तपित्तहरं परम्।
अस्थिस्रावं च नारीणां तृड्दाहौ च महाबलौ ॥ ४ ॥

दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, क्षीरीवृक्ष, कमल, नारियल, सारिवा, खस, मुलेठी, मिसरी, छोटी इलायची इनसे सिद्ध घृत शीघ्र ही रक्तपित्तका नाश करता है। अस्थि-

---

१ " त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धि त्रिजातकम्। नागकेशरसंयुक्तैश्चातुर्जातकमुच्यते॥ "

स्राव तथा स्त्रियोंके महा बलवान् तृषा और दाहकी भी शांति करता है ॥ ३ ॥ ४ ॥

उभयायनमप्याशु रक्तपित्तं हिताशिनाम् ।
हन्ति पित्तामयान् चान्यान् पाननावनलेपनैः ॥ ५ ॥

हिताशी स्त्री और पुरुष दोनोंके रक्तपित्तका नाश होता है अन्य भी पैत्तिक रोग इसके पीनेसे तथा नस्य लेनेसे और लेपनसे शान्त हो जाते हैं ॥ ५ ॥

बहुप्रकारैरुपसेव्यमाना क्षौद्रान्विता रक्तजयाय वासा ।
सत्यं समर्था जगतां सवित्री यथैव संसारजयाय गौरी ॥ ६

बहुत प्रकारसे शहतके साथ सेवन की हुई वासा रक्तपित्तको जीतनेके लिये है । यह सत्य है कि संसारके दुःखोंको जीतनेके लिये गौरी समर्थ है; वैसेही संपूर्ण रोगसमूहोंको जीतनेके लिये वासा समर्थ है ॥ ६ ॥

तत्क्षणं क्षुण्णमाघ्रातं शुष्कगोमयमस्यति ।
नासास्रुतमसृक्स्रावं चन्दनस्योत्पलस्य वा ॥ ७ ॥

नासिकाके शोधनेसे रुधिर आने लग जावे तो उसी क्षणमें कूटे हुए शुष्क उपलको सूंघनेसे नासिकासे बहते

रुधिरके प्रवाहका नाश होता है। चंदन और कमलका चूर्णभी इसी तरह फल करता है ॥ ७ ॥

दाडिमकुसुमस्वरसः स्तन्यं वा चूतकुसुमसलिलं वा ।
दूर्वाम्भो वा नस्यान्नासारक्तस्रुतिं जयति ॥ ८ ॥

अनारके फूलोंका रस, स्तनदुग्ध, आमके फूलोंका रस, दूबघासका रस इनमेंसे किसी एककी नस्यसे ही नासिकामे निकलता हुआ रक्त सर्वथा बंद हो जाता है ॥ ८ ॥

असृग्दरनिदानम् ।

विरुद्धमद्याध्यशनादजीर्णाद्गर्भप्रपातादतिमैथुनाच्च ।
यानाध्वशोकादतिकर्षणाच्च भाराभिघाताच्छयनाद्दिवा च ॥

विरुद्ध भोजन (मत्स्य और दुग्ध) मे, अजीर्णसे, गर्भके गिरनेसे, अतिमैथुनसे, अधिक गाडीपर चढनेसे, अत्यन्त मार्ग चलनेसे, शोकसे, अति चिन्तासे, बोझा वगैरह उठानेसे, चोट आदिके लग जानेसे और दिनमें सोनेसे असृग्दरकी उत्पत्ति होती है ॥

चिकित्सा ।

धात्र्यस्थि तण्डुलजलैः पीतं हन्यादसृग्दरम् ।
पीता शीताम्बुना पिष्टा धात्री वोदुम्बराम्बुना ॥ ९ ॥

चावलोंके जलके साथ आंवलेकी मींगीके चूर्णको पीनेसे असृग्दर शान्त होता है, अथवा शीत जलसे तथा गूलरके रससे आंवलेका चूर्ण पीनेसे भी असृग्दर शांत होता है ॥ ९ ॥

जीर्णचेलभसितं पिबेद्वधूः पुष्पजातरुधिरेण पीडिता।
तक्रतैलतरुणोष्णवारिभिः प्राप्तपुष्पसुभगा भविष्यति १०

ऋतु (मासिकधर्म) के दिनोंमें पीडित स्त्री पुराने कपडेकी भस्मको तक्र तैल दन्तिमूलके उष्ण जलसे पान करनेसे फूल (मासिकधर्म) खुलकर आने लगता है ॥ १० ॥

उत्पलपत्रस्वरसः किञ्चित्तैलेन सह पीतः।
अस्थिस्रावं स्त्रीणां नाशयति नरस्य सोमरोगं च ॥ ११

कमलके पत्तोंका रस कुछ तैलके साथ पीनेसे औरतों और पुरुषोंके अस्थिस्राव तथा सोमरोगका नाश होता है ॥ ११ ॥

अनन्तया साक्षतया कृता तैलेन शष्कुली
अस्थिस्रावहरी तद्वत् कार्पासाक्षतजा च सा ॥ १२ ॥

---

१ "तिलजीरकसंयुक्तैः पिष्टैर्या तण्डुलादिभिः। कृता तु हस्तयन्त्राभ्यां सुभृष्टा च तिलोद्भवे ॥ पाशमण्डलसंकाशा शष्कुली सा प्रकीर्तिता ॥ "

चावलोंके साथ अनन्तमूलसे तैलसे साधित की हुई शष्कुली (अपूप) बनाय लेवे, इसके सेवनसे अस्थिस्रावका नाश होता है । इसी प्रकारसे कपास और खलोंकी शष्कुली भी अस्थिस्रावको शान्त करेहै ॥ १२ ॥

पूर्वं तोये वासरं वासितानां
चिञ्चास्थीनां दुग्धकल्कीकृतानाम् ।
पीत्वा स्यातां सुन्दरीपूरुषौ द्रा-
गस्थिस्रावात्सोमरोगाच्च मुक्तौ ॥ १३ ॥

इति वैद्यवरश्रीकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां रक्तपित्ता-सृग्दरास्थिस्रावसोमरोगाधिकारो नाम द्वितियः पटलः ॥ २ ॥

पहिले एक दिन इमलीके बीजोंको पानीमें रख छोडे तदनंतर दूधसे कल्कित करके पीनेसे स्त्री और पुरुषोंके शीघ्र अस्थिस्राव और सोमरोगका नाश होता है ॥ १३ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यविराचितायां वैद्यमनोरमाटीकायां रक्तपित्तासृ-ग्दरास्थिस्रावसोमरोगाधिकारो नाम द्वितीयः पटलः ॥ २ ॥

अथ कासश्वासहिक्काधिकारो नाम तृतीयः पटलः ।

कासनिदानम् ।

धूमोपघाताद्रजतस्तथैव व्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च ।
विमार्गगत्वाच्च हि भोजनस्य वेगावरोधात् क्षवथोस्तथैव ॥

धूँएके उपघात लगनेसे, तथा रज (धूलादि) से, व्यायामके करेसे, रूक्ष अन्नके सेवनसे, बहुत शीघ्र २ भोजनके खानेसे, विमार्गगत भोजनसे, वेगके (मलमूत्रादि) के अवरोधसे तथा छींकके रोकनेसे कास उत्पन्न होती है ॥

हिक्काश्वासनिदानम् ।

विदाहिगुरुविष्टम्भिरूक्षाभिस्यन्दिभोजनैः ।
शीतपानाशनस्थानरजोधूमातपानिलैः ॥
व्यायामकर्मभाराध्ववेगाघातापतर्पणैः ।
हिक्काश्वासश्च कासश्च नृणां समुपजायते ॥

विदाहकारक अन्न, गुरु तथा विष्टम्भी, रूक्ष, अभिष्यन्दी

भोजनोंसे, शीतपान तथा भोजनस्थानसे, धूलि, धूम, धूप, वायु इनके सेवनसे, व्यायामके करनेसे, बोझा तथा मार्गादि चलनेसे, वेगोंको रोकनेसे, अपतर्पणसे मनुष्योंको हिचकी, दमा और कास उत्पन्न होते हैं ॥

कासचिकित्सा।

इन्द्रयवपल्लवयुतं मरिचं खादेद्दिनत्रितयम् ।
कासान् जयति समूलान् नाकुल्याः पादवल्कमिव १॥

इन्द्रजौके नवीन पत्तोंके साथ मरिचको तीन दिनतक खानेसे कासरोगका समूल नाश हो जाता है। जैसे नकुल वृक्षकी छालका नाश कर देता है॥ १ ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रको हस्तिपिप्पली ।
सैन्धवं सयवक्षारं हिङ्गु सौवर्चलं तथा ॥ २ ॥
मरिचं नागरं चैव पलांशैस्तैर्विपाचयेत् ।
क्षीरे चतुर्गुणे सम्यक् सर्पिः सिद्धं पिबेन्नरः ॥ ३ ॥

मघा, मघामूल, चित्रा, गजपिप्पली, लवण, यवक्षार, हींग, सौंचल नमक, मरिच, सोंठ एक २ तोला सभी लेकर चार गुणा दूधमें घृतको सिद्ध कर पीवे ॥ २ ॥ ३ ॥

शूलगुल्मोदरार्तिघ्नं हृद्रोगोरःक्षतापहम् ।
आनाहपाण्डुताप्लीहकासश्वासविकारनुत् ॥ ४ ॥
पिप्पल्याद्यमिदं सर्पिः पित्तगुल्महरं परम् ।
नैकुञ्जिके रसे पीतं सैन्धवं शूलशान्तये ॥ ५ ॥

यह घृत शूल, वायगोला, तथा पेटकी पीडा, हृदयरोग, उरःक्षत, पेटका फूलना, पाण्डु, तिल्ली, खांसी, दमा इन सबको पिप्पल्याद्य घृत शान्त करता है, तथा पित्तगुल्मको भी शान्त करता है, निकुंजाके रसमें नमक मिलाकर पीनेसे शूल शान्त हो जाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

त्रिकटुकमजमोदा चित्रको हिङ्गु भार्ङ्गी
बिडमपि सह चव्यं सैन्धवं यावशूकम् ।
अमृतमिति भिषग्भिः पूजितश्चूर्णराजः
स कफपवनहन्ता शूलहा दीपनश्च ॥ ६ ॥

मघा, मरिच, सोंठ, अजवायन, हींग, भारंगी, बिड नमक, चव्य, सैंधव लवण, जवाखार सब समभाग लेकर चूर्ण बना लेवे, उत्तम वैद्य इसे अमृतचूर्ण कहते हैं । कफवातको तथा

१ अयमर्धश्लोको न दृश्यते केषुचिद्धस्तलिखितपुस्तकेषु ।

शूलको शान्त करता है और अग्निको दीपन करता है ॥ ६ ॥

अमृताविडंगरास्नादारुवराव्योपचूर्णसमतुलितम् ।
सहसा सर्वान् कासान् सितारजः परिहरेत्समधु ॥ ७ ॥

गिलोय, वायविडंग, रायसन, देवदारु, हरड, बहेडा, आंवला, मघा, मरिच, सोंठ सब समभाग लेकर चूर्ण बनाय लेवे, मधु तथा खांडके साथ मिलाकर सेवन करनेसे संपूर्ण कासोंका नाश होता है ॥ ७ ॥

ब्राह्मीवासासिंहलीभिः कुण्डल्या मूलकेन च ।
अमृतालर्ककैः सर्पिः साधितं श्वासकासजित् ॥ ८ ॥

ब्रह्मी, अडूसा, कंटकारी तथा गिलोय, मूली सफेद आककके जलसे पके हुए घृतको खानेसे श्वासकासरोगोंका सर्वथा नाश होता है ॥ ८ ॥

हिङ्गुवचाग्निमहौषधदीप्यकपथ्याकणात्रिवृताम् ।
क्रमवृद्ध्या जनितरजः कासं श्वासं जयेत्सघृतम् ॥ ९ ॥

हींग, वच, चित्रा, सोंठ, लहसन, अजवायन, हरड, पिप्पली, निसोथ क्रमसे भागवृद्धि करके चूर्ण बना लेवे, तदनंतर इसको घृतके साथ सेवन करनेसे कास श्वासका नाश होता है ॥ ९ ॥

विदुलीदलहरितालव्योषशिलाः केशराजरसपिष्टाः।
गुटिकीकृता निहन्युः कासरुजं धूमपानेन ॥ १० ॥

बेंतके पत्ते, हरताल, मघा, मरिच, सोंठ, मनसिल इन सबको भांगरेके रससे पीसकर गोलियां बनाले, इसके धूमपानसे कासकी शान्ति होती है ॥ १० ॥

निर्गुण्डीकुण्डलीपथ्यामरिचैः समभागिकैः।
क्वाथो लवणसंयुक्तः कासश्वासविकारनुत् ॥ ११ ॥

निर्गुण्डी, गिलोय, हरड, मरिच सब समभाग लेकर कषाय बनाकर लवण मिलाकर पीनेसे कास और श्वासके विकारकी शान्ति होती है ॥ ११ ॥

चिञ्चात्वगेका द्विनिशा त्रिसर्जैकपुनर्नवा।
नवजातिदला वर्तिः कासजिद्बाह्यधूपिता ॥ १२ ॥

एक भाग इमलीकी छाल, दो भाग हलदी, तीन भाग राल, एक भाग इट्टसिट्, चम्बेलीके पत्ते नौ भाग इससे बनाई हुई वर्त्तीसे बाहिर धूआं देनेसे कासकी शान्ति होती है ॥ १२ ॥

शिलाकृष्णे समे स्यातां तस्यार्धं विश्वभेषजम्।
तस्यार्धं मरिचं चैव तस्यार्धा तु हरीतकी ॥ १३ ॥

भृङ्गसारेण संपिष्य वर्तिं कुर्यात् पटोदरे ।
तया धूमं पिबेदार्तो भुक्त्वा ताम्बूलचर्वणम् ॥ १४ ॥
कृत्वा त्रिवारं मतिमान् कासश्वासान्निवर्तयेत् ।
तथा क्षौद्रयुतं नूतं नवनीतं सितायुतम् ॥ १५ ॥

मनसिल और पीपल समभाग लेवे, इससे आधा भाग सोंठ, सोंठसे आधा भाग मरिच और मरिचसे आधा भाग हरीतकी लेकर भांगरेके रससे पीसकर तथा कपडेके साथ बत्ती बनाकर, पान चबाकर इस बत्तीसे धूमपान करो इस तरह तीन वार करता हुआ बुद्धिमान् पुरुष कास श्वाससे छूट जाता है वैसेही खाण्ड और शहतसे युक्त नवीन मक्खनके सेवनसे भी फल होता है ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

पलाशोदुम्बरफलं मरिचैः सह भक्षितम् ।
कासं हरेत्त्रिभिर्वारैः कायक्लेशकरं निशि ॥ १६ ॥

ढाकके बीज और गूलरके फलको मरिचके साथ तीन दिन खानेसे रात्रिको दुःखके देनेवाले कासरोगका नाश होता है १६॥

श्वासायासविनाशार्थमाशयेत् कदलीफलम् ।
शृतं मूत्रेऽथवा भृष्टमथवाऽङ्गारपाचितम् ॥ १७ ॥

१ अयमर्धश्लोको न दृश्यते केषुचिद्धस्तलिखितपुस्तकेषु ।

श्वासरोगकी शान्तिके लिये केलेके फलको गोमूत्रमें पकाकर अथवा भूनकर तथा अंगारोंपर पकाकर खाना चाहिये १७

कणोषणनिशापथ्यागुडगोस्तनिकारजः ।
लीढं तैलेन कासानां श्वासानां च निवृत्तये ॥ १८ ॥

मघा, मरिच, हरिद्रा, हरीतकी, गुड, मुनक्का, इनका चूर्ण तैलके साथ चाटनेसे कास श्वासकी निवृत्ति होती है ॥ १८ ॥

निर्गुण्डीस्वरसे श्रृतं तिलभवं भृङ्गादिचूर्णान्विते
पात्रे निःश्रृतमन्वहं दिनमुखे तन्मात्रया यः पिबेत् ।
कासश्वासमशेषमग्नितनुतां शीघ्रं जयेन्मासतो
यक्ष्माणं च समस्तरोगनिलयं रामो यथा रावणम् १९

भारंगी आदिके चूर्णके साथ निर्गुण्डीके रसमें पकाया हुआ तैल प्रतिदिन प्रातःकाल १ मासतक पान किया जाय तो कास, श्वास और सम्पूर्ण अग्निमांद्यको शीघ्र जीत लेता है । और सम्पूर्ण रोगोंके घर राजयक्ष्माको भी जीत लेता है । जैसे रामने रावणको जीत लिया था ॥ १९ ॥

कुण्डल्युत्तमकन्यकामधुकरव्याघ्र्यर्कनिर्गुण्डिका-
कासघ्नीवृषकण्टकीदलरसे क्षीरे क्रमाद्भाविता ।

कृष्णा क्षौद्रसमन्विता दिनमुखे लीढा जयेद्दुःस्थितं
कासश्वासमरोचकं क्षयमपि प्राज्ञो यथा किल्बिषम् ॥२०॥

गिलोय, घीकुआर, भाँगरा, कंटकारी, आक, निर्गुण्डी-कंटकारी (दो वार कंटकारी पाठसे यह मतलब है कि इस स्थानमें द्विगुण कंटकारीका प्रयोग करना चाहिये), वासा, गोखरूके रसमें तथा दूधमें क्रमसे भावना देकर पिप्पली और शहतके साथ प्रातःकाल चाटनेसे दुष्ट कास श्वास अरुचि और क्षयका नाश होता है जैसे पंडित पापको जीत लेता है ॥ २० ॥

परिणतकैडर्याच्छकलीकृत्वाऽऽज्यकुम्भपरिदग्धात् ।
तैलं निःसृतमस्यति कासं श्वासं प्रमेहं च ॥ २१ ॥

पके हुए कायफलके टुकडे कर घृतके कुम्भमें डालकर दग्ध करनेसे तैल निकल आता है। उस तैलके प्रयोगसे कास श्वास और प्रमेहका नाश होता है ॥ २१ ॥

काकोदुम्बरपल्लवं शकलितं दुग्धे गवां पाचितं
किञ्चिन्मिश्रितमागधं दिनमुखे पीत्वा पयस्तादृशम् ।
कासश्वासमशेषमाशु शमयेद्गाढप्रसूनान्वितं
क्षीरं तद्वदिदं द्वयं च भिषजां कीर्तिप्रदं कीर्तितम् २२

कठूमरके पत्तोंके टुकडोंको गौके दूधमें पकाकर प्रातःकाल कुछ पिप्पली मिलाकर पीनेसे तथा मदनपुष्पसे मिलाकर पीनेसे सम्पूर्णतया तथा शीघ्रही कास, श्वासकी शांति हो जाती है। यह दोनों क्षीर वैद्योंको कीर्तिके देनेवाले हैं ॥ २२ ॥

मधुकररसकंसे माणिमन्थाष्टबिल्वं
मरिचतिलजशुण्ठीसर्पिषामञ्जलिद्वे।
शुभतरदिनलग्ने साधु संयोज्य पक्वं
श्वसनकसनशान्त्यै भक्षयेद्भोजनेन ॥ २३ ॥

शुभ दिन तथा शुभ लग्नमें लवण और आठ बेल, मरिच, तैल, सोंठ और घी इनके ६४ तोले लेकर, भांगरेके २५६ तोले रसमें पकाय लेवे, इसको श्वास, कासकी शान्तिके लिये भोजनके साथ खाना चाहिये ॥ २३ ॥

साध्ये श्वासे दोषकालाग्निसत्त्वान्
सम्यग्वीक्ष्य प्रातरेव प्रपीतम्।
कृष्णाशुण्ठीसैन्धवक्षौद्रयुक्तं
राहूच्छिष्टोद्भूतसारं प्रशस्तम् ॥ २४ ॥

---

१ राहूच्छिष्टं लशुनं, तस्य स्वरस इत्यर्थः।

साध्य श्वासमें दोष, काल, अग्नि, वल अच्छी तरह देखकर प्रातःकाल पान किया हुआ पिप्पली, सोंठ, लवण, लहसनका सार और शहत श्वासका नाश करे है ॥ २४ ॥

शुण्ठीकणासिताधात्रीरेणुः क्षौद्रेण मिश्रितः ।
हिक्कां हन्ति समालीढः सक्षौद्रं पिच्छभस्म[1] वा ॥ २५ ॥

सोंठ, पीपल, चीनी, आंवला, सम्भालूके बीज, शहतके साथ चाटनेसेभी हिक्काका नाश होता है ॥ २५ ॥

कपित्थपत्राणि विमर्दितानि हिक्कासु जिघ्रेदथवाऽर्कतप्तम् ।
मृत्पिण्डमत्यन्तसुशीततोयैः सिक्तं तु ह्रीबेरकवारिणाक्तम्

हिचकीके रोगमें कैथके पत्तोंको खरल करके सूंघनेसे अथवा धूपसे तप्त मिट्टीके ढेलेको शीतल जलसे सिंचन करनेसे, अथवा छोटी इलायची और नेत्रवालाके जलसे सिंचन कर सूंघ लेवे ॥ २६ ॥

हिक्कायामतिवृद्धायां भ्रुवोर्मध्ये निषेचयेत् ।
शीतलेनाम्बुना स्नानं धूमं वा गुग्गुलोः पिबेत् ॥ २७ ॥

इति वैद्यवरश्रीकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां कासश्वासहिक्काधिकारो नाम तृतीयः पटलः ॥ ३ ॥

---

१ मयूरपिच्छभस्मेत्यर्थः ।

हिचकीके अधिक वढ जानेपर भ्रू(भौंओं) के मध्यमें सिंचन करे तथा शीतल जलसे स्नान करे अथवा गूगलके धूमको पीवे ॥ २७ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमाटीकायां कासश्वासहिक्काधिकारो नाम तृतीयः पटलः ॥३॥

अथारोचकशूलच्छर्दितृष्णाधिकारो नाम चतुर्थः पटलः।

आजं मांसरसक्षीरं गण्डीरं शोषिणां हितम्।
अश्वगन्धादिलाक्षाद्यतैलमभ्यञ्जने हितम् ॥ १ ॥

क्षयी पुरुषोंके लिये बकरीके मांसका रस दूध तथा चरबी हितकर है और मालिशके लिये अश्वगन्धातैल अथवा लाक्षादि तैल हितकारी है ॥ १ ॥

अश्वगन्धारजो लिह्याद्गुडेन हविषाऽथवा।
पयसा वा पिबेच्छस्त्रक्षतक्षीणो रसायनम् ॥ २ ॥

असगंधके चूर्णको गुडसे अथवा घीसे खाना चाहिये

अथवा शस्त्रके व्रणसे क्षत पुरुष तथा क्षयी पुरुषको असगंधका चूर्ण दूधके साथ पीनेसे रसायन होता है ॥ २ ॥

गुडेन पिप्पलीभिर्वा मरिचेनान्विता शृता ।
काकमाची भवेद्बल्या तद्रसेन हविः शृतम् ॥ ३ ॥

गुड, पीपल अथवा मरिच और मकोय इनका कषाय बलको देनेवाला है तथा इनसे पकाया घृतभी गुणकारक है॥३॥

पक्त्वा संस्कारसंभृष्टो बृहतीफलसंचयः ।
दध्नि प्रकथिते पश्चात् क्षितः पथ्योऽप्यरोचके ॥ ४ ॥

कंटकारीके फलोंको पकाकर तथा भूनकर दहीकी लस्सीमें डाल दे तो यह अरोचकमें भी पथ्य है ॥ ४ ॥

प्रसेकशमनी पथ्या भुक्तस्योपरि चर्विता ।
प्राग्भक्तं निम्बकुसुमं पटोलीं झरसीं च वा ॥ ५ ॥

भोजन करनेपर हरडका चबाना प्रसेक (मुखसे लारका गिरना) को शान्त करता है। अथवा भोजनके प्रथम नीमके फलोंका वा परवल और झरसीका खाना प्रसेकको शान्त करता है ॥ ५ ॥

द्रोणीत्वङ्नागकुसुमगुडशुण्ठ्यः क्रमाधिकाः ।
प्रसेकशूलक्रिमिमानद्यान्नश्यति तत्क्षणात् ॥ ६ ॥

केतकी, तज, नागकेसर, गुड, सोंठ क्रमसे अधिक २ लेकर प्रसेक तथा शूल और कृमिरोगसे पीडित खावे तो तत्क्षणमें यह रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ ६ ॥

प्रयान्ति तद्भक्षयतां प्रभाते कुबेरनेत्राभिनवं प्रवालम् ।
नृणां शमं छर्घरुचिप्रसेकाः ससैन्धवं नागररामठं वा ॥ ७ ॥

प्रातःकाल ऊपरके चूर्णके सेवन करनेसे कुबेरके नेत्रके समान शुद्ध नेत्र हो जाते हैं । अथवा सेन्धे नमक सहित सोंठ और हींगको सेवन करनेसे मनुष्योंके कै, अरुचि और प्रसेक-की शान्ति होती है ॥ ७ ॥

किञ्चिद्भृष्ट्वा मृत्तिकां ग्रीष्मतप्तां[2]
शीते तोये मर्दयित्वा प्रसाद्य ।
शीते क्षौद्रं तुल्यमालोड्य पीत्वा
तृष्णां छर्दिं चाशु तन्व्यकरोति ॥ ८ ॥

---

१ अयमर्धश्लोकोऽधिको दृग्गोचरी भवति केषुचिद्धस्तालिखितपुस्तकेषु । २ ' ग्रीष्मतप्तां ' इति पाठांतरम् ।

सैन्धानमक, सोंठ और हींगको कुछ भूनकर और गरमीसे तप्त मिट्टीको लेकर इन दोनोंको शीतल जलमें मर्दन कर ठण्डा होनेपर सम भाग शहत मिलाकर पीनेसे प्यास और छर्दिको शीघ्र दूर करे है ॥ ८ ॥

मुद्गविदलैर्विपक्वैः केरीक्षीरेण भक्षितैर्बहुशः ।
छर्दिर्नश्यति सहसा तयोस्तुल्याम्बुभिः पीतैः ॥ ९ ॥

मुद्गपर्णीके पत्ते पकाकर नारियलके जलके साथ खानेसे और उनके बराबर पानी भी पीनेसे शीघ्रही वमनका नाश होता है ॥ ९ ॥

एलालवंगवल्कलतमालदलजं रजो मधुविमिश्रम् ।
लीढं वमिं निहन्याद्बिल्ववरोव्योपचूर्णं वा ॥ १० ॥

इलायची, लौंग, दालचीनी, तजपत्र इनके चूर्णको शहतसे मिलाकर चाटनेसे छर्दिका नाश होता है । अथवा बिल, हरड, बहेडा, आँवला और मघा, मरिच, सोंठके चूर्णको शहतके साथ चाटनेसे भी छर्दिका नाश होता है ॥ १० ॥

---

१ नारिकेलक्षीरेणेत्यर्थः । २ " पथ्याविभीतधात्रीणां फलैः स्यात्त्रिफला समैः । फलत्रिकं च त्रिफला सा वरा च प्रकीर्तिता ॥ "

दग्ध्वा वराटिकागेहमंगाराभं तदम्भसि ।
निर्वापितं ततः पीतं तज्जलं नाशयेद्वमिम् ॥ ११ ॥

कौडीके बीचके हिस्सेको अंगारोंके सदृश जलाकर तदनंतर पानीमें डालदे फिर उस पानीके पीनेसे छर्दिका नाश होता है ॥ ११ ॥

अतीव भृष्टं लवणं तिलोत्थे प्रक्षिप्य तेनोत्थितमाशु तैलम् । आदाय लिप्त्वा हृदये तदूर्ध्वं गुञ्जादलान्यर्पय हृद्गदघ्नम् ॥ १२ ॥

अत्यन्त भर्जित नमकको तिलके तेलमें डालनेसे जो तैलके ऊपर फेन आवे उसको लेकर उससे हृदयको लेप करे और ऊपरसे रत्तियोंके पत्तोंको बांधे तो हृद्रोग नष्ट हो जाता है ॥ १२ ॥

स्तनयोरपि मूले च रुग्भवेद्यदि वेगिनी ।
निशाशम्बूकसहितचूर्णलेपो जयेद्रुजम् ॥ १३ ॥

स्तनमें और स्तनमूलमें भी यदि वेगवान् पीडा होती हो तब हलदी और छोटी सीपके चूर्णका लेप करने पर पीडा शांत हो जाती है ॥ १३ ॥

न्यग्रोधशुंगोत्पलकन्दकोलमाषैः शृतं तोयमतीव शीतम् ।
क्षौद्रान्वितं पीतमपाकरोति तृष्णां च पर्याप्तमतीव शीघ्रम् ॥

वडकी कोंपल, कमलकी जड और मापसे पका हुआ जल अत्यंत शीत करके फिर शहत मिलाकर पीनेसे शीघ्रही तृषाकी शांति होती है ॥ १४ ॥

आर्द्रपूगफलचर्वणोत्सुकं स्वेन वल्कशाकलेन चर्वयेत् ।
तन्मदं हरति तत्तथाकृतं स्वाभिमानमिव वेदविश्रुतः १५

गीली सुपारीके चबानेसे उत्कण्ठित पुरुषोंको लोध्रकी छालको चबाना चाहिये इस प्रकार करनेसे उसका मद दूर होजाता है । जैसे वेदका सुननेवाला अभिमानको छोड देता है ॥ १५ ॥

ताम्बूले सति भक्षिते भवति चेत्कासान्वितं विस्वरं
निष्ठीवेन सहैव तच्छिशिरमम्भ्वाघ्राय शीघ्रं पिबेत् ।
आहोस्विद्विवृतास्यवान् पवनमाश्वेवोद्गिरन्नासिकां
रुद्ध्वा पार्श्वगतो जनःप्रबलहृत्क्षोभं न कुर्याद्द्रुतम् ॥१६

पान खानेसे भिन्न स्वरवाली खांसी हो तो थूकके साथही शीतल पानीको सूंघकर शीघ्र पीवे । अथवा मुखको खोलकर और नासिकाको बन्द कर वायुको बाहिर निकालदे इस प्रकारसे जब करना हो तब पासमें जानेवाला पुरुष क्षोभको न करे ॥ १६ ॥

पित्तहृत्कम्पतृण्मूर्च्छाभ्रमादीन् घ्नन्ति दारुणान् ।
नालिकेराम्बुना पीताः सक्तवः समशर्कराः ॥ १७ ॥

इति वैद्यवरश्रीकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायामरोचकशूलछर्दितृष्णाधिकारो नाम चतुर्थः पटलः ॥ ४ ॥

नारियलके जलसे सत्तुओंके साथ शक्कर मिलाकर पीनेसे पित्तका तथा हृदयरोगका नाश होता है और दारुण कंप, तृषा, मूर्छा और भ्रमादिका भी नाश होता है ॥ १७ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमाटीकायामरोचकशूलछर्दितृष्णाधिकारो नाम चतुर्थः पटलः ॥ ४ ॥

अथार्शोदावर्ताधिकारो नाम पञ्चमः पटलः ।

सितासिताविश्वभवौ चूर्णौ पथ्यारजःसमौ ।
गुडावलीढौ गुदजान् हतः श्लेष्ममरुद्भवान् ॥ १ ॥

खांड, अतीस, सोंठ इनका चूर्ण हरडके चूर्णके बराबर लेकर गुडके साथ चाटनेसे श्लेष्मवातसे उत्पन्न बवासीरको नाश करते हैं ॥ १ ॥

मासमेकमनन्नाशी सूरणं भक्षयेत्सुखम् ।
तक्रानुपानमाश्वर्शोनिर्मूलोन्मूलनोत्सुकः ॥ २ ॥

अगर बवासीरका मूलसे नाश करनेकी इच्छा हो तो एक मासतक अन्नको न खाकर केवल जिमीकंदका सुखपूर्वक सेवन करे और छाछका अनुपान करे ॥ २ ॥

स्विन्नं निष्पीडितं स्नुह्याः पत्रं पायौ निधापयेत् ।
दुर्नामकृमिकण्डूतिशोफरुक्शान्तिकृत् परम् ॥ ३ ॥

थोहरके पत्तेको स्वेदित कर और उसका रस निचोडके निकालकर तब उस पत्तेको गुदामें रखनेसे बवासीर, कृमि, खुजली, अत्यन्त शोफ और पीडाको शान्त करनेके लिये उत्तम है ॥३॥

किंशुकबीजपरागैर्लशुनपुनर्भूप्रवालसंयुक्तैः ।
पोट्टलिका तिलजाक्ता स्वेदादर्शांसि नाशयति ॥ ४ ॥

ढाकके बीजके चूर्णसे मिलाकर लहसन, इट्सिट् और प्रवालकी पोटली बनाले उसे तिलके तैलमें भिगोकर गर्म २ कर लगानेसे भी बवासीरका नाश होता है ॥ ४ ॥

कालशाकमरिचाम्लसैन्धवैर्भृष्टषाष्टिकाहितोष्णभोजनम् ।
तैलयुक्तमिह कीलनाशनं रुच्यमग्निजननं सरं परम् ॥ ५ ॥

कालशाक (नरिचा), मरिच, अम्ल, (विजौरे नीबूका रस) सैन्धानमक, भूने हुए सांठी धान्यके गरम भोजनको तैलमें मि-

लाकर खानेसे बवासीरकाही नाश नहीं करता पर रुचिको बढाता तथा अग्निको दीपन करता है और दस्तावर है ॥ ५ ॥

हठस्य कैडर्यदलस्य चापि रजः सुसूक्ष्मं मधुनाऽवलीढम् । गुदाङ्कुरोन्मूलविनाशनाय पर्याप्तमित्याह भिषग्वरिष्ठः ॥६

शैवाल और कायफलके पत्तोंका चूर्ण शहतके साथ चाटनेसे बवासीरके नाश करनेके लिये उत्तम है ऐसा वैद्यवर कहते हैं ॥ ६ ॥

पथ्यारसोनयोर्भागं निष्कं द्वौ वज्रवल्लिजौ ।
ईषल्लवणतैलाक्तमेतदर्शांसि नाशयेत् ॥ ७ ॥

हरड और लहसनके चार मासे हाडजोड आठ मासे कुछ तैल और निमक मिलाकर लगानेसे बवासीरका नाश होता है ॥ ७ ॥

मयूरवल्ककिञ्जल्कवरीवासाशृतं जलम् ।
रक्तार्शसां प्रशमनं स्यात्पलाण्डुरिवाशितः ॥ ८ ॥

चिरचिटा, पठानी लोध, नागकेसर, सतावर और अडूसासे पका हुआ जल रुधिर बवासीरको शांत करता है जैसे प्याज खाया भोजनके दोषको दूर करता है ॥ ८ ॥

अभयात्रिवृत्कुलत्थैः शृतमुदकं पिप्पलीरजोयुक्तम्।
चित्रातैलविमिश्रं पीतमुदावर्तमस्यति त्रिदिनात् ॥ ९॥

इति वैद्यवरश्रीकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायामर्शो-
दावर्त्ताधिकारो नाम पञ्चमः पटलः ॥ ५ ॥

हरड निसोथ और कुलथी इनका कषाय कर और पिप्पली-का चूर्ण डालकर तथा चित्रा तैलसे मिश्रित कर पीनेसे तीन दिनमें ही उदावर्तको नाश करता है ॥ ९ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमाटीकाया-
मर्शोदावर्ताधिकारो नाम पञ्चमः पटलः ॥ ५ ॥

अथातिसारग्रहणीविषूचिकाधिकारो नाम षष्ठः पटलः।

पाठानागरदुःस्पृग्बिल्वाग्निवृषाब्दसंशृतः क्वाथः।
आमातिसारमस्येत् स्रावं सकफं सशूलं च ॥ १ ॥

पाठा (पाठन), सोंठ, यवासा, बिल, चित्रा, वासा, नागर-मोथा इनसे बनाया कषाय कफ और शूलसहित आमातिसारको दूर करता है ॥ १ ॥

पल्लवं चविकायाश्च श्वेतमूलाह्वसंभवम् ।
पल्लवं क्षीरिवृक्षस्य पिष्ट्वा तैलेन पाययेत् ॥ २ ॥

चविका, पुनर्नवा, क्षीरिवृक्षके पत्ते इनको तेलसे पीसकर पिलावे ॥ २ ॥

सर्वातिसारान् सहसा जयेदन्यैः किमौषधैः ।
तथाऽहिफेनं सक्षौद्रं तुल्यकारस्करत्वचम् ॥ ३[1] ॥

यह संपूर्ण अतिसारोंको सहसा जीत लेताहै और अन्य औषधियोंसे क्या मतलब है अथवा कुचिलाकी छाल और अफीम बराबर लेकर शहतके साथ खानेसे अतिसारकी शांति होती है ॥ ३ ॥

ऐरावतीपत्रसुशल्लकानि क्षुण्णानि निष्पीड्य रसः प्रपीतः । बलासरक्तं प्रबलातिसारं विनाशयेद्द्वित्रिदिनप्रयोगात् ॥ ४ ॥

इन्द्रवारुणी, तजपत्र, खैर इनको कूट पीसकर इनके रसको पीनेसे दो तीन दिनमें कठिनसे कठिन कफरुधिरका अतिसार शांत हो जाता है ॥ ४ ॥

---

[1] अर्धश्लोकोऽयं नोपलभ्यते केषुचिद्धस्तलिखितपुस्तकेषु।

चिञ्चाबीजत्वचं विश्वं सैन्धवं दीप्यकस्तथा ।
पिबेदामेन तक्रेण सोऽतिसारं जयेत्क्षणात्[1] ॥ ५ ॥

इमलीके बीजका छिलका, सोंठ, नमक, अजवायन इनका चूर्ण बनाकर अन्नरस तथा तक्रसे पीवे तो क्षणभरमें अतिसार शांत हो जाताहै ॥ ५ ॥

यक्षलोचनमज्जानं काञ्जिकेन पिबेत्प्रगे ।
स श्लेष्मरक्ताऽतीसारं कोष्ठशूलं जयेद्द्रुतम् ॥ ६ ॥

पाढरकी मज्जाको प्रातःकाल कांजीके साथ पीनेसे शीघ्रही कफका अतिसार रक्तातिसार और पेटकी पीडाका नाश होताहै॥६

रसो निहन्त्यतीसारमाम्रत्वक्पुटपाकजः ।
तैलेन युक्तो रक्ताढ्यं सबलासं सनिःस्रवम् ॥ ७ ॥

पुटपाककी रीतिसे पकाये हुए आमकी त्वचाका रस अतिसारका नाशक है । और तैलके साथ मिलाकर सेवन करनेसे अधिक रुधिरयुक्त श्लेष्माके अतिसारकाभी नाश होता है ॥ ७ ॥

बदरीपल्लवरसं पिबेद्रक्तातिसारवान् ।
शुण्ठीकदम्बत्वक्क्वाथं पिबेद्रात्रौ दिनत्रयम् ॥ ८ ॥

---

१ ' जयत्यलं ' इति पाठांतरम् ।

बेरके पत्तोंका रस रक्तातिसारको शांत करता है, सोंठ, कमल, तालीसपत्र इनके कषायको रात्रिके समय तीन दिनतक पीना चाहिये ॥ ८ ॥

मुस्तां संक्षुद्य शुद्धां समपयसि दृढं मर्दयित्वा
सुपूतां पक्त्वा पादावशिष्टां मृदुतरशिखिना
शीतलीकृत्य पश्चात् । लीढ्वा क्षौद्रान्वितां तां
जयति सहकफं रक्तयुक्तातिसारं विष्णोः पूजेव
सद्यः शमयति दुरितं पूर्वजन्मार्जितं तु ॥ ९ ॥

शुद्ध नागरमोथाको कूटकर तथा समभाग दूधके साथ मर्दन करके तदनंतर बहुतही नरम आंचसे पकाकर फिर चतुर्थ भाग शेषको शीतल होनेपर शहत मिलाकर चाटनेसे कफके सहित रक्तातिसारको जीतताहै; जैसे विष्णुकी पूजासे शीघ्रतापूर्वक जन्मार्जित पाप शान्त हो जाते हैं ॥ ९ ॥

जम्बूक्षीरिवृक्षारलुककुभकरञ्जपल्लवस्वरसम् ।
लकुचफलस्वरसपलं छागं पयः पलमपि प्रगे पीत्वा १०
जयति सरक्तश्लेष्मं प्रवाहणं गुदेषु जातं च ॥ ११ ॥

जामन, क्षीरवृक्ष (गूलरादि) के पत्ते, टेंटू, अर्जुन, करंजके

पत्तोंका रस बडहरके फलका ४ तोले रस तथा बकरीके दूधको भी चार तोले लेकर प्रातःकाल पीनेसे रक्तसहित श्लेष्मा-की प्रवाहिका शान्त होती है ॥ १० ॥ ११ ॥

पूर्वेद्युरानीतसुरक्षितं जलं प्रभातकाले प्रपिबेत् स-
तैलम्। चिरन्तनं द्राक् शमयेत् सुघोरं प्रवाहणं
रक्तकफान्वितं तु ॥ १२ ॥

पहले दिनके सुरक्षित जलको तैल मिलाकर प्रातःकालमें पीनेसे अत्यन्त घोर तथा देहसे उत्पन्न और रक्तकफसे युक्त प्रवाहिकाको शीघ्र शांत करता है ॥ १२ ॥

आजे पयसि पाकान्ते पथ्याचूर्णं क्षिपेत् पुनः।
दधि जातं पिबेत् प्रातस्तत्प्रवाहणपीडितः ॥ १३ ॥

बकरीके दूधके पक जानेपर फिर हरडके चूर्णको डाल-कर दही जमाले इस दहीको बिलोकर प्रातःकाल पीवे तो प्रवाहिका शांत हो जाती है ॥ १३ ॥

तथा पक्वान्नबाष्पेन स्विन्ना तेनैव भक्षिता।
सरक्तां बिम्बिसीं हन्यात् सतैला क्षुद्रदुग्धिका ॥ १४ ॥

पकाये हुए अन्नकी बाष्पसे बडहरकी दुग्धिकाको गरम

करके तैलके साथ मिलाकर खानेसे रक्तसहित प्रवाहिका रोग दूर हो जाता है ॥ १४ ॥

माणिमन्थमरिचाभयाजटा यक्षनेत्रसमभाग-
संमिताः। तक्रतैलघृतमात्रयाऽन्विता नाश-
यन्ति सहसा प्रवाहणम् ॥ १५ ॥

सेंधानमक, मिरच, हरड, जटामासी, पाढर समभाग सभी-को लेकर तक्र तैल घी इनकी मात्रासे मिलाकर पीनेसे शीघ्र प्रवाहिका रोग दूर होताहै ॥ १५ ॥

कृष्णाशुण्ठीशमीविरतरूणां पत्रकल्पितैः।
विलिप्यपूपकल्कैश्च सतैलैः शोणितं जयेत्॥ १६॥

पिप्पली, सोंठ, शमी, बिल इन वृक्षोंके पत्तोंसे बनाई हुई विलेपी और तैलसहित बनाये अपूप तथा कल्कसे शोणितको जीते १६॥

केदारसीमोद्भवमूषिकस्य मांसं गतान्त्रं पयसा
प्रपिष्य। तैलं पचेत्तद्विधिना प्रलिम्पेत् पिबे-
द्गुदभ्रंशविनाशनाय ॥ १७ ॥

शाली चांवलोंके खेतकी सीमापर पैदा हुए मूषिककी आंत-डियोंको निकालकर मांसको दूधसे पीसकर तैलकी विधिसे

तैलको पकाकर गुदभ्रंशके नाशके लिये पीवे ॥ १७ ॥

गोकर्णत्वङ्मुस्तानमस्करीधातकीकुटजासिद्धम् ।
ज्वरातिसारं जयति जलं चतुःपञ्चपैर्दिवसैः ॥ १८ ॥

असगंध, दालचीनी, नागरमोथा, वाराहकान्ता, धायके फूल और कुडा इनसे सिद्ध जल (क्वाथ) चार पांच दिनमें ज्वरातिसारको शान्त कर देता है ॥ १८ ॥

पयः प्रस्थे सम्यङ्नवमुदकमासिच्य जलदान्
शतद्वन्द्वान् क्षुण्णानपि सपदि निक्षिप्य विपचेत् ।
पयः शिष्टे त्यक्त्वा जलदशकलानि प्रतिवपे-
दुदश्वित्तज्जातं दधि जठररोगानपनयेत् ॥ १९ ॥

नागरमोथा २०० तोले कूटकर दूध तथा पानी मिलाकर एक सेरको पकावे, जब दूध शेष रहे तब नागरमोथाके टुकडोंको निकालकर लस्सीसे दही जमा दे उस दुग्धकी बनी दही जठररोगोंको दूर करती है ॥ १९ ॥

तदाथोऽस्मिन् दुःस्पृक्शृतमुदकमासिच्य शनकै-
र्मथित्वा तत्स्नेहं मथितमपि पथ्यौषधयुतम् ।
सदा पाने चान्ने करचरणयोर्योजितमिद-
मतीसारं हन्यादपि बहुविधाकारमचिरात् ॥ २० ॥

इसके बाद उस ऊपरकी विधिसे बनी दहीको यवासाके शृत शीत जलसे शनैः २ मथन करे तब उसके माखनमें हरड मिलाकर पीवे तथा खानेके काममें लाना चाहिये, अथवा हाथ और पैरोंपर मलनेसे बहुत विकारोंसे युक्त अतिसारको शीघ्र दूर करता है ॥ २० ॥

तक्रद्रोणे सशुक्ते लवणदशपलैर्विश्वपथ्यासमांशै-
श्चत्वारिंशत्प्रकुंचं घृततिलजपलान्यष्ट संयोज्य
पश्चात्। पक्त्वा पाकेऽष्टचूर्णात्त्रिपलमपि समायो-
ज्य धान्ये स्थितं तत् खादेदग्नेः प्रदीप्तिं जनयति
जयति प्लीहगुल्मोदरादीन् ॥ २१ ॥

सिरका सहित द्रोण भर तक्रमें १० पल (४० तोले) लवण सोंठ और हरडका समभाग ४० पल (१६० तोले) घी, बत्तीस तोले तिलतैल मिलाकर पकावे, पकनेपर अष्टचूर्ण (मघा, मरिच, सोंठ, नमक, अजवायन, दोनों जीरे और हींग इन सबके समभागको अष्ट चूर्ण कहतेहैं) के तीन पल (बारह तोले) मिलाकर धान्यके स्थानमें रख दे तदनंतर इसको खावे

---

१ " ऊषणत्रयसिंधूत्थैः साजमोदाद्विजीरकैः । हिंगुतुल्यैरेभिराहुरष्टचूर्णं मनीषिणः ॥ "

तो अग्नि दीप्त होती है और तिल्ली वायगोला तथा उदर-रोगोंको जीतता है ॥ २१ ॥

पुराणशाल्यभावे तु शालीन् संतार्चिषा सह।
पक्वेदोषधिभिर्वाऽन्यैर्लघिमानं भजन्ति ते ॥ २२ ॥

पुराने साँठीके चांवलोंके अभावमें तो चित्रकके साथ अथवा अन्य औषधियोंके साथ पकानेसे नये शाली धान्य लघु होजाते हैं ॥ २२ ॥

अविरुद्धोपदंशेन पक्वमन्नेन मात्रया।
भक्षितं मरिचं चूर्णं भृष्टं दुर्जरतां जयेत् ॥ २३ ॥

प्रथम भुनी मरिचको प्रकृतिके अनुसार पके अन्नके साथ खावे तो दुर्जरताको जीते है ॥ २३ ॥

कालशाकविजयामहौषधैः
साधितं रसयुगाक्षिभागशः।
वारि वारयति शूलतृड्ज्वरान्
पेशिनीमपि विषूचिकां क्रमात् ॥२४ ॥

अगर, हलदी और सोंठ इनके क्रमसे ६-४-२ भाग

१ चित्रकेणेत्यर्थः।

देकर जलको सिद्ध करे यह क्रमसे शूल, तृषा, ज्वर और अत्यन्त बढी विषूचिकाको शान्त करता है ॥ २४ ॥

तण्डुलोदकपिष्टेन तालमूलेन लेपनम् ।
नाभौ प्रकल्पितं सद्यो जयत्येव विषूचिकाम् ॥ २५ ॥

चांवलोंके पानीसे तालमूलीको पीसकर नाभिपर लेप करनेसे विषूचिका शीघ्र शांत होती है ॥ २५ ॥

आमे विदग्धे विष्टब्धे विषूच्यां च वमेद्द्रुतम् ।
अशक्तश्चेत्पिबेत् कोष्णसलिलैः सर्पगन्धिकाम् ॥२६॥

आमाजीर्ण, विदग्धाजीर्ण, विष्टब्धाजीर्ण और विषूचिकामें शीघ्रतया वमन करावे । अगर वमन करनेको अशक्त हो तो गरमजलसे गन्धनाकुलीको पिलावे ॥ २६ ॥

मणिमन्थजीरकाजमोदमागधौषधै-
र्वर्धितैः क्रमेण तैः समं हरीतकीरजः ।
पाचनं विरेचनं प्रदीपनं प्ररोचनं
पायुकीलनाशनं हुताशनाह्वयं तु तत् ॥ २७ ॥

सेंधानमक एक भाग, जीरा दो भाग, अजवायन तीन भाग, मघा चार भाग इन सबके बराबर हरीतकीके चूर्णको मिला ले

तो यह हुताशनचूर्ण पाचक होता है, विरेचक होता है, अग्निको दीपन करता है, रुचिको वढाता है तथा ववासीरके अंकुरोंको नाश करता है ॥ २७ ॥

निष्कं पौनर्नवं पत्रं तस्यार्धं स्यात् सिकासिका (?)।
सिन्धूत्थं रक्तलशुनं शुण्ठीं हरितमञ्जरीम् ॥ २८ ॥
मरिचांश्च पृथक् पादान् चूर्णमेतत्तु मस्तुना।
पिष्ट्वा प्राग्भक्तमश्नीयादिच्छन् वह्नेर्बलं महत् ॥ २९॥

इट्सिट्के पत्ते चार मासे इससे आधा (२ मासे) सिकासिका, नमक, लाल लहसन, सोंठ, हरितमंजरी और मरिच पृथक् २ एक एक मासा लेकर इसका चूर्ण वनाकर दधिके पानीसे पीसकर अग्निकी प्रदीप्तिकी इच्छा करता हुआ भोजनसे पूर्व खावे ॥ २८ ॥ २९ ॥

श्वेतपर्णासमूलेन सविश्वेन शृतं जलम्।
अजीर्णं शमयेत्तूर्णं कर्णः कार्श्यमिवार्थिनाम् ॥ ३० ॥

सोंठके सहित श्वेत पूलासका शृत जल अजीर्णको इस प्रकार शीघ्र दूर कर देता है जैसे धनार्थी पुरुषोंकी दरिद्रताको कर्ण शीघ्र मिटा देता था ॥ ३० ॥

यक्षाक्ष्यास्तरुणाग्रकाण्डमणुशश्छित्वा जले पाचये-
त्तासां तद्विगुणे तदम्भसि गते प्रस्थेन युक्तं पटोः ।
दुग्धप्रस्थमजस्य तेन विपचेत्तस्मिन् रसोनोषणं
तैलाज्यं च पलद्वयं प्रतिवपेत्तद्दीपनं स्यात्परम् ॥ २१ ॥

यक्षाक्षी (वटवृक्ष) की नई कोंपलोंको छोटा २ काटकर इनसे दुगुने जलमें पकावे । उस जलके सूख जानेपर नमक डाले फिर बकरीका एक सेर दूध डालकर उसमें लहसन और मरिच डाले फिर आठ तोले तैल और घी डालदे यह योग अत्यन्त दीपन करता है ॥ २१ ॥

अलर्ककुसुमाग्निलशुनाग्निकासैन्धवात्
पलाष्टकमथोपणैलपुनर्नवाद्रैं पलम् ।
यक्षहृक् पशुरसनाग्निपिचुयुतं च विश्वं तथा
तैलघृतषट्पलं पयसि पाचितं मान्द्यहृत् ॥ ३२ ॥

सफेद आकका फल, लहसन, चित्रा, सेन्धा नमक यह ३२ तोले, मरिच, छोटी इलायची, इट्सिट् आठ तोले, तैलघृत २४ तोले इनको दूधमें पकाकर पीनेसे मंदाग्निका नाश होताहै॥ ३२॥

परमूरुपूगतैलपेषिता पृथगाद्यैरपि चूर्णितैः सह ।
परिलोड्य पिबेच्च मात्रया दिवसादौ प्रबलाग्निमान् भवेत् ।
किमु कुष्ठभगन्दरानिलैरपि बाधा न भवेत्सुनिश्चितम् ॥ ३३

पूर्वोक्त चूर्णको लेकर तैलसे मिलाकर प्रातःकाल इसकी मात्रा पीनेसे प्रबलाग्नि हो जाती है, कुष्ठ तथा भगन्दर और वातरोग तो निश्चयसे ही नहीं होते ॥ ३३ ॥

कालशाकविजयामहौषधैः साधितं जलमजीर्णनाशनम् ।
पुण्डरीकनयनांघ्रिपङ्कजक्षालनोदकमिवाशु किल्बिषम् ३४

कालशाक (नाडीका शाक), भांग, सोंठ इनसे सिद्ध जल अजीर्णका नाशक है । जिस तरह श्रीकृष्णजीके धोये हुए चरणोंके पानीसे पाप दूर हो जाते हैं ॥ ३४ ॥

अर्धावशिष्टं जलमाढकार्धं महौषधं केवलमेव पीतम् ।
प्रदीपयेज्जाठरपावकं द्राक् तद्दीतिकृद्भिः किमुतान्यभेषजैः॥

साठेंम १॥ सेर पानीको मिलाकर उबाले आधा पानी शेष रहनेपर उतारले, उस पानीके पीनेसेही अजीर्णकी शांति हो जाती है । फिर दीपन औषधियोंकी क्या आवश्यकता है॥ ३५॥

---

१ ऊरुपूगतैलं एरण्डतैलम् ।

पर्युषितान्नं भुक्त्वा माहिषदध्ना तु शीतलाम्बु पिबेत्।
अत्यग्निं जयति नरो लक्ष्मीरससंसिद्धमन्नं वा ॥ ३६ ॥

इति वैद्यवरश्रीकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायामग्निमा-
न्द्यग्रहणीविषूचिकाधिकारो नाम षष्ठः पटलः ॥ ६ ॥

बासे पकाये हुए अन्नको भैंसके दहीसे खाकर शीतल जल पीवे तो अत्यग्नि शांत होती है अथवा लक्ष्मीरस (तिरुताली) से सिद्ध अन्नको भैंसके दहीके साथ खाकर शीतल जलका पान करे ॥ ३६ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनी-
टीकायामाग्निमांद्यग्रहणीविषूचिकाधिकारो नाम षष्ठः पटलः ॥ ६ ॥

अथ मूत्रकृच्छ्रप्रमेहसोमरोगाधिकारो नाम सप्तमः पटलः।

चिरजलधरभाण्डोद्भूतपङ्कं गृहीत्वा
जठरवृषणनाभौ निक्षिपेन्मूत्रकृच्छ्री।
तपनकिरणतापोद्भूतमूत्रोष्णवाते-
ऽप्यतिहिमसिकतानां राशिमत्र प्रदद्यात् ॥ १ ॥

---

१ लक्ष्मीः केरलेषु 'तिरुताली' इति प्रसिद्धा।

मूलकृच्छ्रसे पीडित पुरुषको चाहिये कि पुराने अर्थात् जिनमें बहुत देर पानी रखा जाता हो ऐसे घडोंसे कीचड लेकर जठर, वृषण और नाभिपर रखे, अगर गरमीके सबबसे पैदा हुआ उष्णवात हो तो बहुत शीतल रेत जठर, वृषण और नाभिपर रखे ॥ १ ॥

यष्ट्याह्वैलोर्वारुबीजेक्षुकाण्डैः
शीतः काथो नालिकेराम्बुजन्मा ।
पैत्तं कृच्छ्रं दाहतृष्णोष्णवातं
रक्तस्रावं मूत्रसादं हिनस्ति ॥ २ ॥

मुलहठी, छोटी इलायची, ककडीके बीज, काकोली इनसे सिद्ध कषायके शीत होनेपर नारियलके जलसे मिलाकर पीनेसे गरमीके मूत्रकृच्छ्र तथा दाह, तृष्णा, उष्णवात, रक्तस्राव और मूत्रसादकी शांति होती है ॥ २ ॥

स्थलशृङ्गाटफलैर्वा कल्कः केरीफलाम्बुना पीतः ।
कृच्छ्रं मूत्रस्य जयेत्क्लेशमिवेशो नमस्कारः ॥ ३ ॥

छोटे गोखरूके कल्कको भी नारियलके जलके साथ पीनेसे मूत्रकृच्छ्रका क्लेश शान्त हो जाता है जैसे ईश्वरको नमस्कार करनेसे क्लेश दूर होता है ॥ ३ ॥

मूत्रकृच्छ्रं जयेत् पीता क्षीरेण शिखरीशिफा ।
अजाक्षीरेण संपेष्य पीता नीलीजटा तथा ॥ ४ ॥

अपामार्गकी जडको दूधके साथ पीनेसे तथा नीलिकाकी जडको बकरीके दूधमें पीसकर पीनेसे भी मूत्रकृच्छ्रकी शांति होती है ॥ ४ ॥

केतकीस्वरसे सिद्धं तत्प्ररोहाग्रकल्कितम् ।
सर्पिः पीतं दिनस्यादौ मूत्रकृच्छ्रं जयेद्द्रुतम् ॥ ५ ॥

केतकीके बीजोंके अगले भागका कल्क कर और इसीके स्वरसमें सिद्ध घी प्रातःकाल पीनेसे शीघ्र मूत्रकृच्छ्रको जीतता है ॥ ५ ॥

जलेन नालिकेरस्य पिबेत् प्रातः प्रसारणीम् ।
मूत्रकृच्छ्रविनाशाय शर्करापातनाय च ॥ ६ ॥

प्रातःकाल पसरनको नारियलके जलके साथ मूत्रकृच्छ्रके रोगके नाशके लिये और शर्करापातनके लिये पीवे ॥ ६ ॥

प्रभाते पयसा पीतं क्षुद्रपप्फणपल्लवम् ।
मूत्रकृच्छ्रं जयेद्द्रुतं पापं भारतकीर्तनम् ॥ ७ ॥

---

१ 'पप्फणः' केरलदेशे 'पावुट्टः' इति प्रसिद्ध औषधिविशेषः ।

क्षुद्रपप्फण (केरलदेशमें इसे पावुट्ट कहते हैं) के पत्तोंको प्रातःकाल दूधके साथ पीनेसे मूत्रकृच्छ्रका नाश होता है। जैसे भारतके कीर्तनसे पापका नाश होता है ॥ ७ ॥

पुष्यदलस्य स्वरसः सशर्करः प्रातरेव परिपीतः ।
कृच्छ्रं मूत्रस्य जयेत्स्रावमसह्यं च सहसैव ॥ ८ ॥

शर्करा मिलाकर पेठेके रसको प्रातःकाल पीवे तो कष्टसाध्य मूत्रकृच्छ्र भी नाशको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

क्षुद्रकरवन्द (मर्द) मूलं पयसा पीतं प्रभातकालेषु ।
निरुणद्धि मूत्रकृच्छ्रं संतमसं भानुबिम्बमिव ॥ ९ ॥

क्षुद्र करौंदकी जडको प्रातःकाल दूधके साथ पीनेसे मूत्रकृच्छ्र दूर होता है जैसे सूर्यके निकलनेसे अन्धेरा दूर हो जाता है ॥ ९ ॥

ज्वरेषु मूत्रकृच्छ्रं चेत् कुमारीस्वरसं पिबेत् ।
कनीयः पञ्चमूलं वा गुह्यमेतच्चिकित्सितम् ॥ १० ॥

अगर मूत्रकृच्छ्रमें ज्वरभी हो तब घीकुआरके रसको पान करो अथवा छोटे पंचमूल (शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती

१ पुष्यदलस्य कूष्माण्डदलस्य । २ शालिपर्णी पृश्निपर्णी बृहती कण्टकारिका । गोक्षुरः पञ्चभिश्चैतैः पञ्चमूलमिदं लघु ॥

(बडी कंटकारी), छोटी कंटकारी और गोखरू) का कषाय पिओ यह गुप्त चिकित्सा कही है ॥ १० ॥

क्वाथो वरुणमूलस्य तत्कल्केन समन्वितः ।
पीतो निपातयेत्सद्यः शर्करामश्मरीमपि ॥ ११ ॥

वरनाकी जडका कषाय वरनाके कल्कके साथ पीनेसे शर्करा और पथरी शीघ्रही दूर होती है ॥ ११ ॥

यूथीमूलकुलत्थाभ्यां शृतः क्वाथो जयत्यलम् ।
शर्करां मूत्रकृच्छ्रं च गुह्यमेतच्चिकित्सितम् ॥ १२ ॥

यूथिका (स्वर्णजूही) का मूल और कुलथी इनसे सिद्ध कषाय शर्करा और मूत्रकृच्छ्रको हटा देता है यह गुप्त चिकित्सा है ॥ १२ ॥

नाभेरधस्ताद्धान्याम्लसेको जयति निश्चितम् ।
मूत्रकृच्छ्रं शरीरेषु सेकस्तेनाङ्गदाहहा ॥ १३ ॥

धान्याम्लका सेक नाभिके नीचे करनेसे मूत्रकृच्छ्र निश्चयही शान्त हो जाता है, अंगदाहकी शांतिके लिये शरीरमें सिंचन करना चाहिये ॥ १३ ॥

शय्यामूत्रचिकित्सा।

चम्पकशिफाकषायः पीतो निरुणद्धि मूत्रमवशगतम्।
नीचतलपतितमम्भश्चतुरजनोत्पादितो यथा सेतुः १४

जिन बालकोंका मूत्र वशमें नहीं रहता, अर्थात् सोये हुए शय्यापर मूत्र हो जाता है। वह चम्बेलीकी जडका कषाय पीवे इससे अवशगत मूत्र दूर होगा जैसे नीचेको बहता हुआ जल चतुर जनोंसे निर्मित सेतुसे रुक जाता है ॥ १४ ॥

प्रातरेव रजनी सुभक्षिता मेहविंशतिविनाशिनी ध्रुवम्।
आकुलीमुकुलपादसंयुता किं पुनर्मधुमती सुचूर्णिता १५

आकुली (आवीर केरलभाषामें) के पुष्पोंका चौथा भाग और हलदीको मिलाकर प्रातःही खा लिया जावे तो २० प्रकारके प्रमेहोंका नाश होजाता है अगर उसमें मधुमती (गाम्भारी) का चूर्ण मिलाकर खाले तो फिर कहनाही क्या है अवश्यही प्रमेहका नाश हो जाता है ॥ १५ ॥

अश्वत्थबीजं हरिणस्य शृङ्गं तक्रेण पीतं मधुना सहैव।
प्रमेहजातं सकलं निहन्ति दशाननं दाशरथिर्यथैव १६

---

१ आकुलीः केरलभाषायां 'आवीरं' इति प्रसिद्धा वनस्पतिः।

पीपल और हरिणके सींगकी भस्म इन दोनोंको तक्र और शहतके साथ मिलाकर पीनेसे प्रमेहरोगका इस तरहसे नाश हो जाता है जैसे श्रीरामचंद्रजीने रावणका नाश किया था॥१६॥

पुंष्पबोधिजलवैरिशाकिनीनग्नजिज्ज्वलितबीजमम्बुदम्।
भूसरीसृपयुतं सुचूर्णितं मेहविंशतिहरं ह्युदश्विता॥१७॥

आक, ह्रीबेर, वेरि (केरलभाषामें एकनायक कहते हैं), शाकिनी (केरलभाषामें चीर कहते हैं) और नग्नजित् (पाषाणभेद), नागरमोथा भूमिलतासे युक्त कर इस चूर्णको तक्रके साथ सेवन करे तो बीस प्रकारके प्रमेह दूर होते हैं॥१७॥

कृष्णारिमेदपूलास (?) जम्बूदुम्बरकिंशुकम्।
धातकीलोध्रविदुलमेषशृङ्ग्यब्धिकोठकाः॥१८॥
आकुल्यश्चाङ्घ्रिपङ्कानि पाठा रात्रिश्च चूर्णितम्।
मधुना मात्रया लीढं प्रमेहान्नाशयेद्द्रुतम्॥१९॥

पिप्पली, अरिमेद, पूलास, जामन, गूलर, पलाश, धायके

---

१ पुष्पबोधिः अर्कः, जलं ह्रीबेरं, वैरि 'एकनायकं' इति केरलेषु प्रसिद्धं, शाकिनी 'चीर इति केरलेषु, नग्नजित् निघण्टुषु मृग्या।
२ अब्धिकोठकः 'समुद्रफेन' इति प्रसिद्धः।

फूल, लोध, वेंत, मेढासिंगी, समुद्रफेन, आवीर, सफेद विष्णु-क्रान्ता, कमल, पाढा, हलदी इनका चूर्ण शहतके साथ चाट-कर प्रमेहोंको नष्ट करता है ॥ १८ ॥ १९ ॥

ग्राहान् गजेन्द्रो विष्णोर्वै प्रसादेन यथा तथा।
तद्वत् क्षौद्रान्विता दार्वी प्रा (पी) तश्चामलकीरसः २०

विष्णुके प्रसादसे जिस तरह हाथी मगरमच्छसे छूट गया था उसी तरह दारुहरिद्रा और आंवलोंका रस शहतके साथ मिलाकर प्रातःकाल पीनेसे प्रमेह दूर हो जाते हैं ॥ २० ॥

सागराङ्कोलपूलासवेणुपत्रशृतं जलम्।
रात्रौ पिबेत् प्रमेहाणां प्रणाशायात्मवान् नरः ॥२१॥

सागरा (छोटी इलायची), अंकोठ, पूलास, वंशपत्र इनसे पानी पकाकर प्रमेहके नाशके लिये रात्रिमें पीना चाहिये ॥२१॥

आकुलीनलदकिक्किस (?) बीजोद्भूतचूर्णमथ तक्र-मधुभ्याम्। पीतमाशु मधुमेहानिहन्तृ किं पुनः कफसमुद्भवमेहान् ॥ २२ ॥

---

१ सागरा 'समुद्रप्पच्चा' इति केरलेषु प्रसिद्धा।

आवीर, कमल, किङ्किसके बीजका चूर्ण तक्र और शहत मिलाकर पीनेसे मधुमेहका नाश होता है। अगर उष्णसे उत्पन्न प्रमेह हो तो उसे शीघ्रही दूर कर देता है॥ २२ ॥

निशाद्वयारग्वधकिंशुकैश्च कैडर्यजम्बूकतकारिमेदैः। वराब्धिकोठैः शृतमम्बु शीतं क्षौद्रान्वितं मेहगणं निहन्यात् ॥ २३ ॥

दोनों हलदी, अमलतास, पलाश, कायफल, जामन, निर्मली, दुर्गंध खदिर, हरड, बहेडा, आंवला, समुद्रफेन इनसे सिद्ध जलमें शहत मिलाकर पीनेसे सम्पूर्ण प्रमेहोंका नाश होता है॥ २३ ॥

नन्द्यावर्तदलैः पिष्टैरीषत्तण्डुलसंयुतैः।
तैले विपाचितोऽपूपो मेहविंशतिनाशनः॥ २४ ॥

तगरके पत्तोंको और कुछ चांवलोंको पीसकर तैलमें पूडा पका लेवे यह २० प्रकारके प्रमेहोंको शान्त करता है ॥२४॥

उदुम्बरक्षीरसुपिष्टचिञ्चाविनिर्मितो निष्कसमानपिंडः।
सशुक्रगुञ्जामधुतक्रपीतः प्रमेहमातङ्गविनाशसिंहः २५

गूलरके दूधके साथ इमलीके बीजको पीसकर चार

मासेका पिण्ड बना लेवे, सफेद रत्ती सहत और तक्र मिलाकर पीनेसे यह योग हाथीके समान प्रमेहरोगको नाश करनेमें सिंहके समान है ॥ २५ ॥

यस्य यस्य प्रमेहस्य शमनं प्राशयेद्भिषक् ।
तस्य तस्य जलात्कल्कस्तं तं मेहं निरस्यति ॥२६॥

जिस २ प्रमेहकी शांतिके लिये वैद्य औषधी देवे उस २ औषधिका कल्क कर सेवन करनेसे उस २ प्रमेहको शान्त करता है ॥ २६ ॥

कमलरजश्चिञ्चाफलवल्कमेहार्यम्भोधिबीजानाम् ।
द्विगुणयथोत्तरभानं चूर्णं मेहापहं समधु ॥ २७ ॥

कमलचूर्ण, इमलीके बीजका छिलका उत्तरोत्तर द्विगुण लेकर चूर्ण बना लेवे, शहतके साथ खानेसे प्रमेह दूर होता है ॥ २७ ॥

अष्टाभिर्वासरैर्वारिवासितैर्व्रीहिभिः कृतान् ।
पृथुकान् भक्षयेत् सायं सद्यो मेहनिवृत्तये ॥ २८॥

आठ दिनतक चांवलोंको पानीमें रखकर तदनंतर सायंकालको उन चावलोंको खानेसे शीघ्र प्रमेहका नाश होता है ॥२८॥

अङ्कोलाम्लाश्वकर्णामलकमुनितरुक्षीरिवृक्षाप्रियङ्गु-
जम्बूकालारिमेदृत्वचलुलितजले साधितं तैलमेतत् ।
तद्गुञ्जाबिल्वमुञ्जातकरजानियुक्कल्कितं मेहजालं
हन्याद्गङ्गाधरांघ्रिस्मरणमिव महापातकं सद्य एव २९

अंकोठ, अम्ल, हयकर्णी, आमला, अगस्तिवृक्ष, गूलर, प्रियंगु, जामन, बहेडा, दुर्गन्धित खदिर, दालचीनी इन सबको पानीमें मिलाकर इनसे तिलतैल, धूंवची, बेल, मुंजातक, हलदी इनका कल्क करे, इसके सेवन करनेसे प्रमेहका नाश होता है जिस तरह शिवपादोंके स्मरणसे ही महापातकका नाश होता है ॥ २९ ॥

सुपक्वकृष्णकदलीफलं भक्षयतां नृणाम् ।
न भवेत्सोमरोगश्च मूत्रकृच्छ्रं च पित्तजम् ॥ ३० ॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायां मूत्रकृच्छ्र-
प्रमेहसोमरोगाधिकारो नाम सप्तमः पटलः ॥ ७ ॥

उत्तम प्रकारसे पके हुए काले केलेके फलको खानेसे मनुष्योंको सोमरोग और पित्तज मूत्रकृच्छ्र नहीं होता ॥ ३० ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुख-
बोधिनीटीकायां सप्तमो पटलः समाप्तः ॥७॥

अथ विद्रधिशूलाधिकारो नामाष्टमःपटलः।

करञ्जबीजविश्वोग्राः करञ्जक्वाथपेषिताः।
पीताः प्रभाते निःशेषं घ्नन्त्याभ्यन्तरविद्रधिम् ॥ १ ॥

करंजुआके बीज, सोंठ, वच इनको लेकर करंजुआके क्वाथसे मर्दन कर प्रातःकाल पीनेसे सम्पूर्ण तथा अभ्यन्तर विद्रधिका नाश हो जाता है ॥ १ ॥

करञ्जास्थीनि संपेष्य वितुषीकृत्य चूर्णयेत्।
स्नुग्दलस्वरसेनैव मृदित्वा रविसन्निधौ ॥ २ ॥
तैलं गृहीत्वा तत्तैलं बाह्यान्तरुपयोजयेत्।
अन्तर्विद्रधिमाश्वेव नाशयेद्बाह्यजं तथा ॥ ३ ॥

करंजके बीजोंको पीसकर तथा छिलका निकालकर चूर्ण करे और थोरके रससे ही धूपमें बैठकर मर्दन करे इस तरहसे जो तैल निकले उसे बाहिर और अन्दरकी विद्रधिके नाशके लिये उपयोगमें लावे ॥ २ ॥ ३ ॥

आरग्वा श्रवसि रन्ध्रमाचरेदन्यपार्श्वमवलोक्य

बुद्धिमान् । अन्त्रवृद्धिशमनाय किंशुकत्वक्कषाय-
मपि पाययेच्छिशुम् ॥ ४ ॥

अंत्रवृद्धिके नाशके लिये दूसरी ओरके कानमें आरिसे छिद्र करे और बच्चोंको पलाशकी छालका कषायभी पिलावे ॥ ४ ॥

सैन्धवेन्द्रलतापत्रं यक्षदृग्बीजपप्फणम् ।
तक्रेण पीतं सहसा वृद्धिं शूलं च नाशयेत् ॥ ५ ॥

सेंधानमक, इन्द्रजौके पत्ते, पाढरके बीज, पप्फण इनके चूर्णको तक्रके साथ पीनेसे शीघ्रही वृद्धि और शूलका नाश होता है ॥ ५ ॥

ऊषणेन्द्रलताशुण्ठीरसोनैरण्डजं तथा ।
तुङ्गतैलविलिप्तेन रविपत्रेण बन्धनम् ॥ ६ ॥

मरिच, इंद्रजौ, सोंठ, लहसन, एरण्डका चूर्ण पीनेसे अथवा नारियलके तेलसे लिप्त आकके पत्तोंके बांधनेसेभी अंत्रवृद्धिका शल दूर होता है ॥ ६ ॥

अन्त्रवृद्धिजनितं विनाशयेच्छूलमिन्द्रयवपत्रजो
रसः । तैलमिन्दुसहितं यथा तथा काममीशनय-
नाशुशुक्षणिः ॥ ७ ॥

इन्द्रजौके पत्तोंका रस इन्द्रजौके तैलके साथ मिलाकर पीनेसे अंत्रवृद्धिके शूलको दूर करता है । जैसे महादेवकी नेत्रज्योतिसे कामका नाश हो जाता है ॥ ७ ॥

पीतबर्बरानिर्यासः पीतो वृद्धिं विनाशयेत् ।
वृद्धिनं पीतदारूणां कल्कं मूत्रेण पाययेत् ॥ ८ ॥

पीली तुलसीका रस पीनेसे वृद्धिरोगका नाश होता है । दारुहल्दीके कल्कको गोमूत्रके साथ पीनेसे वृद्धिरोगकी शांति होती है ॥ ८ ॥

क्षुद्रकरञ्जवरुणानलसुवर्णं
दुग्धसहितं पिबति यो जयति शूलम् ।
अन्त्रजनितं लशुननागरकुबेरा-
क्षीन्द्रलतिकाशृतजलं च निशि पीतम् ॥ ९ ॥

छोटा करौंदा, वरना, चित्रक, सुवर्णमाक्षिक इनके चूर्णको दूधके साथ पीनेसे शूलकी शांति होती है । लहसन, सोंठ, पाठर, इन्द्रजौ इनसे सिद्ध जलको रातके समय पीनेसे अंत्रवृद्धिका नाश होता है ॥ ९ ॥

वर्षाभूकणमूलवह्निचविकाव्योषोत्तमानां रजः
प्रत्येकं कुडवं भवेदथ पटोः स्यात्कुण्डलीपल्लवात् ।

प्रातश्छागजलान्वितं च सहितं पक्वं पुनस्तत्पयः
कंसाभ्यां च समस्तगुल्महरणं स्यादब्धिहिंग्वान्वितम् १० ॥

इट्सिट्, पिप्पलामूल, चित्रा, चव्य, मघा, मरिच, सोंठ, दुद्धी, पटोलपत्र, गिलोयके पत्र, प्रत्येक एक २ छटांक लेकर दो कंसभर (५१२ तोले) बकरीका दूध जल मिलाकर पकालेवे तदनंतर समुद्रझाग और हींग मिलाकर पीनेसे सम्पूर्ण गुल्मरोगका नाश होता है ॥ १० ॥

सैन्धवामलकरजोनवनीतगुटीर्जयेत् ।
पित्तगुल्मविकाराणां दोषाणां संहतिं भृशम् ॥ ११ ॥

सेंधानमक, आंवलेका चूर्ण मक्खनके साथ गोली बनाकर खानेसे पैत्तिक गुल्मकी शांति होती है ॥ ११ ॥

पिण्याकसैन्धवपुनर्नवचूर्णभास्व-
त्साराजमूत्रपयसां समभागभाजाम् ।
हिंगूषणाज्यसहिता गुटिकाऽग्नितप्ता
गुल्मोदराग्निसदनारुचिशूलहन्त्री ॥ १२ ॥

तिलका कल्क, सेंधानमक, इट्सिट्का चूर्ण, ताम्र सब समभाग लेकर बकरीके दूधके साथ हींग और काली मिरच

मिलाकर गोली बनावे यह गोली वायगोला, उदररोग, अग्नि-मांद्य, अरुचि और शूलको नाश करे है ॥ १२ ॥

गन्धकटंकणतुत्थैस्त्र्यूपणकान्तयुतैः कृतचूर्णम् ।
पाचनदीपनरोचनमेतद्गुल्मविकारमपहरति सद्यः ॥१३

सुहागा, गन्धक, नीलाथोथा, मघा, मरिच, सोंठ, लोह-भस्म इनसे बनाया चूर्ण पाचक तथा दीपक और रुचिकर होता है इसके अतिरिक्त गुल्मरोगको शीघ्र दूर करता है॥१३॥

षष्टिकं छागमूत्रेण द्विगुणेन पचेत्ततः ।
गृहीतान् तण्डुलाञ्जग्ध्वा गुल्मी छागपयः पिबेत्॥१४

सांठीके चांवलोंको दुगुने बकरीके दूधसे पकाकर और चांवलोंके अच्छी तरह पकजानेपर गुल्मका रोगी बकरीके दूधको पीवे ॥ १४ ॥

वैश्वानरं तिलजगोघृतदुग्धभक्ता-
न्यस्मिन् पचेन्मृगदृशां करलालिताङ्गम् ।
तद्देशसंभवमतीव च नीलधूपं
गोसर्पिषा सह पिबेत्कफवातगुल्मी ॥ १५ ॥

सोंठ, तिलतैल, गौका घी, दूध इनसे भक्तको नरम २

आंचसे पकावे जब नीला धूआं निकले तब गौके दूधके साथ कफवातके गुल्मसे पीडित पीले ॥ १५ ॥

यक्षद्विश्वलशुनैर्वेदद्व्यृतुभागिकैः ।
क्राथो गुल्मोदरानाहशूलोदावर्तवृद्धिहा ॥ १६ ॥

पाढर, सोंठ, लहसन इनके क्रमसे ४ । २ । ६ हिस्से लेकर क्राथ करे, गुल्म, उदररोग, आनाह, उदावर्त और वृद्धिकी शांतिके लिये पीवे ॥ १६ ॥

गुल्मशमनाय न स्याद्भेषजमत्र रससलिलाद्दते सहसा।
वृक्षाम्लस्य स्वरसः सैन्धवयुक्तस्तथैव नियतं स्यात्१७॥

गुल्मकी शांतिके लिये सुहागेके पानीके सिवाय और औषधि शीघ्र फलदायक नहीं है। वैसे अम्लवेंतके रसको सेन्धानमक मिलाकर नित्य पीवे तो शांति हो जाती है ॥ १७ ॥

सैन्धवपादेन युतं नागरचूर्णं सहौदनं घृतं चापि ।
भुञ्जानः पञ्चदिनं प्रहरति गुल्मं क्षणेनैव ॥ १८ ॥

सोंठके चूर्णसे चौथा भाग सेन्धानमक मिलाकर तथा घृतके सहित चांवलोंको ५ दिन खावे तो क्षणमेंही गुल्मका नाश होता है ॥ १८ ॥

कालशाकलवणौषधान्वितं भक्तपक्वमथ सर्पिषाऽ-
न्वितम् । मूलमस्यति पुनर्नवोद्भवं गुल्मतोदमचि-
रेण निश्चितम् ॥ १९ ॥

कालशाक, लवण तथा गुल्मनाशक औषधियोंसे युक्त पका हुआ भक्त और इट्सिट्की जडको घीके साथ खानेमे वायगोला और सूचीकी तरह पीडा शीघ्र ही दूर होती है॥१९॥

सैन्धवं स्नुहिमध्यस्थं दग्धमङ्गारवह्निना ।
सलिलेन कवोष्णेन पिबेच्छूलनिपीडितः ॥ २० ॥

थोरके बीचमें सेन्धानमकको रखकर अंगारोंपर दग्ध करे और कुछ गरम पानीके साथ शूलकी शांतिके लिये पीवे ॥२०॥

नागरशोभाञ्जनयोः क्वाथः शूलं विनाशयेत्त्रिदिनात् ।
मुनितरुवल्कक्वाथस्तद्वत् पटुरामठप्रतीवापः ॥ २१ ॥

सोंठ और सुहांजनेका कषाय तीन दिनमें शूलका नाश करता है, अगस्तिवृक्षके छिलकेका कषाय नमक और हींग डालकर पीवे तो शूलकी शांति होती है ॥ २१ ॥

केवलानिलसमुत्थे शूले महति प्रलेपयेन्मतिमान् ।
तुङ्गद्रुमतरुणजलै रसोनकल्कं वयो बलं वीक्ष्य॥२२॥

शूलं तदाशु शमयेद्विण्मूत्रे च्यावयेन्नियतम् ।
स्तन्यनिघृष्टं मरिचं नासि निहितं नाशयेच्छूलम् ॥
गुडमरिचविहितकल्कः कोष्णजलैः पीत आशु
नाशयति ॥ २३ ॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायां विद्रधि-
गुल्मशूलाधिकारो नामाष्टमः पटलः ॥ ८ ॥

केवल वायुसे पैदा हुए शूलमें नारियलके जलसे रसोन-कल्कको पण्डित पुरुष आयु और बल देखकर प्रलेप करे तो शूल शीघ्र शांत होता है और विष्ठा तथा मूत्र आ जाता है। स्त्रीके दूधके साथ मरिचको पीसकर नस्य लेनेसे शूल अवश्य ही शांत होजाता है। गुड मरिच इनके कल्कको कुछ गरम पानीसे पीनेसे शूल शीघ्रही दूर होता है ॥ २२ ॥ २३ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमा-
सुखबोधिनीटीकायामष्टमः पटलः ॥ ८ ॥

अथोदरपाण्डुचिकित्साधिकारो नाम नवमः पटलः ।



दुग्धे स्नुक्क्षीरपक्वे दधिजनितमहोरात्रतस्तन्माथित्वा
सारं हृत्वा पिबेत्तन्मथितमुदररोगी विरेकाय मर्त्यः ।
तत्सर्पिर्दुग्धमूत्रच्छगणरसदधिस्वर्णदुग्धैश्च युक्तं
पक्त्वा पाके सुजाते गलितमुदरशांत्यै पिबेदल्पमल्पम् १

थोरके दूधसे पक्व दूधको जमाकर दिन रात दही बन जानेपर मन्थन करे तदनंतर सारको छोडकर विरेचनके लिये पीवे । बकरीके दूध मूत्र दहीका पानी थोरका दूध इनसे सिद्ध घीको उदररोगकी शांतिके निमित्त थोडा २ पीवे ॥ १ ॥

पीत्वा धारोष्णं प्रातरेवाग्निमथ्ये
क्षीरं तोयाढ्यं साधु पक्त्वा सुखोष्णम् ।
सायं पथ्यायाः क्वाथपः पक्षमित्थं
कृत्वा रिक्तश्चोदरी स्याच्छतायुः ॥ २ ॥

अग्निसे तप्त दूधको प्रातःकालही पीवे तथा अधिक पानीवाले दूधको अच्छी तरह पकाकर शीत गरमको पीवे । इस तरहसे

एक पक्षतक करनेसे उदररोगसे मुक्त हो जाता है और सौ बरसतक उमर हो जाती है ॥ २ ॥

भेकराजरसैः सुभावितलोहयुक्तवरारज-
स्तुल्यभागवटच्छदोद्भवभस्म चाप्यभया पुनः ।
षट्पदोत्थरसेन पेषितमक्षमात्रविनिर्मितं ।
पिंडमस्यति पांडुरोगमुदश्विता सह सेवितम् ॥ ३ ॥

लोहभस्म और त्रिफला तथा वडकी डाढीकी भस्म और हरडका चूर्ण यह बराबर मिलाकर मण्डूकपर्णीके रससे भावना देकर तदनंतर भांगरेके रससे मर्दन करके तोलेभरकी गोली बनावे । इसे लस्सीके साथ प्रयोग करनेसे पाण्डुरोग दूर होता है ॥ ३ ॥

नवायसप्रतीवापं लिहन्मूत्रशृतं गुडम् ।
पाण्डुरोगातुरो मर्त्यः सुखी स्यान्मधुमिश्रितम् ॥ ४ ॥

लोहभस्मको गोमूत्रसे विलोडित कर गुड और शहत मिलाकर पीनेसे पाण्डुरोगका नाश होता है ॥ ४ ॥

अयोमलरजःपथ्ये गृष्टचग्रेण सुपेषिते ।
तैलयुक्ते पिबेत् प्रातः पाण्डुरोगी सुखी भवेत् ॥ ५ ॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायामुदर-
पाण्डुरोगाधिकारो नाम नवमः पटलः ॥ ९ ॥

लोहभस्म, हरीतकीचूर्ण गौके दूधके साथ पीसकर तैलके साथ खानेसे पाण्डुरोग दूर हो जाता है ॥ ५ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटीकायां नवमः पटलः ॥ ९ ॥

अथ कामलाधिकारो नाम दशमः पटलः।

शंखं विघृष्य सहसा प्रातः पीतं च सप्ताहात्।
अपहरति कामलार्तिं बाणो रामस्य ताटकां भीमाम् १

जिस तरहसे रामके बाणने भयानकमूर्ति ताटकाका नाश किया था वैसेही शंखभस्मको पीसकर प्रातःकाल पीनेसे सात दिनमें कामलारोग नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥

मधुना निशया धात्र्या क्षीरेण वा मिश्रितः प्रगे पीतः।
स्यान्मण्डूकीस्वरसः कामलिनां हितकरो नृणाम् २ ॥

मण्डूकपर्णीके रसको शहत मिलाकर अथवा हलदी अथवा आंवलेका चूर्ण या दूधके साथ मिलाकर प्रातःकाल पीनेसे कामलारोग नष्ट होता है ॥ २ ॥

व्योषं धात्रीं रजनीं लोहं च सिताज्यमधुसमेतानि।
उपयुज्य कामलार्तः सुखी भवेद्वासरारम्भे ॥ ३ ॥

मघा, मरिच, सोंठ, आंवलेका चूर्ण, हलदी और लोह-भस्म, मिसरी, शहत और घी मिलाकर खानेसे कामलारोग शीघ्र दूर होता है ॥ ३ ॥

अञ्झटासहितस्तक्रकल्को जयति कामलाम् ।
रसो वा भृङ्गराजस्य निषिक्तो भूरि मूर्धनि ॥ ४ ॥

अञ्झटा (तुलसी) के कल्कके साथ तक्रपान करनेसे कामलाकी शांति होती है। अथवा भांगरेके रससे बहुत मूर्धाको सिंचन करनेसे भी शांति होती है ॥ ४ ॥

कामलार्तस्तु तरुणं भुञ्जीत त्रिदिनं प्रगे।
कामलायाः प्रशान्त्यर्थं वैकुण्ठं पाययेन्नरः ॥ ५ ॥

कामलासे पीडितको तीन दिनतक प्रातःकाल एरण्डको खाना चाहिये । तथा कामलाके नाशके लिये तुलसीदलको पीना चाहिये ॥ ५ ॥

किमौषधगणैः कृतैः सकलमन्त्रवादैश्च किं
चिरेण बत जीवितुं यदि महाभिलाषोऽस्ति वः।
सुवर्णवलयेन वा रजतकेन ताम्रेण वा
दहेत मणिबन्धने सपदि कामलारोगिणः ॥ ६ ॥

औषधियों तथा सम्पूर्ण मंत्रोंसे क्या प्रयोजन है, अगर देर-तक तुम्हारी जीनेकी इच्छा हो तो गरम किये सुवर्णके कंक-णसे अथवा चांदीके तथा ताम्बेके कंकणसे मणिबन्धको दहन करे ॥ ६ ॥

सुवहापत्रस्वरसः किंचित्तैलेन सह पीतः।
कामलमाशु निहन्याद्रावणमिव पुण्डरीकाक्षः ॥ ७ ॥

जिस तरहसे रामचंद्रजीने रावणका नाश किया था उसी तरह चम्बेलीके पत्तोंका रस तैलके साथ पीनेसे कामलाका नाश होता है ॥ ७ ॥

श्रेष्ठा[1]गुडूचीपिचुमन्ददार्वीत्वगज्झटाभिर्विधिना कृतं यत्। पथ्याकषाये घृतमाशु हन्यात्तत्कामलां का-लनिशासमानाम् ॥ ८ ॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायां कामलाधिकारो नाम दशमः पटलः।

त्रिफला, गिलोय, नीम, दारुहलदी, दालचीनी, तुलसी इनका

---

१ 'श्रेष्ठा' त्रिफला।

कल्क और हरडके कषायसे कालनिशाकी तरह कामलाका नाश होता है ॥ ८ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधनीटीकायां दशमः पटलः ॥ १० ॥

अथ शोफविसर्पश्वित्रकुष्ठाधिकारो नामैकादशः पटलः।

पथ्यापुनर्नवनिशाकणमूलवह्नि-
विश्वाम्बुजीरकसुरद्रुममागधीनाम्।
क्वाथं पिबेच्छ्वयथुदण्डधरात्तजीवो-
प्युत्तिष्ठते शिवसमाश्रितबालतुल्यः ॥ १ ॥

हरड, इटसिट्[१], हलदी, पिप्पलामूल, चित्रा, सोंठ, मुस्ता, जीरा, देवदारु, पिप्पली इन १० औषधियोंसे बने क्वाथको पीनेसे शोफसे अत्यन्त पीडितभी शीघ्र सुखको प्राप्त होता है ॥ १ ॥

समूलतूलं संशुष्कं कार्पासं भस्मसात्कृतम्।

१ 'चित्राकद' पाठान्तरम्।

तद्भस्मद्विगुणं शालितण्डुलं पयसोदनम् ।
घृतेन सह भुञ्जीत सर्वश्वयथुनाशनम् ॥ २ ॥

मूलसहित कपासके तूलकी भस्म करके उस भस्मसे दुगुनी सांठीके चांवलोंको दूध और घीके साथ मिलाकर खानेसे सम्पूर्ण श्वयथुका नाश होता है ॥ २ ॥

परिणततुम्बीलतया विहिते क्काथे शृता विलेपी या ।
रात्रौ तया च सिद्धः क्काथश्च श्वयथुशत्रुघ्नौ ॥ ३ ॥

पकी हुई तुम्बीकी लताके बनाये हुए क्काथ या कल्कसे अथवा रात्रिको इसका क्काथ पीवे तो श्वयथुका नाश होता है ॥ ३ ॥

पुनर्नवाभयाशुण्ठीकालशाकैः समैः शृतम् ।
जलं शोफं जयेत् पीतं प्रातः सायं च मात्रया ॥ ४ ॥

इट्टसिट्, हरीतकी, सोंठ, कालशाक यह सम भाग लेकर तथा क्काथ बनाकर सायं तथा प्रातः उक्त मात्राके साथ पीनेसे शोफ दूर होता है ॥ ४ ॥

दशाङ्घ्रिकूष्माण्डलतार्द्रकाणां
चूर्णं मधौ शोफजयाय लिह्यात् ।

आदित्यरुद्रवसुभिश्च समानभागं
चूर्णात् पलालरजसो गृहधूमतश्च ॥ ५ ॥
दग्धस्य शङ्खरजसश्च विमिश्र्य चूर्णं
क्षीरेण शोफशमनाय पिबेदतन्द्रः ॥ ६ ॥

दशमूल, पेठा, अद्रक इनके चूर्णको शहतके साथ शोफकी शांतिके लिये चाटे । निकाले धान्योंके तुषका चूर्ण १२ हिस्से, घरका धूंआ ११ भाग, शंखभस्म ८ भाग इनके चूर्णको शोफकी शांतिके लिये दूधके साथ पीवे ॥ ५ ॥ ६ ॥

हरीतकीत्रिवृन्मूलकुलत्थैः साधु साधितः ।
क्वाथस्तु रुबुतैलाढ्यः शोफदाहोदरापहः ॥ ७ ॥

हरीतकी, निसोथकी जड और कुलथी इनसे सिद्ध क्वाथ एरण्डके तैलसे मिश्रित शोफ, दाह और उदरकी पीडाको दूर करता है ॥ ७ ॥

अलर्केक्षुरकार्पाससुर्वरी (?) क्षारजं जलम् ।
आपादमस्तकप्राप्तमप्याशु श्वयथुं जयेत् ॥ ८ ॥

सफेद आक, ईख, कार्पास, तुलसी, यवक्षार इनसे सिद्ध जलको पीनेसे पैरसे लेकर मस्तकपर्यंतका शोफ दूर हो जाता है ॥ ८ ॥

इक्षुरक्षारसलिले पक्कं भक्तं विनाशयेत्।
शोफं सर्वांगसंभूतं गोमूत्रेण घृतान्वितम् ॥ ९ ॥

ईख और यवक्षारके जलमें पका हुआ भक्त घीसे युक्त गोमूत्रसे सम्पूर्ण शरीरके शोफको दूर करता है ॥ ९ ॥

हरीतकीनागररात्रिसिद्धं जलं ज्वरोत्थश्वयथुं निहन्यात्। पीतं प्रभाते गुडगोक्षुराङ्घ्रिव्याघ्रीबलाविश्वशृतं पयश्च ॥ १० ॥

हरीतकी, सोंठ, हरिद्रा इनसे सिद्ध जलको ज्वरसे पैदा हुए श्वयथुकी शांतिके लिये पीवे। प्रातःकाल गुड, गोखरूका चूर्ण, कंटकारी, खरेटी, सोंठ इनसे सिद्ध जलको पीवे ॥ १० ॥

नीलीदूर्वावायसीकाकमाचीनिष्पावारव्यास्वस्तिकानां रसेषु। दूर्वासर्पिर्यैन कल्केन तेन सिद्धं तैलं सर्ववीसर्पजित्स्यात् ॥ ११ ॥

नीली, दूर्वा, काकजंघा, कैंचपैंच, तिल, लहसन इसमें सिद्ध दूर्वासर्पि तथा इसी कल्कसे सिद्ध दूर्वातैल भी विसर्पका नाशक है ॥ ११ ॥

प्रातः पयसा पीता लिप्ता च विसर्पकं जयेन्नीली।
तत्क्षीरं च तथाऽस्याच्छुम्भनिशुम्भौ यथा दुर्गा॥१२

प्रातःकाल नीलीके चूर्णको दूधके साथ पीने तथा लेप करनेसे वह दूध विसर्परोगका इस तरहसे नाश करता है जैसे दुर्गाने शुम्भ निशुम्भ राक्षसोंका नाश किया ॥ १२ ॥

कर्पूरवल्लीस्वरसे वासाचिञ्चाभवेऽपि च।
अश्वगन्धासुगन्धाह्वावायसीसर्पगन्धिका ॥ १३ ॥
नीलीभूमिकदम्बानां मूले सिद्धं तिलोद्भवम्।
कक्षाविद्रधिवीसर्पहरं स्याल्लेपनेन तत् ॥ १४ ॥

कर्पूरवल्लीके रसमें तथा वासा और इमलीके रसमें भी असगन्ध, चम्बेली, चौलाई, सर्पगन्धिका (गन्धनाकुली), नीली, कदम्ब इनके मूलसे सिद्ध तिलतैल, इसके लेपसे कक्षा-विद्रधि तथा विसर्परोगका नाश होता है ॥ १३ ॥ १४ ॥

शतधौतघृतं लिम्पेत् क्षीरिवृक्षत्वगम्बुना।
विसर्पकविनाशाय दाहतृट्शमनाय च ॥ १५ ॥

क्षीरिवृक्ष वटादिकी त्वचाके वक्कलसे सिद्ध जलसे सौ वार धोया हुआ घी विसर्पके नाशके लिये तथा दाह तृषाकी शांतिके लिये पर्याप्त है ॥ १५ ॥

तत्क्षणपतितैः करकैः सिक्ता संरक्षिता मृत्स्ना।
धान्याम्लेन विलिप्ता नाशयति विसर्पकान्कृच्छ्रान् १६

सिंचित होते हुए करेलेसे पतित मिट्टीको कांजीके साथ लेप करनेसे कृच्छ्रविसर्पकी नाशको प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

विसर्पकग्रन्थिविषादिरोगान् लेपादिना तैलघृताप-
हारात्। विनाशयेद्दुग्धयुताऽऽशु शुभ्रा दूर्वा मसू-
रानपि पित्तजातान् ॥ १७॥

तैल, घी इनसे युक्त दूर्वाके लेपसे ग्रन्थिविसर्प तथा विषादि रोग दूर होते हैं और दूर्वाको दूधके साथ प्रयोग करनेसे पैत्तिक मसूरिकाका भी नाश होता है ॥ १७ ॥

क्षीरिद्रुमाङ्कुरहिमोत्पलसेव्यकुष्ट-
गोपांगनामधुकनाभिजलैः सुसिद्धम्।
यद्वायसीरस्वरसकल्कितदूर्वया च
तैलाज्ययोर्यमकमाशु विसर्पकघ्नम् ॥ १८ ॥

क्षीरिवृक्ष (वटादि) के अंकुर तथा खस, कमल, कुठ, मुलेठी और कस्तूरी इनसे सिद्ध और जो चौलाईके रस और दूर्वाके रससे सिद्ध तैल और घी ये दोनोंही विसर्पके नाशक हैं ॥ १८

जम्बीरनीरपरिपीतगुडं नराणा-
मारम्भकालसमयेषु मसूरिकार्तिम् ।
सद्यः शमं नयति गोपयसा प्रभाते
रुद्राक्षमप्यलमतीव रहस्यमेतत् ॥ १९ ॥

मसूरिकाके आरम्भके समयमेंही बिजौरे नीम्बूके रसके साथ गुडको पीनेसे मनुष्योंका मसूरिकारोग शीघ्र नाशको प्राप्त होता है और यह तो बडे अचम्भेकी बात है कि गौके दूधके साथ रुद्राक्षको प्रातः पीनेसे भी मसूरिकाका नाश होता है ॥ १९ ॥

शिग्रुपत्ररसे सर्जरसं पिष्ट्वा मसूरिकाम् ।
उत्पन्नमात्रामालिम्पेत् सा तदैव विनश्यति ॥ २० ॥

सर्जके रस (राल) को सोहांजनेके रसमें पीसकर उत्पन्न-मात्र मसूरिकाको लेप करनेसे शांति होती है ॥ २० ॥

अश्वगन्धारसः स्वल्पपारदेन विमिश्रितः ।
लिप्तो मसूरिकार्तानां भवेद्रक्षाकरो नृणाम् ॥ २१ ॥

अश्वगन्धाके रस कुछ पारदसे मिश्रित मसूरिकाके रोगीको लेप करनेसे रक्षा होती है ॥ २१ ॥

विश्वचूर्णभसितोष्णभस्मना गात्रमाशु परिपालयेन्मुहुः ।
शीतपित्तशमनाय चन्दनं छिन्नरोहरसपेषितं तथा ॥ २२ ॥

शुण्ठीके चूर्णसे मिली हुई गरम राखसे वारंवार शीतपित्तकी शांतिके लिये लगावे अथवा गुडूचीके रससे घिसा हुआ चंदन शीतपित्तको शान्त करता है ॥ २२ ॥

तैलं दारुरजासर्जयष्टीपाठावचूर्णितम् ।
शीतपित्तेऽमृताराजीकल्कं चाभ्यंगलेपनम् ॥ २३ ॥

देवदारु, राल, मुलेठी, पाठा इनके चूर्णसे मिले हुए तेलकी मालिशसे अथवा गिलोय और राईके कल्कसे अभ्यङ्ग करनेसे भी शीतपित्तका नाश होता है ॥ २३ ॥

शरीरं बहुशो लिम्पेन्नश्येत्स्वेदमसूरिका ।
चन्दनं च तथा स्नानं शमयेन्मन्दमारुतः ॥ २४ ॥

स्वेदमसूरिका (गरमीकी मौसिममें होनेवाली पिडिका पित्त) उसके नाशके लिये खसखसका बहुतबार लेप करे, चंदनके लेपसे तथा स्नानसे भी शांति होती है ॥ २४ ॥

गुडेन राजद्रुमशोधितेन लिहन् सुसूक्ष्माणि रजांसि कुष्ठी । राजद्रुमत्वङ्मुसलीन्दुलेखापथ्यानिशानामपरेंदुतुल्यः ॥ २५ ॥

अमलतास, तालीसपत्र, मुसली, अजवायन, हरड, हलदी

इनके समान कपूर मिलाकर सबका चूर्ण करले, अमलतासके शुद्ध गुडके साथ इसको खाया करे तो कुष्ठरोग नाशको प्राप्त होता है ॥ २५ ॥

नीलीमरिच्योः स्वरसस्य कंसे पलाष्टभल्लातक-
कल्कसिद्धम् । प्रस्थं जयेत्तैलमुदग्रकुष्ठं विपा-
दिकामप्यतितोदभेदाम् ॥ २६॥

नील, मिरचका रस ८ सेर लेकर ५८ भिलावोंका कल्क बनाकर तथा १ सेर तेल डालकर पकावे इसके सेवन करनेसे कठिन कुष्ठ अतिपीडाकारक विपादिकाका नाश होता है ॥ २६ ॥

नीलीमूलत्वगासितसुमनोत्सङ्गिणी (?) मूलवल्कं
अर्कक्षीरोषणलशुननिशासिंधुदार्वीर्विचूर्ण्य ।
तैलैः सर्वैर्द्विगुणिततिलजैः क्षिप्रमार्द्रप्रयोगं
लेप्यात् कुष्ठं प्रबलमपि वा सप्तरात्रैर्निहन्यात् ॥ २७ ॥

नीलीवृक्षकी जड, तालीसपत्र, अतीस, चम्बेली, उत्सङ्गिणिकी जडका बक्कल, आकका दूध, मिरच, लहसन, हरिद्रा, लवण, दारुहरिद्रा इन सबको कूटकर चूर्ण करले इस चूर्णसे

द्विगुण तिलका तैल मिलाकर शीघ्र प्रलेप करे तो इसके प्रयोगसे प्रबल कुष्ठभी सात दिनमें नाशको प्राप्त होता है ॥२७॥

तिलभल्लातकफलपथ्याचूर्णंगुडमिश्रितं जयेत् कुष्ठम् ।
चूर्णं शशिलेखायाः सकृष्णातिलाब्दमुपयुक्तम् ॥२८॥

तिल, भिलावे, हरड इनके चूर्णको गुड मिलाकर खानेसे कुष्ठका नाश होता है। काले तिलोंके साथ बावचीका चूर्ण और नागरमोथेके चूर्णको गुडके साथ खानेसे कुष्ठका नाश होता है ॥ २८ ॥

स्नुहिजातिपूतिकैश्च शम्याकदिनेशपल्लवैर्जयति ।
उद्वर्तनमष्टादशकुष्ठान् गोमूत्रसंपिष्टैः ॥ २९ ॥

थोहर, चम्बेली, करंजुआ, अमलतास, आकके पत्ते इनको गोमूत्रसे पीसकर लेप करनेसे १८ प्रकारके कुष्ठोंकी शांति होती है ॥ २९ ॥

जलशैवालमादाय कण्डूक्लेदान्विते तनौ ।
परिपेष्य जलं सिञ्चेत्तत्तस्य परमौषधम् ॥ ३० ॥

जलमेंकी स्याल लेकर खाज और क्लेदसे युक्त शरीरपर पीसकर उसके पानीको मलनेसे शांति होती है ॥ ३० ॥

नीलीमूलत्वक्तिलकमरिचैस्त्रिद्व्येकभागिकैर्लेपात् ।
गोमूत्रेण सुपिष्टैः कण्डूयुक्तं जयेत् कुष्ठम् ॥ ३१ ॥

नीलीकी जडका वक्कल, तिल, मरिच इनको क्रमसे ३।२ और १ भाग लेकर गोमूत्रसे पीसकर खुजलीयुक्त कुष्ठपर लेप करे ॥ ३१ ॥

सर्पत्वचां समरिचां तिलतैलभृष्टां
यो लेपयेन्मुनिदिनं जलमस्पृशन् सः ।
कण्डूतिकुष्ठकिटिभान् चिररूढमूलान्
जित्वा सुखी भवति कामसमानकांतिः ॥ ३२ ॥

सर्पकी त्वचा और मिरचको तिलतैलसे भूनकर जो ७ दिनतक लेप करता है, तथा पानीका स्पर्श नहीं करता वह खुजली तथा चिरकालजनित कष्टसाध्य किटिभादि कुष्ठसे दूर होता है और मनोहर कांतियुक्त हो जाता है ॥ ३२ ॥

कृष्णारिमेदपूलासपथ्यारग्वधमेहहा ।
ऐरावतवराव्योषैस्सिद्धं कुष्ठकुलं जयेत् ॥ ३३ ॥

पिप्पली, अरिमेद, पूलास, हरड, अमलतास, हरिद्रा, बड-हर, मघा, मरिच, सोंठ, हरड, बहेडा, आंवला इनसे सिद्ध तैल सम्पूर्ण कुष्ठरोगका नाशक है ॥ ३३ ॥

वातस्य मूलीस्वरसे विपक्वं धूमालकम्पिल्लरुजानिशाभिः । सुगन्धकाश्वघ्नशिलाकरञ्जैर्धूकतैलं विनिहन्ति कुष्ठम् ॥ ३४ ॥

वातमूली (केरलभाषामें वातंकोल्ली कहते हैं) के रसमें गृहधूम, कम्पीला, कुठ, हरिद्रा, गन्धक, श्वेत करवीर, मनसिल, करंजुआ इनसे सिद्ध मौएका तैल कुष्ठको नाश करता है ॥ ३४ ॥

हठं समूलं संचूर्ण्य प्रभाते मधुना लिहेत् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं षण्मासाज्जयति ध्रुवम् ॥ ३५ ॥

मूलसहित जलकुम्भिकाका चूर्ण करके प्रातःकाल शहतके साथ चाटनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ ६ मासतक दूर हो जाते हैं ३५ ॥

प्रातरासुतमग्निसमीपे स्थापितं च वसुभागशृतं यत् ।
नाडिकाष्टसमये निशि पीतं क्वाथमुत्तममशेषगदघ्नम् ३६

आठ भाग पकाये हुए इस चूर्णको प्रातःकालके समय अग्निपर रख देवे ८ घडी रात गये इस क्वाथके पीनेसे सब प्रकारके कोढरोगोंका नाश होता है ॥ ३६ ॥

कर्पूरवल्याश्चूर्णं वा निम्बतैलेन सेवयेत् ।
विशीर्णनखमांसोऽपि पुनरेव युवा भवेत् ॥ ३७ ॥

---

१ वातमूली ' वातंकोल्ली ' इति केरलेषु प्रसिद्धा ।

कर्पूरवल्ली (बावची) के चूर्णको नीमके तैलके साथ सेवन करनेसे, गिर गये हैं नख और मांस जिसके ऐसा कुष्ठ-रोगीभी शांतिको प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥

वाणदलस्य स्वरसं लिकुचस्वरसं च तैलं च ।
संमिश्रितं प्रलेपयेद्धन्यात् कुष्ठानि दुष्टानि ॥ ३८ ॥

वाणदल (नीलपुष्प झिण्टीक्षुप) के रसको बडहरके रसको और तैलको मिलाकर लेप करनेसे दुष्ट कुष्ठका नाश होता है ॥ ३८ ॥

दशनफलमवन्तिसोमके किञ्चिदुत्क्वथितशोधिते शृतम् । तीक्ष्णकल्कसहितं विनाशयेत्तैलमर्भककपालजान् गदान् ॥ ३९ ॥

अनारको कांजीमें कुछ मिलाकर मिरचके कल्कसे सिद्ध तैल बच्चोंके शिरके रोगोंको दूर करता है ॥ ३९ ॥

आस्करकाण्डक्षारं स्वरसेनेक्ष्वाकुजेन संलिप्तम् ।
हन्यात् कपालकुष्ठं क्रौञ्चं गिरिं तारकारिरिव ॥ ४० ॥

आकका क्षार ईखके रसके साथ लेप करनेसे कपालकुष्ठका नाश होता है जैसे रामचन्द्रने क्रौंचगिरिका नाश किया था ॥ ४० ॥

मूलत्वक्पत्रपुष्पाणां कार्पासस्य रसे शृतम्।
तैलं कपालजान् कुष्ठान् जयेत्तक्राम्लसाधितम्॥४१॥

कार्पासके मूल, त्वचा, पत्र, पुष्पके रससे तथा तक्राम्लसे सिद्ध तैल शिरपर होनेवाले कुष्ठका नाश करता है॥ ४१ ॥

अर्कपत्ररसगाढमिश्रितान्नालिकेरपयसोऽर्कविमिश्रात्। तैलमुत्थितमपोहति व्रणान् राक्षसानिव मुरारिमार्गणः॥ ४२ ॥

जिस तरहसे मुरारीने राक्षसोंका नाश किया था उसी तरह आकके पत्तोंका रस तथा नारियलका जल इनसे पीडित तैल व्रणोंका नाश करता है॥ ४२ ॥

वायसजङ्घामूलं बाकुचिना नग्नजिद्दलं नक्तम्।
धान्याम्लेन सुपिष्टं त्रिदिनादुद्वर्तनेन कुष्ठघ्नम्॥ ४३ ॥

काकजंघाकी जडको नग्नजित्के पत्तोंको तथा करंजको बावची और धान्याम्लसे पीसकर तीन दिनतक उबटन करनेसे कुष्ठका नाश होता है॥ ४३ ॥

गौडीमेरण्डपत्रस्थां धान्यस्विन्नां प्रपीडयेत्।
तद्रसस्तैलसंयुक्तो लेपात् कापालकुष्ठहा॥ ४४ ॥

एरण्डपत्रमें रखी हुई गौडी सुराको धान्योंसे स्वेदित कर निचोडकर उस रसको तैलसे संयुक्त कर लेप करनेसे कपालकुष्ठका नाश होता है ॥ ४४ ॥

रक्तकरवीरमुकुलान्यादाय शतं शतेन मरिचेन।
पिष्ट्वा शृतं तिलोत्थं कुडवं पामां हरेल्लेपात् ॥ ४५ ॥

लाल करवीरके सौ फलोंको लाकर तथा १०० मरिचसे पीसकर १ छटांकभर तैलसे युक्त लेप करनेसे पामाका नाश होता है ॥ ४५ ॥

बहुशोऽर्कदुग्धभावितगोजिह्वाग्रजोन्मिश्रितं तैलम्।
भास्करतप्तं हन्यात् पाप्मानं पापसंभूतम् ॥ ४६ ॥

अनेक वार आकके दूधसे भावित गोभीके पत्ते उनसे मिश्रित तैलको सूर्यकी धूपमें तपाकर इस तैलके लेप करनेसे पामारोगका नाश होता है ॥ ४६ ॥

निम्बच्छदस्वरससाधितमर्कदुग्ध-
रक्ताश्वमारमुकुलोषणकल्कसिद्धम्।
तैलं निहन्ति सहसैव समस्तपामां
छागप्रियस्वरससाधितमेवमेव ॥ ४७ ॥

नीमके पत्तोंके रससे, आकका दूध, लाल करंजुआके फूल, मरिच इनके कल्कसे सिद्ध तैल अथवा छागप्रिय (दूब) के रससे सिद्ध तैल सम्पूर्ण पामाका नाश करता है ॥ ४७ ॥

भगवन् ! भास्करक्षीर ! पामाऽहमभिवन्दये ।
यत्र देशे भवान् भ्रातस्तद्देशं न व्रजाम्यहम् ॥ ४८ ॥

भगवन् अर्कक्षीर ! मैं पामा नमस्कार करती हूं जिस देशमें आप हैं उस देशमें मैं नहीं जाती हूं ॥ ४८ ॥

अभिनवगोघृतेन मरिचस्य रजः पिबतां
हुतवहदेशकालबलदोषमसात्म्यवताम् ।
जघनकराङ्गुलीविवरकूर्परजानुभवाः
कररुहबान्धवाः सपदि यान्ति रुजः शमनम् ॥ ४९ ॥

अग्नि, देश, काल, बलदोष इनके साथ बालोंको नूतन गोघृतसे युक्त मरिचके चूर्णको पीनेसे सम्पूर्ण शरीरमें होने-वाली रुजाकी शांति होती है ॥ ४९ ॥

तुङ्गद्रुमस्य परिपक्वफलं वितोयं
कृत्वाऽनलार्कपयसोर्द्विपिचुं पिचुं च ।
प्रक्षिप्य पूर्वमपरेण सुपेष्य तैल-
भागो गृहीत अपहन्ति समस्तपामाः ॥ ५० ॥

नारियलके पके हुए फलको जिसमें पानी न हो चित्रक २ तोले और अर्कदुग्ध १ तोला लेकर मिलाकर तथा पीस-कर तेल निकालकर उस तैलके प्रयोगसे सम्पूर्ण पामाका नाश होता है ॥ ५० ॥

महिषविषाणमषी सहतीक्ष्णा किटिभमपोहति तैल-
सुपिष्टा। करजमलोत्थमषी च तथा स्यान्महिषम-
हासुरमाशिव दुर्गा ॥ ५१ ॥

भैंसके सींगोंकी राख मिरचतैलके साथ पीसके अथवा करज (करंज) की भस्म और मरिच तैलके साथ पीसके प्रयोग करनेसे किटिभकुष्ठका नाश होता है जैसे दुर्गासे महिषा-सुरका नाश हुआ ॥ ५१ ॥

क्षारो महावृक्षज आशु हन्यादेरण्डतैलेन सहानु-
लिप्तः। कण्डूतिमन्तं किटिभं पुराणं सर्पं कठोरो
गरुडो यथैव ॥ ५२ ॥

करंजुएका क्षार एरण्डतैलके साथ लेप करनेसे अत्यंत कण्डूसे युक्त किटिभकुष्ठका नाश करता है जैसे कठोर गरुड सर्पका नाश करता है ॥ ५२ ॥

निशामरिचसिन्धूत्थैः सार्धं नृजलपेषिता।
लेपात् किटिभसंहन्त्री कुलत्थशरपुंखिका ॥ ५३ ॥

हलदी, मरिच, सेंधालवण इनको मनुष्यके मूत्रके साथ पीसकर लेप करनेसे तथा कुलथी और शरपुंखाकोभी मनुष्यके मूत्रसे पीसकर लेप करनेसे किटिभकुष्ठका नाश होता है ॥ ५३ ॥

जम्बीरस्वरसे पिष्टकासमर्दांघ्रिलेपनम्।
विचर्चिकानां सर्वेषां परमौषधमुच्यते ॥ ५४ ॥

जम्बीरीके रसमें कसौंदीके पत्र पीसकर पैरोंको लेप करनेसे सम्पूर्ण विचर्चिकाका नाश होता है यह क्षुद्र कुष्ठोंके लिये उत्तम औषध है ॥ ५४ ॥

त्रिफलां किञ्चिद्भृष्ट्वा तैलेनालेपयेद्बहुशः।
पादे विपादिकायाः पादं पद्मोपमं कुरुते ॥ ५५ ॥

त्रिफलाको कुछ भूनकर तेलके साथ बहुत बार लेप करनेसे पैरकी विपादिका कुष्ठ (बिवाई) को दूर कर कमलकी तरह साफ पैरोंको बना देता है ॥ ५५ ॥

---

१ " हरीतक्यास्त्रयो भागा शिवा द्वादशभागिका। षट् भागाः स्युर्विभीतस्य त्रिफलेयं प्रकीर्तिता ॥ "

कारस्करास्थिनिर्यूहे तत्कल्केन हविः शृतम् ।
गव्यं वा माहिषं प्रातं लिप्तं हन्ति विपादिकाम् ॥ ५६ ॥

कुचिलाकी गिटकके कल्कसे गौके अथवा भैंसके घीको सिद्ध कर देरकी विपादिकाको भी लेप करनेसे लाभ होता है ५६

स्नुक्क्षीरपलसांसिद्धतैलसैन्धवलेपनात् ।
रोहेत् सहस्रधा भिन्नमपि पादतलं क्षणात् ॥ ५७ ॥

थोहरका दूध ४ तोले तैल और सैन्धवसे सिद्ध कर लेप करनेसे हजारों स्थानोंसे फटे हुए पाँवभी शीघ्र भर जाते हैं ॥५७॥

सिध्मा शाम्यति सहसा चूर्णालनिशाप्रलेपेन ।
गोमूत्रसंयुतेन द्वित्रिदिनैर्मर्दनान्नियतम् ॥ ५८ ॥

हरताल और हलदीको गोमूत्रके साथ २।३ दिनतक लेप करनेसे सिध्मकुष्ठका नाश होता है ॥ ५८ ॥

निषिञ्चेत्सावधानः सन् मूत्रस्याद्यन्तयोः स्रवे ।
तस्य सिध्मा प्रयात्यस्तं विचित्रमिदमौषधम् ॥५९॥

गोमूत्रके आदिके और अन्तके स्रावमें सावधान होकर सिंचन करनेसे ही सिध्मका नाश होता है यहभी सिध्मकी विचित्र औषध है ॥ ५९ ॥

---

१ प्रातं पुराणम् ।

प्रलेपात्सिध्म यात्यस्तमपामार्गस्य भस्मना ।
केवलेन यथा पापं चन्द्रशेखरभस्मना ॥ ६० ॥

अपामार्गकी भस्मके लेपसे ही केवल सिध्मरोगका नाश हो जाता है जैसे चन्द्रशेखरकी भस्मने पापका नाश हो जाता है ॥ ६० ॥

सिध्मा शीघ्रं नाशमायाति तोये
क्लिन्ने स्नानं यत्र कुर्वन्ति काकाः ।
शस्त्रं हस्ते गृहीत्वा ये चरन्ति
स्पृष्टस्तेषां पाणिना सोऽपि सिध्मा ॥ ६१ ॥

जहांपर काक स्नान करते हैं उस पानीके लेप करने तथा शस्त्र लेकर चलनेवालोंके हाथके स्पर्शसे ही सिध्मका नाश होता है ॥ ६१ ॥

दद्रौ गुडं प्रलिम्पेत्तत्स्थाः कृमयो विनश्यंति ।
चिञ्चापत्ररसं वा कण्डूतिनाशमन्विच्छन् ॥ ६२ ॥

दादपर गुडका लेप करनेसे उस जगहके कीडोंका नाश हो जाता है अथवा कण्डूकी शांतिके लिये इमलीके पत्तोंके रसका लेप करना चाहिये ॥ ६२ ॥

कलित्वक्साधिते तोये वासिता निशि बाकुची ।
पिष्टा तैलेन पीता च श्वित्रशत्रुविनाशिनी ॥ ६३ ॥

बहेडेकी त्वचासे सिद्ध जलमें रातको बावची भिगो छोडे प्रातः पीसकर तैलके साथ पीनेसे श्वित्रका नाश होता है ॥ ६३ ॥

तुषाम्भसा तालशिफां सशुण्ठीं
नाभौ कवोष्णां प्रदिहेत् कृमिघ्नाम् ।
प्रातः पिबेद्वा सुरसस्य मूलं
सनागरं कोष्णजलेन वापि ॥ ६४ ॥

तालमूलीकी जडको और सुण्ठीको जौके पानीसे पीसकर कुछ गरम २ कृमियोंके नाशके लिये लगावे और प्रातः तुलसीके मूलको और शुण्ठीको गरम पानीके साथ पीवे ॥ ६४ ॥

जठरोपरि परिलिप्तं शरपुंखं पातयेद्धि कृमीन् ॥
सकुलत्थैः शकालितैः जठराशुष्कपल्लवैः ।
नालिकेरस्य निर्यूहः कृमिहा स्यात्सरामठः ॥ ६५ ॥

शरपुंखेको जठरपर लेप करनेसे कृमि गिर जाते हैं तथा कुलथीके साथ शुष्कपल्लव (अमलतास) के पत्तोंका लेप करनेसे, नारियलके काथको हींगके साथ पान करनेसे कृमिरोगका नाश होता है ॥ ६५ ॥

रोमशानां भृशं देहे क्षुरकर्म न कुर्वताम्।
अन्वर्थसूचकाः सूक्ष्मा जायन्तेऽष्टपदा नृणाम्॥ ६६॥

पुरुषोंके बालोंके न कटवानेपर बहुत बढ जानेसे अशुभ-सूचक सूक्ष्म अष्टपद कीडे पैदा हो जाते हैं॥ ६६॥

चिञ्चापत्ररसैर्वा रसैर्वा लिकुचपत्रसंभूतैः।
उद्वर्तिते शरीरे नाष्टपदाः संभवन्ति पापिष्ठाः॥ ६७॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायां शोफविसर्पश्वित्रकुष्ठाधिकारो नामैकादशः पटलः॥ ११॥

इमलीके पत्तोंके रसको मलनेसे अथवा बडहरके पत्तोंके रसको मलनेसे क्रूर अष्टपद नहीं होते॥ ६७॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनी-टीकायां शोफविसर्पश्वित्रकुष्ठाधिकारो नामैकादशः पटलः॥ ११॥

अथ वातशोणितवातव्याधिस्थूलकृशाधिकारो नाम द्वादशः पटलः।

चन्द्ररससंमितानां सैन्धवपिण्याकतैलानाम्।
अम्लारनालकुडवे पक्वानां लेपनाज्जयेद्वातम्॥ १॥

सैन्धालवण, तिलकल्क, तैल ३२ तोले कांजीमें नारियलके जलको मिलाकर लेप करनेसे वातका नाश होता है॥ १॥

तैलं लिप्त्वा वातरोगोपशान्त्यै यामादूर्ध्वं शर्वरीसूक्ष्मचूर्णम्। लिप्त्वोद्धृत्योद्धृत्य तैलं हरेद्यामयामादूर्ध्वं तत् पुनर्हन्ति वातम् ॥ २ ॥

वातरोगकी शांतिके लिये तैलका लेप करे और १ पहर पश्चात् हलदीके चूर्णको मले तदनंतर १ प्रहर पश्चात् फिर तैलको मले तो इस तरह करनेसे वातरोगका नाश होता है॥२॥

वातः सर्वाङ्गसंभूततैलाभ्यक्तस्य देहिनः।
स्वेदेन शममायाति दहनो वारिभिर्यथा॥ ३ ॥

सम्पूर्ण शरीरमें कुपित वात तैलके अभ्यङ्गसे तदनंतर स्वेद लेनेसे शांतिको प्राप्त होता है, जैसे जलसे सिंचनेसे अग्नि नाश होती है॥ ३ ॥

धत्तूरस्वरसे शृतं तिलभवं द्विप्रस्थमात्माङ्घ्रिणा
कंसे निष्कचतुष्टयद्विगुणितेनाक्षक्षपेनान्वितम्।
अभ्यङ्गादनिलामयानपहरत्येरण्डशुण्ठीबला-
कोरण्डैः शृतमम्बु चासुरगणान् रामो यथा सानुजः ४

२५६ तोले धत्तूरके रसमें सिद्ध किया हुआ दो सेर तिलका तैल इसकी अपेक्षा चतुर्थांश (६४ तोले) जलसे एरण्ड, सोंठ और साकुण्डका किया कषाय है उससे युक्त सिद्ध हुआ तेल अर्थात् २५६ तोले धतूरेके रससे और २० मासे एरण्ड, बला, सोंठ, साकुण्डका ६४ तोले जलसे किये कषायमें सिद्ध किया गया जो तिलतैल है वह मालिश करनेसे वातरोगोंको इस प्रकार नाश करता है जैसे लक्ष्मण-सहित राम राक्षसोंका नाश करते थे ॥ ४ ॥

नुहीस्वरसपिष्टेन तैलेनाप्लावितेन च ।
छागगूढेन कोष्णेन लिम्पेद्वातरुजातुरम् ॥ ५ ॥

थोहरके रसको पीसकर तैलके साथ मिलाकर बकरीकी विष्ठाकी साथ मिलाकर कुछ गरम २ लेप करनेसे वातरोगका नाश होता है ॥ ५ ॥

प्रभञ्जनार्तिशमनो मातुलुंगफलत्वचाम् ।
लेपः कोष्णजले पिष्ट्वा स्याल्लवंगत्वचां तथा ॥ ६ ॥

बिजौरे नींबूकी त्वचाको तथा लौंगकी त्वचाको गरम पानीमें पीसकर लेप करनेसे वातरोगका नाश होता है ॥ ६ ॥

क्काथेन कल्केन भूनागयुक्तं कोरण्डमूलस्य तैलं विपक्कम्। दुग्धेन चाशीतिवातामयघ्नं पानांगलेपादिभिः शीघ्रमेतत् ॥ ७ ॥

भूनागसे युक्त कोरण्डमूलके क्काथ और कल्क और दूधसे सिद्ध तैल पान करनेसे तथा अभ्यंगसे ८० प्रकारके वातरोगोंका नाश होता है ॥ ७ ॥

एरण्डतैलं निर्गुण्डीस्वरसं च पृथक् समम्।
पीत्वा कटीप्रदेशस्थं वातं जित्वा सुखी भवेत् ॥ ८ ॥

एरण्डतैलको तथा निर्गुण्डीके रसको पृथक् २ सम भाग पीनेसे कटिप्रदेशमें होनेवाली वातपीडाका नाश होता है ॥ ८ ॥

लवणारनालमिश्रैर्भृष्टैर्दृढवस्त्रखण्डपुटादिग्धैः।
तण्डुलशकलैः स्वेदो वातार्तिं नाशयेत् सहसा ॥ ९ ॥

नमक और कांजीसे मिलाकर वस्त्रखण्डको दग्ध करके उसके स्वेदसे तथा चांवलोंके तुषोंसे स्वेद करनेसे वातपीडाका नाश होता है ॥ ९ ॥

सुपक्कव्रीहिबाष्पाणां कटेनान्तरितात्मनाम्।
उपरिष्टात्तु शयनं पृष्ठवातार्तिनुत् परम् ॥ १० ॥

पक्के हुए व्रीहिधान्यके बाष्पको कटिभागपर लेटे हुए शयन करनेसे पृष्ठकी पीडाका नाश होता है ॥ १० ॥

क्रोष्टुशीर्षेण शूनांगस्ताडयेत् क्रोष्टुशीर्षकम् ।
तेनैव शांतिमायाति दुष्टः क्रोष्टुकशीर्षकः ॥ ११ ॥

क्रोष्टुकशीर्षके सबबसे सूजा हुआ अंग होनेसे क्रोष्टुकशीर्षकाही नाश करना चाहिये, क्योंकि उसीके नाशसे ही तज्जनित शोथका नाश हो सक्ता है ॥ ११ ॥

धत्तूरपत्रस्वरसे सुतीक्ष्णं परिलोडितम् ।
भानुतप्तं मुहुर्लिम्पेज्जेतुं क्रोष्टुकशीर्षकम् ॥ १२ ॥

धत्तूरके पत्तोंके रसमें सोहांजनेको मिलाकर सूर्यकी धूपपर तपाकर वार २ लेप करें तो क्रोष्टुशीर्षका नाश होता है ॥ १२ ॥

सनालान्युरुपूगस्य पत्राण्यन्योन्यबन्धनम् ।
कृत्वा छित्त्वा द्विधा ताभ्यां स्वेदस्तैलेन वातहा ॥ १३

तालसहित एरण्डके पत्तोंको एक दूसरेके साथ बांधकर तथा दो टुकडे करके उनके तेलसे स्वेद देनेसे वातरोगका नाश होता है ॥ १३ ॥

कार्पासबीजाक्षतमाषसिन्धुकुलत्थकोरण्डनिशार्क-
मूलैः । धायाम्लपिष्टैरसकृत् प्रलिम्पेन्नात्युष्णशी-
तैरवबाहुकघ्नम् ॥ १४ ॥

कपासके बीज (बिनौले), जौ, माष, नमक, कुलथी, बेर, हरिद्रा, आककी जड इनको कांजीके साथ पीसनेसे वारम्वार न उष्ण न शीत ऐसा लेप करे तो अवबाहुक रोगका नाश होता है ॥ १४ ॥

परिणतकेरीक्षीरे जम्बीरफलोदकेन समतुलिते ।
क्षणदासुरधूपयुतं तैलं ह्यवबाहुकं जयति ॥ १५ ॥

पके हुए नारियलके दूधमें सम भाग जम्बीरीनींबूका रस मिलाकर तथा हरिद्रा, सरल इनसे सिद्ध तैलके मर्दन करनेसे अवबाहुकरोगका नाश होता है ॥ १५ ॥

लिकुचरसस्नुक्क्षीरे क्षीरे तैलं समेतभूनागम् ।
सिद्धं हिनस्ति लेपाद्दुस्तरमवबाहुकं क्षणतः ॥ १६ ॥

बडहरका रस तथा थोहरका दूध, दूध, तैल, भूनागके सहित सिद्ध किये तैलके लेप करनेसे क्षणभरमें अवबाहुकका नाश होता है ॥ १६ ॥

सीमन्तिनीनां पयसा प्रलिम्पेच्छुण्ठीं शताह्वां लिकुचोदकेन। ते जानुबाहुप्रभवानिलघ्ने स्यातां क्रमव्युत्क्रमलेपिते वै ॥ १७ ॥

सीमन्तिनीके दूधमे सोंठको लेप करे और वडहरके रससे सौंफको लेप करे इस तरहसे क्रम व्युत्क्रमसे लेप करनेसे जानुवाहुपर्यन्त वाहुरोगका नाश होता है ॥ १७ ॥

सुतिर्भवति चेदंघ्रौ पुंसामासनसेवया।
तदन्यपार्श्वकर्णस्य मर्दनैरुपशाम्यति ॥ १८ ॥

यदि आसनपर बैठे रहनेसे पुरुषोंके पैर सोजावें तो दूसरे पैरके अंगूठेको (?) मलना चाहिये इस तरह करनेसे शांति होती है ॥ १८ ॥

दीर्घमार्गगमनेन पादयोस्तोदमास्ति यदि तैलमर्दनम्। कोष्णतोयपरिषेचनं निशि प्रोन्नतांघ्रिशयन च शम्यते ॥ १९ ॥

यदि अधिक मार्ग चलनेसे पैरोंमें पीडा हो तो तैलका मर्दन करे और रातको गरम पानीसे धोकर ऊँचे पाँव कर सो जाना चाहिये ॥ १९ ॥

आत्मक्षवथौ सहसा प्रणवं संकीर्तयेद्बहुशः ।
क्षवथौ 'आयुष्मान् भव' जृम्भायां स्फोटयेत्तथाऽङ्गुल्यौ ॥ २० ॥

बहुत छींक आनेपर ॐ नामको जपना चाहिये । और आयुष्मान् भव ऐसा कहना चाहिये और जृम्भाके अधिक आनेपर अपनी अंगुलियोंको खींचकर शब्द (पटाखे) निकालने चाहिये ॥ २० ॥

केदारसीम्नि संभूतं गोमयं तु प्रलेपयेत् ।
सशब्दयानः पादस्य चापल्येन स गच्छति ॥ २१ ॥

केदारकी सीमापर उत्पन्न हुए गोमयका प्रलेप करना चाहिये वह शब्द करते हुए पैरोंकी चपलतासे चलता है॥२१॥

स्तब्धगात्रमनिलान्महाबलाद्भृष्टधान्यतिलवातहास्थिभिः । लिप्तमाशु वशमानयेच्छनैस्तिन्तिणीत्वगनलेन तापितैः ॥ २२ ॥

महाबलवान् वायुसे स्तब्धगात्र हो जानेपर भुने हुए धान्य, तिल और वातनाशक औषधियोंसे लेप करना चाहिये और धीरे २ अग्निपर तपाकर इमलीकी छालसे लेप करना चाहिये ॥ २२ ॥

लशुनबर्बरगुग्गुलुनागरैर्विबुधदारुयुतैः शृतमम्बु यत् । ज्वलयति ज्वलनं कफकोपहृत् पवनमाशु जयत्यतिगर्वितम् ॥ २३ ॥

लहसन, तुलसी, गुग्गुलु, सोंठ, देवदारु इन पांचसे सिद्ध जल अग्निको बढाता है तथा कफको दूर करता है और वायुके विबन्धको शीघ्र नाश करता है ॥ २३ ॥

क्षुण्णे प्रसारिणीपत्रे निर्गुंड्याः सिकतां भृशम् ॥
भृष्ट्वा निधाय बद्ध्वा च स्वेदनादनिलान् जयेत् ॥२४॥

प्रसारिणीके पत्रको कूटकर तथा निर्गुण्डीके रसमें सिंचन कर भूनकर और बांधकर स्वेद करनेसे वायुरोगका नाश होता है ॥ २४ ॥

जानुप्रदेशजनितानिलनाशनाय
तैलं निशामिशिसुरद्रुमदेवधूपैः ।
सिद्धं जले लिकुचजन्मनि शस्तमेत-
च्छोफोग्रतोदसहिते रुधिरस्रुतौ च ॥ २५ ॥

जानुस्थानपर स्थित वायुके नाशके लिये हलदी, सौंफ, देवदारु, गूगल इनसे सिद्ध तैलको बडहरके रसमें मिलावे यह सूजन और पीडासहित रुधिरस्रावको नाश करता है ॥ २५ ॥

जानुशोफानिलार्तिघ्नं धत्तूरोदरपाचितम्।
पुनर्धान्याम्लसंपिष्टं लवणं चर्चितं मुहुः ॥ २६ ॥

धतूरके फल डालकर पकाया हुआ नमक फिर कांजीसे पीस लेना चाहिये तदनंतर सेवन करनेसे वायुकी पीडा तथा जानुकी सोजन दूर होती है ॥ २६ ॥

कारस्करस्यार्धचतुःपलेन क्षीराढके कल्कितकोडितेन। प्रस्थं पचेत्तैलमपाकरोति तद्वातरक्तं न तु तुल्यमस्य ॥ २७ ॥

कुचिलाके साढे चार पलसे सिद्ध ४ सेर दूधमें कल्क डालकर तथा उसमें सिद्ध १ सेर तैल वातरक्तके नाश करनेको अद्वितीय है ॥ २७ ॥

धान्याम्लमिश्रं चिञ्चाम्लं पटु तैलमिदं शृतम्।
लिम्पेद्वातास्रनाशाय मृगनाभिमथापि वा ॥ २८ ॥

कांजी, इमली, लवण इनसे सिद्ध तैल वातरक्तके नाशके लिये लेप करे अथवा कस्तरीसे सिद्ध तैलसेभी वातरक्तका नाश होता है ॥ २८ ॥

करञ्जवन्दाककुलीरमान्दैः प्रशस्तमुल्लेखनमम्ल-

काञ्जिकैः। कटूष्णमाश्वेव विनाशयेद्ध्रुवं प्रभञ्ज-
नास्रं पवनो यथाऽम्बुदम् ॥ २९ ॥

करंजुआ, बांदा, कटेरी, फरहर, अम्ल कांजीसे इसका लेप कर उल्लेखन करे, मघा, मरिच, सोंठका सेवन शीघ्र वातरक्तको नाश करता है जैसे मेघको वायु ॥ २९ ॥

अतिस्थूलशरीरो यस्तिलतैलं प्रगे पिबेत्।
पिबेदसनसारस्य क्काथं वा मधुसंयुतम् ॥ ३० ॥

अतिस्थूल शरीरवाला पुरुष तिलतैलको प्रातःकाल पीवे अथवा विजयसारके क्काथको शहत मिलाकर पीवे ॥ ३० ॥

मासद्वय प्रकुर्याद्दशमरिचोपेतमेकताम्बूलम्।
खात्त्वा सुशीतमम्भः पिबेत् कृशः स्यादतिस्थूलः ३१

दो मासतक दस मरिच डालकर एक पानको खाके ठण्डे जलको पीवे तो कृश भी अतिस्थूल हो जाता है ॥ ३१ ॥

भुक्त्वा तदार्द्रेण करेण देहं परामृशन् पञ्चदिनैः
कृशोऽपि। पुष्टिं लभेत्स्त्रीजनमोहनाङ्गः सिध्मं च
गात्रस्थितमाशु हन्ति ॥ ३२ ॥

इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां वातशोणितवातव्याधिस्थूलकृशाधिकारो नाम द्वादशः पटलः ॥ १२ ॥

भोजन करके गले हाथको शरीरपर फेरे तो पांच दिनमें कृशभी पुष्टिको प्राप्त हो जाता है, स्त्रीजनोंको मोहनेवाला हो जाता है और गात्रमें स्थित सिध्म दूर हो जाता है ॥ ३२ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमा-सुखबोधिनीटीकायां द्वादशो पटलः ॥ १२ ॥

अथ गर्भिणीचिकित्साधिकारो नाम त्रयोदशः पटलः ।

दशमूलानि च नलिनं कुष्ठमुशीरं नतस्पृक्के ।
एरण्डशिफां च पिबेद्गर्भाशयशोधनाय गोपयसा ॥ १ ॥

दशमूल (श्योनाक, गम्भारी, पाटला, बिल्व, अग्निमन्थ शालपर्णी, गोखरू, पृश्निपर्णी, कंटकारी, बडी कण्टकारी) इनका चूर्ण और कमल, कुष्ठ, खल, अगरू, असवरग, एरण्ड-की जड, सबके चूर्णको गाके दूधके साथ गर्भाशयकी शुद्धिके लिये पान करना चाहिये ॥ १ ॥

१ ' बिल्वोऽग्निमन्थः श्योनाकः काश्मरी पाटला स्थिरा । त्रिकण्टकः पृश्निपर्णी बृहती कण्टकारिका ॥ दशमूलमिदं श्वाससन्निपातज्वरापहम् ॥ '

कटुकालाबुसंसिद्धं तैलमभ्यञ्जनाद्भवेत् ।
योनिदोषहरं नार्यां गर्भमुत्पादयेदपि ॥ २ ॥

कटुतुम्बीसे सिद्ध तैलकी मालिशसे स्त्रियोंका योनिदोष दूर होता है और गर्भभी उत्पन्न करता है ॥ २ ॥

पुत्रार्थं दम्पती रात्रौ शयीयातां मुदान्वितौ ।
पुष्पचंदनताम्बूलयौवनैः समलंकृतौ ॥ ३ ॥

फूल और चंदनकी सुगन्धिसे सुगन्धित गृह हो तथा पान चर्वण किया हो और युवावस्थासम्पन्न दम्पती पुत्रकी इच्छा करते हुए हर्षयुक्त सोवें ॥ ३ ॥

कणामूलकणादारुद्राक्षापुरगुडैः कृतात् ।
योनेरुद्वर्तनात्तूर्णं सौभाग्यं जायते स्त्रियाः ॥ ४ ॥

शीघ्र सौभाग्यकी इच्छा करती हुई स्त्री पिप्पलामूल, पिप्पली, देवदारु, दाख, गुग्गुल, गुड इनके चूर्णसे योनिमें लेप करे ॥ ४ ॥

ब्राह्मीवासामृतानिम्बशाङ्गेष्टादलजं रसम् ।
प्रातर्निपीय तैलेन वंध्याऽपि लभते सुतम् ॥ ५ ॥

ब्रह्मी, अडूसा, गिलोय, निम, कैंचमैंच इनके रसको प्रातः-काल तेलसे पीवे तो वन्ध्यास्त्रीभी पुत्रको प्राप्त करती है ॥ ५ ॥

बीजानि बीजपूरस्य क्षीरपक्वानि या पिबेत् ।
नारी घृतेन सहसा क्षीरभुक् गर्भधृग्भवेत् ॥ ६ ॥

बिजौरे नीम्बुके बीजोंको दूधमें पकाकर घीके साथ पीनेसे स्त्रीको गर्भ हो जाता है ॥ ६ ॥

अथवाऽश्वत्थवंदाकं गर्भदं क्षीरपाचितम् ।
गृहीतमश्वगंधाया मूलं पुष्ये पिबेदृतौ ॥ ७ ॥

अथवा पीपल और बांदाको दूधमें पकाकर पीनेसे गर्भ हो जाता है, तथा असगन्धकी जडको पुष्यनक्षत्रमें लेकर ऋतुके समय पीनेसे गर्भ हो जाता है ॥ ७ ॥

क्षीरेण क्षीरभुग्भूत्वा पुत्रसंपदि मज्जति ।
शैवेन तपसा सिन्धौ ब्रह्मरूपे यथा तथा ॥ ८ ॥

दूधसे दूधका भोजन बनाकर खानेसे पुत्र ही उत्पन्न होते हैं, जैसे शिवने ब्रह्मस्वरूप सरोवरमें गोता लगाया था ॥ ८ ॥

कार्पासशलाटूनां कल्कं क्षीरे पिबेत सप्ताहम् ।
वन्ध्या पुत्रोत्पत्तिं वाच्छन्ती पुष्यदिवसेषु ॥ ९ ॥

वन्ध्या स्त्री अगर पुत्रकी इच्छा करती हो तो कपास और

१ ' मातुलुङ्गस्य ' इति पाठांतरम् ।

विलके कल्कको पुष्यनक्षत्रके दिनोंमें सात दिनतक दूधके साथ पीवे ॥ ९ ॥

वज्रवल्लीरसे तुल्यं तैलं तत्कल्कमिश्रितम् ।
ध्वजारोहणकल्याणदिवसे पार्वतीपतेः ॥ १० ॥

शिवरात्रिके दिनमें अस्थिसंहारीके रसमें सम भाग तैल मिलाकर और पूर्वोक्त कल्क मिलाकर पीनेसे गर्भ हो जाता है ॥ १० ॥

ऋतुस्नाता वधूः पिण्डं भक्षयेत् पुत्रकांक्षिणी ॥
वन्दाकमौदुम्बरमादरेण वन्ध्याऽङ्गना पुष्पविशुद्धिवारे ।
पूर्वं विरिक्ता लभते कुमारं छागस्य दुग्धेन सह प्रपीत्वा ११

ऋतुसे स्नान की हुई पुत्रकी इच्छा करती हुई स्त्री पिण्ड (करि गण्डमूल) को खावे बांदा और गूलरको पुष्पविशुद्धिके दिनमें पूर्व विरेचन लेकर बकरीके दूधके साथ वन्ध्या स्त्री पीवे तो पुत्रको प्राप्त करती है ॥ ११ ॥

काकमाचीशिफां पुष्ये कामं निष्पीड्य कन्यया ।
रसं स्नाता पिबेन्नारी लभेद्गर्भमनुत्तमम् ॥ १२ ॥

कैंचमैंचकी जडको पुष्यनक्षत्रमें घीकुआरके रससे पीसकर

तथा निचोडकर स्नान करनेके पीछे पीनेसे अतिउत्तम गर्भ होता है ॥ १२ ॥

स्नात्वा चतुर्थदिवसे स्वभर्तृसंपर्कमाप्य निशि वनिता ।
पुत्रं लभेत सुभगं वामेतरपार्श्वसंयुक्ता ॥ १३ ॥

ऋतुके चतुर्थ दिन स्नान कर रात्रिको दक्षिणाभिमुख होकर पतिसे संयोग करनेसे स्त्री पुत्ररत्नको प्राप्त करती है ॥ १३ ॥

बीजपूरस्य बीजानि मूलं वा गर्भसंभवे ।
पिबेदाज्येन मूलं वा लक्ष्मणाहयगन्धयोः ॥ १४ ॥

बिजौरे नीम्बूके बीजोंकी तथा मूलको गर्भकी उत्पत्तिके लिये घीसे पीवे अथवा लक्ष्मणा और असगन्धकी जडको घीसे पीवे ॥ १४ ॥

गिरिकर्ण्याः शिफा श्वेता कुमुदायाः कटीतटे ।
धार्यमाणा स्त्रिया गर्भस्थापनाय भवेत् प्रभुः ॥१५॥

इन्द्रवारुणीकी जड और श्वेत कुमुदकी जडको कटीस्थानमें धारण करती हुई स्त्री गर्भ स्थापन करती है ॥ १५ ॥

उदुम्बरशिखाक्काथे क्षीरं समधुशर्करम् ।
शालिं पिष्ट्वा पिबेद्गर्भविनिपातनिवर्तनम् ॥ १६ ॥

गूलरकी जडके काथमें दूध, शहत, शक्कर और शालि-धान्य पीसकर पीनेसे गर्भपात नहीं होता ॥ १६ ॥

तरुणैर्नालिकेरस्य पुष्पैरौदुम्बरैः फलैः।
अब्दैश्च कल्पितः क्वाथो गर्भद्रावं निवर्तयेत् ॥ १७ ॥

नारियलके तरुण पुष्पोंसे तथा गूलरके फलोंसे और नागर-मोथासे सिद्ध किया कषाय गर्भपातको दूर करता है ॥ १७ ॥

लाक्षा यष्टीमधुकं क्षौद्रोपेतं सशर्करं लीढम्।
पीता क्षौद्रोपेता मृद्वीका गर्भशूलहरा ॥ १८ ॥

लाख मुलहठी, शहत और शक्कर मिलाकर चाटनेसे तथा दाखको सहतके साथ मिलाकर पीनेसे गर्भशूलका नाश होता है ॥ १८ ॥

पारावतशकृत्कल्को निपीतस्तण्डुलाम्बुना।
गर्भिणीनामसृक्स्रावं निरुणद्धि सवेदनम् ॥ १९ ॥

कबूतरकी बीटके कल्कको चावलोंके पानीके संग पीनेसे गर्भिणी स्त्रीके रुधिरस्रावका नाश करता है ॥ १९ ॥

मार्कवस्वरसं गव्यं क्षीरं च सदृशं पिबेत्।
अन्तर्वन्त्या भवेत्तस्या नैव गर्भपरिच्युतिः[1] ॥ २० ॥

---

१ 'गर्भभ्रंशः' इति पाठांतरम्।

भांगरेके रसको और गौके दूधको बराबर लेकर पीनेसे गर्भिणीका गर्भ कभी नहीं गिरता ॥ २० ॥

समङ्गाधातकीपुष्पक्षीरलोध्रमहोत्पलैः ।
न गर्भो निपतेत् पीतैर्नातिमात्रजलस्थितैः ॥ २१ ॥

मंजीठ, धायके फूल, दुग्ध, लोध्र, कमल इनका थोडासा जल पीनेसे गर्भिणीका गर्भ नहीं गिरता ॥ २१ ॥

क्षीरेण पीता सक्षौद्रा कुलालकरमर्दमृत् ।
सहसा प्रतिबध्नीयाद्गर्भध्वंसं न संशयः ॥ २२ ॥

कुम्हारके हाथोंकी मिट्टीको शहतके साथ मिलाकर दूधके साथ पीनेसे शीघ्र ही गर्भपातका नाश होता है इसमें संशय नहीं २२

कर्कटीमूलसंसिद्धं क्षीरं शूलहरं परम् ।
गर्भिणी तु बलाक्काथसिद्धं सायं प्रगेऽपि वा ॥ २३ ॥

ककडीके मूलसे सिद्ध दूधको पीनेसे गर्भशूलका नाश होता है अगर गर्भिणीस्त्री खिरैंटीके काथसे सिद्ध दूधको पीवे तो शूलका नाश होता है ॥ २३ ॥

क्षीरपिष्टमबलाऽक्षकं पिबेद्देवदालिकुसुमोद्भवं रजः ।
शीघ्रमेव सुखसूतिमावहेन्नास्त्यतः परतरं तदौषधम् २४

देवदालीके फूलोंके चूर्णको १ तोलेभर दूधके साथ पीनेसे सुखपूर्वक गर्भ उत्पन्न हो जाता है इससे बढकर और कोई औषधि नहीं ॥ २४ ॥

गर्भिण्याः सुखसूत्यर्थं किमन्यैर्मन्त्रभेषजैः ।
सहस्रप्रस्थमम्भवाशु मेयं पुत्रस्य मातुलैः ॥ २५ ॥

गर्भिणीके सुखपूर्वक प्रसव होनेके लिये अन्य मंत्रों तथा औषधियोंकी क्या आवश्यकता है किंतु पुत्रके मामासे १००० सेर पानी जल्दीसे माप कराना चाहिये ॥ २५ ॥

कारस्करास्थिसलिलेन विघृष्य लिम्पे-
न्नाभौ सुखप्रसवकांक्षितसुन्दरीणाम् ।
तद्वद्विषं च करपादतलेषु बाले
जाते तमाशु सलिलैः परिशोधयेच्च ॥ २६ ॥

सुखपूर्वक प्रसव हो इसलिये स्त्रियोंकी नाभिपर कुचलेके बीजको पानीसे घिसकर लगावे तथा हाथ और पाँवोंके तलवोंपर विषको लगावे बालकके उत्पन्न होते ही शीघ्र धो डाले ॥ २६ ॥

वारिघृष्टं विशालाया मूलमाज्येन संयुतम् ।
अधोमुखमधो नाभौ लिम्पेत्सद्यः प्रसूतिकृत् ॥ २७ ॥

इन्द्रायणकी जडको पानीसे घिसकर घीमें मिलाकर मुखके नीचे और नाभिके नीचे शीघ्र प्रसवके अर्थ लेप करे ॥ २७ ॥

वासापरूषफलिनीकाकमाचीशिफाः पृथक्।
पिष्टा नाभेरधो लिप्ता गर्भनिष्क्रामणप्रदाः ॥ २८ ॥

अडूसा, फालसा, कलिहारी और कैंचमैंचकी जडको पृथक् २ पीसकर नाभिके नीचे लेप करनेसे शीघ्र प्रसव होता है ॥ २८ ॥

पक्कं तिलोद्भवं नार्या विशल्यास्वरसेन च।
हन्ति गर्भापरासङ्गं गुह्यनाभिकरांघ्रिगम् ॥ २९ ॥

गिलोयके रससे पक्व तिलतैल गर्भकी अपराके संगको दूर करता है ॥ २९ ॥

प्रपुन्नाटशिफा गाढं क्षुण्णा योनौ धृता भवेत्।
क्षुण्णा सतैला वर्षाभूशिफा च सुखसूतिदा ॥ ३० ॥

चक्रमर्दकी जडको अच्छी तरह पीसकर योनिमें रखनेसे अथवा तैलके साथ, इट्सिट्की जडके चूर्णको रखनेसे सुखपूर्वक प्रसव होता है ॥ ३० ॥

---

१ 'गर्भाशयवराङ्गम्' इति पाठान्तरम्।

तद्वन्मूर्धनि विन्यस्ता द्वित्राः स्नुक्क्षीरबिन्दवः।
वचोग्रातिविषासर्पनिर्मोकैर्धूपनं भगे ॥ ३१ ॥

इसी तरहसे थोहरके दूधके २।३ बूंद मूर्धामें डालनेसे सुखपूर्वक सूति हो जाती है अथवा वच, अजवायन, अतीस, सांपकी कांचली इनसे भगमें धूप देनेसे सुखपूर्वक सूति होती है ॥ ३१ ॥

करञ्जतैलसंयुक्तैर्गर्भमाश्वेव पातयेत्।
करवन्दां प्रयत्नेन गोमूत्रोपरि वेश्मनः ॥ ३२ ॥

करंजुएके तैलसे संयुक्त गर्भ शीघ्रही गिर जाता है, अथवा करौंदीको यत्नपूर्वक गोमूत्रमें मिलाकर भगमें रखनेसे गर्भका कष्ट दूर होता है ॥ ३२ ॥

स्थापयेत्तेन जायेत गर्भशल्यविनिष्क्रमः।
स्वरसेनेषुपुंखायाः कृतान्मधुकरस्य वा ॥ ३३ ॥

शरपुंखाके रसको भांगरेके रसके साथ मिलाकर नस्य लेनेसे मूढगर्भसे होनेवाला भय नहीं होता ॥ ३३ ॥

नस्यान्न स्याद्भयं स्त्रीणां मूढगर्भसमुद्भवम्।
पुटदग्धाऽहिनिर्मोकमषीक्षौद्रेण चाक्तदृक् ॥

सहसैव विशल्या स्यान्मूढगर्भाऽपि गर्भिणी ॥ ३४ ॥

सांपकी कांचलीकी पुटमें दग्ध कर शहतके साथ लेप करनेसे गर्भसंग दूर होता है । अत्यन्त पीडासे युक्त मूढगर्भाभी गर्भिणी सुखको प्राप्त होती है ॥ ३४ ॥

सिद्धार्थार्जुनपुष्पगुग्गुलुवचालाक्षामयूरच्छदैः
कौशीरभुजङ्गशुक्तिसहितैर्धूपो गृहे निर्मितः ।
स्त्रीणां दम्पतिमूढगर्भजनितां बाधामहिवृश्चिका-
नाखून्भूतगणान्पिशाचनिकरान्गोहान्निरस्यत्यलम् ३५

सफेद सरसों, कोहके फूल, गुग्गुलु, वच, लाख, मोर-शिखाके पत्ते, हौवेर, खस, सीसा, सीप इन सबसे घरमें धूआं देनेसे स्त्रियोंको मूढगर्भके पैदा होनेका दुःख तथा सांप, बिच्छू, चूहे और भूत पिशाच ग्रह सब घरसे निकल जाते हैं ॥ ३५ ॥

पीतं पुष्पलतापत्रं पिष्टं तण्डुलवारिणा ।
अपरां पातयेच्छालीमूलं मूत्रेण वाऽथवा ॥ ३६ ॥

पुष्पलता (घूंघची) के पत्तोंको चांवलोंके पानीसे पीसकर पीनेसे अथवा शालीके मूलको गोमूत्रसे पीसकर पीनेसे अपराका पतन हो जाता है ॥ ३६ ॥

चर्म पूतिकरञ्जस्य वायसोदुम्बरस्य वा ।
पिष्टं तुषाम्बुना पीतमपरां पातयेत् क्षणात् ॥ ३७ ॥

दुर्गन्धित करंजुएके छिलकेको अगुरु और गूलरको जौके पानीसे पीसकर पीनेसे अपरा तत्क्षण गिर पडती है ॥ ३७ ॥

अपथ्याद्दैवयोगाद्वा जातं मूढं भिषग्वरः ।
तत्तल्लक्षणमालोच्य क्षणान्निर्बाधमाहरेत् ॥ ३८ ॥

अपथ्य सेवनसे तथा दैवेच्छासे अगर मूढगर्भ पैदा हो तो वैद्य उन २ लक्षणोंको देखकर क्षणभरमें दुःखको दूर करे॥३८॥

कुक्षौ वातेन धृतो गर्भो वर्षाद्विकारकारी स्यात् ।
तत्र क्षीरं प्रपिबेत् सघृतं कोष्णं करोति सुखसूतिम् ३९

वायुसे कुक्षिमें स्थित गर्भ वर्षसे ऊपर विकार करनेवाला होता है, इसलिये उस समय घृतके सहित कुछ गरम दूधको पीनेसे सुखपूर्वक गर्भ पैदा होता है ॥ ३९ ॥

पिष्ट्वा लिप्ते योनौ मूले खरमञ्जरीपुनर्नवयोः ।
नवसूतायाः शूलं योनिगतं सकलमपनयतः ॥ ४० ॥

अपामार्ग और पुनर्नवाके मूलको पीसकर योनिके मूलमें लेप करनेसे योनिमें प्राप्त नवप्रसूताके शूलको दूर करता है ॥ ४० ॥

सूतायाः कृशमुदरं पीतं तक्रेण मालतीमूलम् ।
मधुघृतपिष्टं व्योषं करोति धात्रीरसो निशया ॥ ४१ ॥

यदि प्रसूताका उदर कृश हो जावे तो चम्बेलीकी जडको तक्रसे पीवे, अथवा मघा, मरिच, सोंठ इनको शहत और घीके साथ पीस लेवे, और तक्रसे प्रयोग करे, अथवा धात्रीके रसमें पिसी हुई हरिद्राके चूर्णको तक्रके साथ पीनेसे सूतिकाके कृश उदरका नाश होता है ॥ ४१ ॥

प्रसूतिसमये यस्या न स्रवेद्रुधिरं ततः ।
शूलं स्याल्लशुनं गन्धलक्ष्मीं च भक्षयेत् सुखम् ॥ ४२ ॥

प्रसवसमयमें जिसके रुधिरका स्राव न हो और शूल हो वह लहसन और गन्धलक्ष्मीको खावे ॥ ४२ ॥

सूतायाः पृष्ठकट्यादौ शोफः स्याद्यदि पाययेत् ।
मयूरमूलपथ्याभ्यां सिद्धमम्बु दिनत्रयम् ॥ ४३ ॥

यदि प्रसूताके पृष्ठ या कटि वगैरहमें सूजन हो जावे तो मयूरशिखाकी जड और हरडसे पानी पकाकर तीन दिनतक सेवन करे तो सूजन दूर हो जाती है ॥ ४३ ॥

कृसरां सघृतक्षीरां शर्करामधुसंयुताम् ।
स्तन्याभिवृद्धये धात्र्या भोजनं परिकल्पयेत् ॥ ४४ ॥

घृत, दूध, शक्कर, शहत इनसे युक्त कशराको दूधकी वृद्धिके लिये धात्रीको देवे ॥ ४४ ॥

यष्टीमधुकसंयुक्तं गव्यं क्षीरं सशर्करम् ।
पीत्वा धात्री भवेद्भूरिस्तन्यापूर्णपयोधरा ॥ ४५ ॥

मूलहठी, गौका दूध और शक्करको मिलाकर पीनेसे गायका दूध बहुत बढता है ॥ ४५ ॥

दुग्धेन सूतया पीतं शालितण्डुलजं रजः ।
विदारीकन्दचूर्णं वा प्रभवेत् स्तन्यवृद्धये ॥ ४६ ॥

दूधकी वृद्धिके लिये प्रसूता स्त्री दूधके साथ शालिचावलोंके चूर्णको पीवे अथवा विदारीकन्दके चूर्णको दूधके साथ पीवे ॥ ४६ ॥

निशाकुमारीकन्दाभ्यां विशालाशिफयाऽथवा ।
स्तन्यदोषं समुत्पन्नं हन्याल्लेपेन तत्क्षणात् ॥ ४७ ॥

हरिद्रा, घीकुआरीकी जडके अथवा इन्द्रायणकी जडके लेपसे दुग्धविकारकी शांति होती है ॥ ४७ ॥

कुर्वते यदि सूताया व्याधयो वेदनां भिषक् ।
कुर्यात्तत्तत्प्रतीकारैश्चिकित्सां शास्त्रकोविदः ॥ ४८ ॥

अगर प्रसूता स्त्रीको व्याधियें दुःख दें तो बुद्धिमान् वैद्य उन २ प्रतीकारोंसे उनका प्रतीकार करे ॥ ४८ ॥

एकादश्यां प्रभाते शिशिरतरजलैर्मिश्रितैरुष्णतोयैः
स्नातो बालश्च मात्रा सह हितमाचिराद्गेहशौचं च कुर्यात् ।
शङ्खं वक्रेऽथ सूत्रं कटितटनिकटे नेत्रयोरञ्जनं च ।
द्वादश्यां सन्मुहूर्ते शकटनिरसनं नामधेयं च कुर्यात्४९ ॥

ग्यारहवें दिन प्रातःकाल शीतोष्ण जलसे माताके साथ बालक स्नान करे और शीघ्रही घरको भी साफ करवादे। मुँहमें शंख कटिप्रदेशमें सूत्रको और नेत्रोंमें अंजनको लगावे और बारहवें दिन शुभमुहूर्तमें गाडीपर बैठे और नामको रखे ॥४९॥

दैवज्ञस्याज्ञया यत्र बालो जातो निकेतने ।
शकुनं तस्य निक्षिप्तं तस्य रोगहरं विदुः ॥ ५० ॥

ज्योतिषीकी आज्ञासे जिस घरमें बालक हुआ हो उसका शकुन डलवाना चाहिये यह उसकी निरोगताके लिये है ॥५०॥

अन्नप्राशनकालात् प्राङ्मुण्डनानि न कारयेत् ।
भस्मसिद्धार्थकौ तस्य मस्तके निक्षिपेत् सदा॥५१॥

इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां गार्भिणीचिकित्साधिकारो नाम त्रयोदशः पटलः ॥ १३ ॥

अन्नप्राशनसंस्कारसे पहले मुण्डन नहीं करना चाहिये। भस्म तथा सफेद सरसों सर्वदा मस्तकमें डालना चाहिये ॥ ५१ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटीकायां गर्भिणीचिकित्साधिकारो नाम त्रयोदशः पटलः ॥१३॥

अथ बालचिकित्साधिकारो नाम चतुर्दशः पटलः।

जाताः केचिच्छिशवः क्लान्ताः स्युर्मार्गसंकटतः।
शीतसलिलसंयुक्तैस्ताम्बूलैर्वीजयेद्वदने ॥ १ ॥

उत्पन्न होतेही कई बच्चे मार्गसंकटके कारण दुःखित हो जाते हैं, इस लिये शीतल जलसे संयुक्त वातको उनके मुखमें देना चाहिये ॥ १ ॥

जातस्य पञ्चमदिने शुभदे मुहूर्त्ते
पञ्चायुधाभरणधारणमिष्टमाहुः।
श्रीगोकुले मुररिपोरिव नन्दगोपो
रक्षां च बालजनको भसितेन कुर्यात् ॥ २ ॥

उत्पन्न हुए शिशुके पांचवें दिन शुभमुहूर्तमें पंचशस्त्ररूपी भूषणोंसे उसको युक्त करे, जिस प्रकार कि गोकुलमें कृष्ण-जीकी नन्दगोपने रक्षा कीथी, वैसेही इस बालकके पिताभी इन शस्त्रोंसे रक्षा करे ॥ २ ॥

विधाय वेधाः प्रथमर्णवानि द्वाराणि गर्भे सति किल्बिषेण। पूर्वेण पश्चात् पिदधाति पश्चादग्रेण शस्त्रस्य भिषक् प्रकुर्यात् (?) ॥ ३ ॥

प्रथममें ब्रह्माने गर्भ होनेके पीछे ९ छिद्र बनाये हैं पर पूर्व-कृत पापकर्मके कारण बन्द कर देता है, फिर वैद्य शस्त्रके अग्रभागसे छिद्र करते हैं ॥ ३ ॥

निष्ठीवे जृम्भायां दृक्स्पर्शं शौचं च सन्ध्ययोः कुर्यात्। लवणारिष्टच्छदनैः परिस्तरेदुपरि बालस्य ॥ ४ ॥

थूकनेमें, जम्भाईमें नेत्रोंको स्पर्श करे। प्रातः और सायं दोनों सन्ध्याओंके समय शौचको करना चाहिये। लवण लगाकर नीमके पत्तोंको बालकके ऊपर इधर उधर रक्खे ॥ ४ ॥

तुषमषीतिलजोदनपत्रकैः सहितपात्रयुतोदकदर्शनम्। सपदि दृष्टिविषं विनिहंति तत्त्रिनयनाभरणं भसितं यथा॥५

धानोंकी भूसीकी मसी, तेल, चावल, पलाश इनसे युक्त पानीसे भरे एक पात्रमें बालकको दर्शन करावें तो तत्काल दृष्टि-विष दूर हो जाताहै, जिस प्रकार शिवजीका भूषण भस्म दृष्टि-विषको दूर करता है ॥ ५ ॥

यो गजेंद्रविषाणाग्रलग्नमृत्समुपेतया ।
पुण्ड्रो रोचनया कृतः सर्वग्रहविमोक्षणः ॥ ६ ॥

हाथीके दांतपर लगी हुई मट्टीको लेकर और वंशरोचन मिलाकर गन्नेको लगाके इसके रसको चुपानेसे सम्पूर्ण ग्रह बालकोंके दूर हो जाते हैं ॥ ६ ॥

छर्दिर्भवेद्यदि पयः पिबतोऽर्भकस्य
वक्त्रे मुहुर्वदनमारुतफूत्कृतेन ।
शीतोदकेन तु जयेज्जननी तु गण्डे
तं पाययेद्भिषगमंगुलिताडनेन ॥ ७ ॥

यदि दूध पीते हुए बालकको वमन आ जावे तो शीत जलसे तथा माता अपने मुखकी फूंकसे जीते और गण्डस्थानपर अंगुलीसे दबाकर पिलावे ॥ ७ ॥

हायनत्रितयादूर्ध्वं स्तन्यं पिबति यः शिशुः ।
निवर्तयेत् क्रमान्निम्बपत्रालिप्तात् पयोधरात् ॥ ८ ॥

तीन वर्षसे ऊपर जो बच्चा माताका दूध पीवे उसको शनैः २ माताका दूध हटाना चाहिये स्तनोंके ऊपर नीमके पत्तोंका लेप कर देना चाहिये ॥ ८ ॥

सानाहशूलातीसारं साटोपं जठरं शिशोः ।
बिन्दुभिर्बहुभिर्व्याप्तं दहेत् सूक्ष्मशलाकया ॥ ९ ॥

आनाहके सहित शूल, अतिसार, आटोपादि उदररोग बच्चेको हो तो बहुत बिंदुओंसे युक्त सूक्ष्मशलाकासे जलाना चाहिये ॥ ९ ॥

क्षुतः संजायते यस्य मध्ये भुक्तस्य यस्य वा ।
गात्रे कम्पप्रभो वातस्तावुभौ प्रोक्षयेज्जलैः ॥ १० ॥

जिस भोजनके मध्यमें बालकको क्षुत लगती हो अथवा जिस भोजनके मध्यमें कपकपी होती हो इन दोनोंमें वायु प्रधान है इन दोनों भोजनोंको धोकर खाना चाहिये ॥ १० ॥

रात्रौ जल्पति यो बालो दन्तान् संघट्टयेत्तथा ।
तावुभौ भवतां शम्भोः प्रदक्षिणपरौ निशि ॥ ११ ॥

रात्रिमें जो बालक बुडबुडाता है तथा दांतोंको किरकिरात है वह दोनों शम्भुके रात्रिमें प्रदक्षिणा करनेवाले होते हैं ॥ ११ ॥

यो मेहति कटे मूत्रं रात्रौ स्वप्ने दिने दिने।
बालः कृष्णावतारस्य विष्णोः पादोदकं पिबेत्॥१२॥

जो बालक प्रतिदिन रात्रिको सोता हुआ मूत्र बिस्तरेपर कर देता है, वह बालक कृष्णावतार विष्णुके चरणारविन्दोंसे स्पर्शित जलको पीवे ॥ १२ ॥

क्षीरे वा सर्पिषि वा मूर्ध्नि गते सति शिशोः प्रमादेन।
मूर्धनि रोमावर्तं धमयेन्मुखवायुना जननी ॥ १३ ॥

यदि प्रमादसे बालकके शिरपर दूध या घी पड जाय तो माता मुखकी वायुसे फूंक देवे ॥ १३ ॥

प्रमादात् पतितं बालं पालयेत् पादपांसुभिः।
मृत्पिण्डेन ततो मूर्ध्नि त्रिः परिमृज्य प्रोक्षयेत्॥१४॥

यदि प्रमादसे बालक गिर जावे तो मिट्टीसे उसकी रक्षा करे तीन वार पोंछकर धोडाले ॥ १४ ॥

बालगात्रे प्रमादेन क्षुतोद्भूतजलाणवः।
पतन्ति चेत् क्षणादेव त्यजामीति वदेत् क्षुतम्॥१५॥

किसी प्रकारकी गलतियोंके कारण (छींक आदि आनेसे) बालकके शरीरपर जलके बिंदु गिरें तो इतना कह देनेसे कि मैं हटाता पर हूं दूर हो जाते हैं ॥ १५ ॥

अनवधानतया गृहमार्जनी स्पृशति यद्यपि गात्रमथ क्षणात् । शिरसि दीपशिखा च शिशोः क्षणात् कनकपात्रजलेन विशोधयेत् ॥ १६ ॥

यदि प्रमादसे गृहमार्जनी (बुहारी) बालकके गात्रको स्पर्श करे अथवा बत्ती बच्चेके शिरको लग जावे तो सुवर्णपात्रमें स्थित जलसे विशोधन करना चाहिये ॥ १६ ॥

देहे तु कस्य च निरीक्षणमात्रभीत-
बालस्य फालनिहितं भसितं शिवाय ।
धाराधरस्य परुषध्वनिनाऽतिभीत-
बालस्य चार्जुनकथाश्रवणं सुखाय ॥ १७ ॥

जो बालक किसीके देखने मात्रसे डर जाय उसके लिये घरमें रखी हुई भस्म पर्याप्त है, जो बालक ऊंचे शब्दको सुनकर डर जाता है उसको अर्जुनकी कथा सुनानी चाहिये ॥ १७ ॥

कटीप्रदेशे घण्टां च कण्ठे मूर्ध्नि करे क्रमात् ।
वचानिम्बेन्द्रवल्लीनां मणीन् बालः सदा धरेत् ॥ १८ ॥

कटिस्थानमें बालकके घण्टेको बांधना चाहिये और कण्ठमें मूर्धामें तथा हाथोंमें क्रमसे वच, नीम, इंद्रजौ इनकी गुलियोंको बांधना चाहिये ॥ १८ ॥

नोद्वेगमस्य जनयेन्नैनं क्वचिदप्यपास्य गच्छेद्वा ।
अन्यस्तनहस्तासनशयनादपि परिहरेदेनम् ॥ १९ ॥

बालकको छोडकर न जावे, बालकको उद्वेगयुक्त न करे और दूसरोंके स्तन, हाथ, आसन और शयनसे दूर करे॥१९॥

पूतीकशुक्तिकापाठामुस्ताक्काथे शृतं घृतम् ।
पञ्चकोलयवक्षारैरामातीसारनुच्छिशोः ॥ २० ॥

पूतीकरंज, शुक्तिका, पाठा, नागरमोथा इनके तथा पिप्पली, पिप्पलमूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इनके कषायसे सिद्ध घृत बालकोंके आमातिसारका नाश करता है ॥ २० ॥

स्तनन्धयस्य बालस्य हिक्का स्याद्यदि वेगिनी ।
मूर्ध्नि वक्षसि चाभ्यङ्गं कृत्वा तृणकणं क्षिपेत् ॥ २१ ॥

दूध पीते हुए बालकके यदि वेगयुक्त हिचकी लग जावे तो मूर्धा और वक्षस्थलपर मालिश करके तिनकेको फेंक देवे॥२१॥

प्रसारिणीकल्ककषायसिद्धं तिलोद्भवं नावनपान-
लेपैः । हिक्कां निजां नाशयति त्रिमासात् पौलस्त्य-
लक्ष्मीमिव रामभद्रः ॥ २२ ॥

प्रसारिणीके कल्क और कषायसे सिद्ध तिलतैलकी तीन

मासतक नस्य लेनेसे तथा पीनेसे तथा मालिश करनेसे हिक्काका नाश हो जाता है जैसे रामचन्द्रजीने रावणकी लक्ष्मीका नाश किया था ॥ २२ ॥

सव्यापसव्ययोगेन जिह्वां दन्ताग्रयोर्बहिः।
प्रवर्तयेदयत्नेन सायं प्रातस्तु वाग्भवेत् ॥ २३ ॥

जिह्वाको प्रातः और सायं दांतोंके बाहिर दक्षिणकी ओर तदनंतर वामकी तरफ फेरनेसे वाणी अच्छी हो जाती है ॥ २३ ॥

महोक्षशृङ्गसंलग्नमृद्गोरोचननिर्मितम्।
तिलकं भूतवेतालकूष्माण्डादीञ्जयेच्छिशोः ॥ २४ ॥

बडे बैलके सींगकी मिट्टीको लेकर गोरोचन मिला बच्चेको तिलक करनेसे, भूत वेताल तथा कूष्माण्डरोगका नाश होता है ॥ २४ ॥

रात्र्युग्राफणिनिर्मोकहिङ्गुनिम्बच्छदैः कृतः।
स्यात्सिद्धोऽयं महाधूपो डाकिन्यादिप्रतिक्रिया॥ २५॥

हलदी, वच, सांपकी कैंचली, हींग, नीम इनसे सिद्ध महाधूप डाकिन्यादिका नाश करता है ॥ २५ ॥

माञ्जिष्ठाद्रिनिशाकुचन्दनवचाहिङ्गुप्रियङ्गुद्रुम-
व्योषारग्वधजीरकारविवराभार्ङ्गीकरञ्जास्थिभिः।

पिष्टैराजजलेन हन्ति रचिता वर्तिः समस्तान् ग्रहान्
स्नानोद्वर्तनपानलेपनविधौ धूमे च संयोजिता ॥ २६ ॥

मंजिष्ठ, दोनों हलदी, चंदन, वच, हींग, फूल प्रियंगू, मघा, मरिच, सोंठ, अमलतास, जीरा, कृष्णजीरा, भारंगी, हरड, बहेडा, आंवला, करंजबीज इनको समभाग बकरीके मूत्रसे पीसकर बत्ती बनाकर स्नान, उवटन, पान, लेपनविधिमें तथा धूमके प्रयोगमें देवे यह बत्ती सम्पूर्ण ग्रहोंका नाश करती है ॥ २६ ॥

ग्रहपीडितबालस्य ष्ठीवनं च क्षणाद्भवेत् ।
कुर्यात्तत्पार्श्वयोः शीघ्रं भेदं वै कंसभाण्डयोः ॥ २७ ॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायां बालचिकित्साधिकारो नाम चतुर्दशः पटलः ॥ १४ ॥

जब बालक ग्रहरोगसे पीडित हो तो वह थूकने लगता है तब शीघ्रही उसके पासमें कांसीके भाण्डेको बजावे ॥ २७ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधनीटीकायां बालचिकित्साधिकारो नाम चतुर्दशः पटलः ॥ १४ ॥

अथ भूतग्रहाधिकारो नाम पञ्चदशः पटलः ।

उषसि पयसि पीतं पुण्डरीकस्य मांसं
　　जयति मनसिजातोपद्रवोन्मादतापान् ।
जनयति तनुपुष्टिं तद्धिमांसादमांसं
　　किमुत बलकरत्वं तस्य सद्योहतस्य ॥ १ ॥

प्रातःकाल दूधके साथ पुण्डरीक (व्याघ्रका नाम है ऐसा मेदिनीमें कहा है) के मांसको पीवे तो मानसिक उपद्रव डकारादि दूर होते हैं और मांसभक्षणसे शरीर पुष्ट होता है, मांसके विना नहीं अगर ताजा मारा हुआ हो तो कितनाही बलकारक होगा ॥ १ ॥

मधुमधुकमागधीनां खर्जूरशतावरीकशेरूणाम् ।
सविदारीणां कल्कः पानादुन्मादमपहरति ॥ २ ॥

शहत, मुलहटी, पिप्पली, खजूर, शतावर, कसेरू और विदारीकन्द इन सबके कल्कको पान करनेसे उन्माद दूर हो जाता है ॥ २ ॥

पुण्ड्रेक्षुकाण्डरेणुस्तु सस्तन्यस्तुल्यशर्करः ।
न्यस्तो घ्राणमुखे सद्यः सर्वोन्मादविनाशनः ॥ ३ ॥

ईख, कुटकी, समभाग दूध और शक्कर मिलाकर नासिकामें डालकर नस्य लेनेसे सब प्रकारके उन्माद नाश होते हैं॥३॥

रेणुः क्षीरेण संयुक्तः कर्णिकारप्रसूनजः।
उन्मादपीडिते नस्यं मात्रया रचितो हितः॥ ४॥

अमलतासके फूलोंकी रजका दूधके साथ नस्य लेनेसे उन्मादका नाश होता है॥ ४॥

द्राक्षाब्दयष्टीमधुकखर्जूराहिमकणाम्भोभिः।
स्तन्यमधुघृतसितेक्षुस्वरसेनोन्मादनाशः स्यात्॥५॥

दाख, नागरमोथा, मुलहठी, खजूर, खस, पिप्पलीमूल, दूध, घी, शहत, मिसरी, ईखके रसके साथ लेनेसे उन्मादका नाश होता है॥ ५॥

साधितं षोडशगुणकूष्माण्डस्वरसे घृतम्।
यष्टिकल्कं प्रगे पीतमुन्मादापस्मृती जयेत्॥ ६॥

१६ गुणा पेठेके रसमें मुलहठीके कल्कके साथ घीको सिद्ध कर प्रातःकाल पीनेसे अपस्माररोगका नाश होता है॥६॥

पानाभ्यञ्जननस्याद्यैः पित्तमत्युल्बणं जयेत्।
धात्रीस्वरसंयुक्तमाज्यं हृच्चक्षुर्बीनवत्॥ ७॥

हय्यङ्गवीनके सदृश आंवलेके रसमें सिद्ध घीको पान करनेसे, मालिश करनेसे, तथा नस्य लेनेसे बढे हुए पित्तका नाश होता है ॥ ७ ॥

ब्राह्मीस्वरसे सिद्धं कुष्ठवचाशंखपुष्पिकागर्भे ।
आजं पीतं सर्पिः सर्वापस्मारदोषघ्नम् ॥ ८ ॥

ब्राह्मीका रस और कुष्ठ, वच, शंखाहुली इनके कल्कसे सिद्ध बकरीके घीको पीनेसे अपस्माररोगका नाश होता है ॥८॥

श्रीवासागरुदारुप्रियङ्गुवंशत्वगोतुविट्कुष्ठम् ।
साज्यं पिष्टमजाया मूत्रेण छायया शुष्कम् ॥ ९ ॥
तैर्धूपो ब्रह्मसहो नाम्नाऽपस्मारराक्षसपिशाचान् ।
भूतग्रहांश्च सर्पान् ज्वरं च चातुर्थकं हन्यात् ॥ १० ॥

सरल, अगुरू, देवदारू, फूल प्रियंगु, बांसकी छाल, बिल्लीकी विष्ठा, कुष्ठ, घी और बकरीके मूत्रसे पीसकर छायामें सुखावे, यह ब्रह्मसह नाम धूप अपस्मार, राक्षस, पिशाचादिकोंका तथा भूत, ग्रह, सर्प और चातुर्थिक ज्वरका नाश करनेमें समर्थ है ॥ ९ ॥ १० ॥

सौभाग्यविहीना या पुष्पपीडिता च या भवेन्नारी ।
यासां मेहो भवति तासां च हितो भवेद्धूपः ॥ ११ ॥

सौभाग्यसे हीन और पुष्पसे पीडित स्त्रीके लिये तथा प्रमेहसे पीडित स्त्रीके लिये यह धूप फलप्रद है ॥ ११ ॥

एतद्धूपविधानैर्मन्त्री मन्त्रं जपेदेतम् ।
मन्त्रोऽत्र द्वितरणये स्वाहेति प्रणवयुक् पूर्वम् ॥ १२ ॥

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः द्वितरणये स्वाहा इस मन्त्रके जपते हुए धूपको बनावे ॥ १२ ॥

सह्य यावद्भवति बहुशस्तापयित्वा सुतापं
स्तन्यं प्रातः सुनिपुणभिषक् पाययेद्भ्रान्तचित्तम् ।
साज्यक्षीरं दशदिनमपि क्षीरमेवं प्रपीतं
स्तन्ये घृष्टं कतकतरुणा पाययेत् स्यात्सुखाय ॥ १३

जितना कि सहारा जावे अनेक वार दुग्धको तपाय लेवें, जिस पुरुषका चित्त ठीक न हो उसे प्रातःकालके समय वैद्योंको दुग्ध पिलाना चाहिये । दशदिनतक घी और दूधको मिलाकर पीनेसे तथा निर्मली दूधमें घिसकर पीनेसे जिस पुरुषका चित्त ठीक न रहता हो उसका चित्त स्वस्थ हो जाता है ॥ १३ ॥

बलांशुमत्योर्द्वन्द्वं च बृहतीगोक्षुरस्य च ।
द्वात्रिंशन्निष्कमेतेषां क्षुण्णं प्रत्येकमाहरेत् ॥ १४ ॥

द्रोणार्धे सलिले क्षिप्त्वा पादशेषे विपाचिते ।
अमृतास्वस्तिकवरीमूर्वाकन्यारसं पृथक् ॥ १५ ॥
कुडवं कुडवं दत्त्वा बिसात्तौङ्गद्रुमात् फलात् ।
कदलकिन्दसाराच्च प्रत्येकं कुडवार्धकम् ॥ १६ ॥

खिरैटी, अंशुमती इन दोनोंको तथा कंटकारी और गोखरू प्रत्येकको ३२ निष्क लेकर १६ सेर पानीमें डालकर पकावे जब कि चौथा भाग शेष रहे, तब गिलोय, लहसन, सतावर, चूरनहार, घीकुआरके रसको पृथक् २ सोलह तोले लेकर डाल देवे और कमलकी नाल, नारियलका फल, केलेकी जड इन प्रत्येकको आठ २ तोले लेलेवे ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

दत्त्वा कल्याणकाख्यस्य घृतस्यौषधकल्ककम् ।
तस्मिन् विशालां हित्वा च हयगन्धां समावपेत्॥१७
क्षीराढकेन विधिवद्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।

---

१ ' वराविशालावृद्धैलादेवदार्वेलवालुकैः । द्विसारिवाद्विरजनीद्विस्थिराफलिनीनतैः ॥ बृहतीकुष्ठमञ्जिष्ठानागकेशरदाडिमैः । वेल्लतालीसपत्रैलामालतीमुकुलोत्पलैः ॥ सदन्तीपद्मकाहिमैः कर्षांशैः ' इति कल्याणघृतकल्कद्रव्याणि ।

उन्मादापस्मृती हन्यात् पित्तमत्युल्बणं तथा ॥
धीमेधास्मृतिकृच्चैव दाहतृष्णाहरं परम् ॥ १८ ॥

इति श्रीकालिदासवैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमायां भूत-
ग्रहाधिकारो नाम पञ्चदशः पटलः ॥ १५ ॥

हरड, बहेडा, आंवला, असगन्ध, बडी इलायची, देवदारु, एलुआ, दोनों सारिवा, दोनों हलदी, पृश्निपर्णी, शालपर्णी, मुषली, तगर, कंटकारी, कुठ, मंजीठ, नागकेशर, अनारदाना, मिरच, तालीसपत्र, इलायची, चम्बेली, कमल, दन्ती, पद्माख, खस इन औषधियोंका कल्क बनाकर पूर्वोक्त घृतमें डाल देवें ८ सेर दूध डालकर विधिपूर्वक १ सेर घृत पकाना चाहिये, यह घृत उन्माद, मृगी, बढे हुए पित्तका नाश करता है, बुद्धि, मेधा, स्मरणशक्तिको बढाता है, दाह तृष्णाका नाश करता है ॥ १७ ॥ १८ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनी-
टीकायां भूतग्रहाधिकारो नाम पंचदशः पटलः ॥ १५ ॥

अथाक्षिकर्णव्रणग्रन्थिचिकित्साधिकारो नाम षोडशः पटलः।

तुत्थस्यातपपक्वस्य गोमूत्रे च रसक्रिया।
कुकूणकादिवर्त्मोत्थरोगराजिविनाशिनी ॥ १ ॥

नीलेथोथेको गोमूत्रमें डालकर धूपमें तपाकर रसक्रिया हो जाती है उसके प्रयोगसे कुकूणक तथा वर्त्मपर होनेवाले नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ १ ॥

अक्षिकूटे कफाकारं छित्त्वा मेदः समुद्धरेत्।
वर्त्मरोगविनाशाय पिल्लादिशमनाय च ॥ २ ॥

अक्षिकूटमें होनेवाली कफयुक्त फुन्सीको फोडकर मेदाको निकाल देवे इस तरह करनेसे वर्त्मरोगका नाश होता है तथा पिल्लादिरोग शान्त होते हैं ॥ २ ॥

विघृष्य करभौ प्रायः स्वेदयेन्नयने मुहुः।
वर्त्मसंजातपिडका नाशमायान्त्यसंशयम् ॥ ३ ॥

हाथोंको मलकर वर्त्मस्थानपर होनेवाली अंजनीपिडकाको स्वेद देनेसे शांति होती है ॥ ३ ॥

नरास्थिचूर्णं स्तन्येन कांस्ये घृष्टं प्रलेपयेत् ।
नयने बहिरन्तश्च कुकूणादिहरं परम् ॥ ४ ॥

मनुष्यहड्डीको दूधके साथ कांसीके बर्तन घिसकर नेत्रके बाहिर और अन्दर लेप करनेसे कुकूणकादि दोषका नाश होता है ॥ ४ ॥

तुत्थाभयाफेनशिरःकपालैर्जम्बीरसारे मसृणं प्रपिष्टैः । वर्तिः कृतास्तन्यविघर्षिता स्यात् पिल्लार्मपूयालसपोथकिघ्ना ॥ ५ ॥

नीलाथोथा, हरड, समुद्रझाग, शिरके कपालमें जम्बीरी नीम्बूके रसमें घिसकर तथा बत्ती बनाकर दूधमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे पिल्ल, अर्म, पूयालस, पोथकिरोगोंका नाश होता है ॥ ५ ॥

त्रिफलाकल्कमध्यस्थं परिदग्धं तुषानले ।
तुत्थं तुषाम्भसा पिष्टं वर्त्मरोगविनाशनम् ॥ ६ ॥

चांवलोंकी भूसीकी आगमें हरड, बहेडा, आंवला इनके कल्कको दग्ध करे और धान्यकी भूसीके पानीमें नीलेथोथेको पीसकर प्रयोग करनेसे वर्त्मरोगका नाश होता है ॥ ६ ॥

पलाशवृक्षक्षतजं ससैन्धवं गौडीपिशाचीक्षुरसेन पिष्टम् ।
क्षौद्रेण चंद्रेण च संयुतं द्राग्विनाशयेद्वर्त्मरुजं महान्तम् ७

पलाशवृक्षकी गोंदको निमक मिलाकर गौडीसुरा तथा सूक्ष्म जटामांसी और ईखमें पीसकर सहत तथा कपूर मिलाकर प्रयोग करनेसे शीघ्रही वर्त्मकी पीडाका नाश होता है ॥७॥

असितपललचूर्णं प्रात्तचिञ्चामयाभ्यां
समधरणघृताभ्यामल्पतीक्ष्णान्विताभ्याम् ।
नरसलिलयुताभ्यां[1] मातुलाभ्यां मुरारे-
र्मसृणतरमपि पिष्टं वर्त्मरुङ्नाशनाय ॥ ८ ॥

काले तिलोंके चूर्णको इमली और कुष्ठ समभाग लेकर और कुछ निमक मिलाकर कांसीके वर्तनमें मनुष्यके मूत्रको पीसकर प्रयोग करनेसे वर्त्मकी पीडाका नाश होता है ॥ ८ ॥

श्वेतपूलासमूलत्वक्कल्कैश्चिञ्चाम्लकेन च ।
व्रणेषु तापरागौ च चिञ्चापुष्पोद्भवैर्जयेत् ॥९॥

श्वेतपूलासकी जडकी वक्कलको इमलीकी खटाईसे कल्कित कर लगानेसे व्रणकी दाह तथा रक्तताका नाश होता है ॥ ९ ॥

---

१ ' कंसाभ्याम् ' इति लक्षणया ग्राह्यम् ।

पिष्टं कंसद्वयाघृष्टं स्तन्ययुक्तं दृगार्तिनुत् ।
काञ्जिकायससंपिष्टं कंसाभ्यां घर्षितं बहिर्लिप्तम् ।
चिञ्चास्थ्यङ्कुरमचिराद्बालस्य कुकूणकं जयति ॥ १० ॥

कांसीके दो बर्तनोंके बीचमें दूधको घिसकर उस दूधको आंखमें डालनेसे आंखकी पीडाका नाश होता है । कांजी, लोह और इमलीके गिटकको कांसीके बर्तनोंमें रगडकर नेत्रके बाहिर लेप करनेसे शीघ्रही बालकके कुकूणकका नाश होता है ॥ १० ॥

अन्तर्बहिर्नयनयोर्गिरिकर्णिकायाः
पुष्पं गवां पयसि पेषितमर्भकानाम् ।
संयोजयेद्दशनजन्मनिदानभूतं
रोगं कुकूणकमपोहति शीघ्रमेव ॥ ११ ॥

अपराजिताके फूलोंको गौके दूधसे पीसकर आंखके अंदर और बाहिर लेप करनेसे बच्चोंके दांतोंके कारण उत्पन्न हुआ कुकूणक रोग शीघ्रही नाश होता है ॥ ११ ॥

मस्तुना सह ताम्रस्थं मधुकं स्यात् कुकूणके ।
सैन्धवं च तथा पथ्यातण्डुल मस्तुघर्षितम् ॥ १२ ॥

दहीके पानीके साथ ताम्बेके बर्तनमें यष्टिमधुको पीसकर

लेप करनेसे कुकूणकका नाश होता है, अथवा निमक और हरड और चांवलोंको दहीके पानीके साथ पीसकर लेप करनेसे भी कुकूणकरोगका नाश होता है ॥ १२ ॥

अत्यन्तपक्ककदलीफलमार्जनेन
दाहास्त्ररागशमनं भवति क्षणेन ।
सीमन्तिनीपयसि मेघरवस्य मूलं
संघृष्य तेन परिषेचनमुत्तमं च ॥ १३ ॥

बहुत पके हुए केलेके फलको धोकर उस पानीसे आंख धोनेसे आंखकी दाह तथा लालीकी शांति होती है अथवा स्त्रीके दूधमें मोरपंखीके मूल पीसकर सेवन करना उत्तम है ॥ १३ ॥

इक्षुमूलमधुकाञ्जनदार्वीलोध्रगैरिकपटुत्रिफला-
नाम् । लेपनं बहिरिदं नयनानां क्षीरपिष्टमपहन्ति
विकारम् ॥ १४ ॥

ईखका मूल, मुलह्टी, रसौंत, दारुहल्दी, लोध, गेरू, लवण, हरड, बहेडा, आंवला इनको दूधसे पीसकर नेत्रोंके बाहिर लेप करनेसे नेत्रविकारका नाश होता है ॥ १४ ॥

---

१. 'भवतीक्षणानाम्' इति पाठांतरम् ।

आतपालोकपीतानां सबाष्पाणां सहोष्मणाम् ।
समेघनादमधुकं स्तन्यं सिञ्चेद्दिनत्रयम् ॥ १५ ॥

जिसमें सूर्यकी किरणें पडी हों और भाप उठता हो तथा गरम हो, चौलाई, मुलहठीके साथ दूधसे तीन दिनतक आंखोंको सिंचन करे ॥ १५ ॥

सबिसं सविदारि सोत्पलंससिताकंसकशेरुचन्दनम् । मधुकेन समं त्वजापयः परिषेकेण दृगामयाञ्जयेत् ॥ १६ ॥

कमलकी नाल, विदारीकन्द, कमल, चीनी, कांस, कसेरु, चन्दन, मुलहठी यह सब समभाग लेकर बकरीके साथ नेत्रोंको सिंचन करे तो नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ १६ ॥

रोहिणीतुत्थकह्लारोत्पलकेसरनिर्मिता ।
दार्वीक्काथेन गुटिका पित्तार्मव्रणनाशिनी ॥ १७ ॥

दूर्वा, नीलाथोथा, कमल, कमलकेसर इनके चूर्णको दारुहल्दीके कषायसे पीसकर गोली बनाले, आंखोंमें प्रयोग करनेसे यह पित्तार्म व्रणका नाश करती है ॥ १७ ॥

त्रिफला मधुकेन संयुता कतकेनापि सदारुरात्रिणा । नयनामयजित् सुसेकतः सलिलं तुङ्गतरोर्विपाचितम् ॥ १८ ॥

हरड, बहेडा, आंवला, मुलहठीसे युक्त तथा निर्मल और दारुहल्दीसे युक्त नारियलके जलमें पकाकर देनेसे नेत्ररोगका नाश होता है ॥ १८ ॥

प्रस्थे पयसि संपक्कं गवां पथ्याचतुष्टयम् ।
आपनं तेन संपिष्टं बहिर्लिप्तं दृगार्तिनुत् ॥ १९ ॥

चार हरडोंको १ सेर गौके दूधमें पकाकर उस दूधसे मरिच पीसकर नेत्रके बाहिर लेप करनेसे नेत्रपीडाकी शांति होती है ॥ १९ ॥

बाष्पस्वेदेन पयसो गवां नेत्रार्तिनाशनम् ।
स्यादेरण्डशिफासिद्धपयसाऽऽश्च्योतनं तथा ॥२० ॥

गौके दूधकी बाष्प (भाप) से आंखको स्वेद देनेसे नेत्रपीडा दूर होती है । अथवा एरण्डकी जडसे दूधको सिद्ध कर उस दूधसे आश्च्योतन करना चाहिये ॥ २० ॥

---

१ आपनं मरिचम् ।

मेघनादशिफासमानतडागशुक्तियुतं पयः ।
सेचितं च निहन्ति तोदमसह्यमाक्षिभवं नृणाम् ॥ २१ ॥

चौलाईकी जडके बराबर तालावमें होनेवाली छोटी सीपको मिलाकर इनसे दूधको सिद्ध कर इस दूधसे नेत्रको सींचनेसे नेत्रकी अत्यंत पीडाका भी नाश होता है ॥ २१ ॥

तत्फलं घृतभर्जितं परिपेषितं निशि क्षिपेत् ।
सव्रणेऽक्ष्णि निर्व्रणं भवति क्षणात्त्रिचतुर्दिनैः ॥ २२ ॥

मेघनाद (पलाश) के बीजोंको घीमें भूनकर पीसकर रातमें आंखमें गेरनेसे व्रणसहित आंख तीन चार दिनमें विना व्रणके हो जाती है ॥ २२ ॥

चिञ्चापत्रस्वरसं पयसा संयोज्य घर्षितं कंसे ।
लिप्तं बहिर्नयनयोः शमयति रागाश्रुतोदसंरम्भान् २३

इमलीके पत्तोंके रसको दूधमें मिलाकर कांसीके वर्तनमें रगडकर आंखके बाहिर लेप करनेसे आंखकी लाली तथा पानीका गिरना और दरदका होना दूर होता है ॥ २३ ॥

---

१ तस्य पूर्वश्लोकस्थस्य मेघनादस्य फलं तत्फलम् ।

कन्यास्वरससंपिष्टा त्रिफला सप्तवारकम् ।
पुनस्तस्याः पुटे स्विन्ना सक्षौद्रा नेत्ररोगहा ॥ २४ ॥

घीकुआरीके रसमें ७ बार हरड, बहेडा, आँवलेको पीसकर फिर उसको पुटमें देवे तदनंतर शहत मिलाकर स्वेद देनेसे आंखोंकी व्याधिका नाश होता है ॥ २४ ॥

बिल्वशठालुकरञ्जफलास्थिव्योषनिशाद्वयशंखपुनर्नवैः। तुत्थमथैभिरियं गुटिका द्राङ्नेत्रगतामयहा जलपिष्टा ॥ २५ ॥

बिल, लोध, आलु (कोंकणदेशमें यह इसी नामसे प्रसिद्ध कन्द है), करंजुएके बीज, मघा, मरिच, सोंठ, दोनों हलदी, शंख, इट्सिट्, नीलाथोथा इसको जलसे पीसकर गोली बना लेवे नेत्रमें डालनेसे शीघ्रही व्याधिका नाश होता है ॥ २५ ॥

दार्वीवल्कलसैन्धवाञ्जनकणातुत्थाब्धिफेनोषणै-
र्यष्टीताम्रसमन्वितैः सुमसृणं क्षौद्रेण पिष्टैः कृता ।
एषा हन्ति रसक्रिया नयनयोः पिल्लादिवर्त्मामयान्
क्षोदस्रावनिशान्ध्यशुक्लतिमिराण्यन्यांश्च नेत्रामयान् २६

दारुहलदीका वक्कल, निमक, रसौत, पिप्पली, नीलातू-

तिया, समुद्रफेन, मरिच, मुलेठी, ताम्बा, शहतसे इनको पीसे। यह रसक्रिया नेत्रगत सम्पूर्ण रोगोंका नाश करती है ॥ २६ ॥

दुग्धपात्रपक्वमर्कबीजमाशु नाशये-
दन्धकारमक्षिसंभवं नृणां सुनिश्चितम्।
तद्वदेव शुक्लपुष्पमुष्टिमूलमप्यलं
ताम्रपात्रघृष्टमम्लकाञ्जिकाच्छवारिणा ॥ २७ ॥

आकके बीजोंको ६४ पल दूधमें पकाकर आंजनेसे मनुष्योंके अन्धेपनेको अवश्य नाश करता है इसी तरहसे कुन्द-वृक्ष और घण्टापाटलीकी जडकोभी तांबेके पात्रमें कांजीसे पीसकर लेप करनेसे नेत्ररोगका नाश होता है ॥ २७ ॥

परिणतनक्तमालतरुवल्करजःकुडवं
कुडवमथोपणस्य लिकुचस्य फलस्वरसम्।
द्विकुडवमाढकेन पयसा च गवां सहितं
दिवसमुखे विशुद्धकलशेऽथ सुसंस्क्रियताम् ॥ २८ ॥

पके हुए करंजवृक्षकी त्वचाका चूर्ण एक कुडव लेकर और एकही कुडव मिरचको लेकर तथा बडहरके फलके रसको २ कुडव लेकर और गौका दूध १ आढक लेकर प्रातःकालही क्षीरपाकविधिके अनुसार पकावे ॥ २८ ॥

अन्येद्युर्बहुशः खजेन मथितात्तस्माद्गृहीत्वा रसं
प्रक्षाल्य प्रबलेन कंसयुगलेनाकार्ष्ण्यभावं शनैः ।
संघृष्येन्दुविमिश्रितं तिमिरजित् स्यादञ्जितं स्व-
ल्पशः सायं सीसशलाकया प्रतिदिनं नाम्ना त्वयं
भास्करः ॥ २९ ॥

फिर दूसरे दिन बहुतबार खज (दूध विलोडनी मथानी) से मन्थन कर तदनंतर उसके रसको लेकर बडे कांसीके दो पात्रोंमें धीरे २ उसकी कृष्णताको साफ कर तदनंतर कपूर मिलाकर तथा पीसकर प्रतिदिन सीसेकी शलाकासे रात्रिको आंजनेसे तिमिररोगका नाश होता है ॥ २९ ॥

पिप्पलदलकुवलयदलमास्येन चर्वणं चिरं कृत्वा ।
दृढधवलाम्बरनिहितं सिञ्चेद्दृशि तिमिरनाशाय ॥ ३० ॥

पीपलके पत्तोंको तथा कमोदनीके पत्तोंको मुखमें चर्वित कर तदनंतर मजबूत और साफ कपडेमें रखकर तिमिररोगके नाशके लिये सिंचन करना चाहिये ॥ ३० ॥

अश्वत्थपत्रकुवलयदलचन्द्रैः कृता गुटिका ।
तिमिरापहा प्रसिद्धा भास्करकिरणावलीव दिवसमुखे ३१

जिस तरह सूर्य भगवान्‌के निकलनेसे अन्धेरा दूर हो जाता है, वैसेही पीपलके पत्ते, कमलके पत्ते और कपूर इससे बनाई हुई गोली तिमिररोग नाश करनेमें प्रसिद्ध है ॥ ३१ ॥

सितगिरिकर्णिकापुष्पान्नन्द्यावर्तस्य पुष्पाच्च ।
स्वरसेन तालवृन्तात् स्त्रीस्तन्येनापि सुमसृणम् ॥ ३२ ॥
दृषदि पिष्टं केशक्षारं मधुना निशया च संयुक्तम् ।
नेत्रे निषिच्य न चिरात्तिमिरार्तो भवेद्भास्वान् ॥ ३३ ॥

श्वेत अपामार्गके पत्तोंको और तगरके पुष्पोंको तालवृन्तके रसके साथ अथवा स्त्रीके दूधके साथ पीसकर और भृङ्गराजके क्षारको शहत और हरिद्रा मिलाकर नेत्रमें सिंचन करनेसे तिमिररोगी सूर्यको देखने लगता है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

चिञ्चास्वरसानिघृष्टं मरिचं सायन्तने तथा साज्यम् ।
आक्षिनिषिक्तं शमयति कण्डूं तिमिरं च वातोत्थम् ३४ ॥

इमलीके रसमें मरिचको घिसकर सायंकाल घी मिलाकर आंखमें डालनेसे वायुसे उत्पन्न कण्डू और तिमिरका नाश होता है ॥ ३४ ॥

यन्मातुलुङ्गपिचुमन्दवराकरञ्ज-
जम्बीरशिग्रुफलबीजरजः प्रगृह्य ।
चिञ्चाफलाम्लरसमर्दितमातपात्त-
स्नेहं जयेत्तिमिरमिन्दुविमिश्रितं द्राक् ॥ ३५ ॥

बिजौरे नम्बू, नीम, हरड, बहेडा, आंवला, करंजुआ, निम्बु और सोहांजनेके बीजोंके चूर्णको लेकर इमलीकी खटाई-से पीसकर धूपमें रखनेसे जो स्नेह निकले उसमें कपूर मिलाकर डालनेसे तिमिररोगका नाश होता है ॥ ३५ ॥

मूलं पालंक्यायाः कृष्णाशंखौ च तुरगगन्धायाः ।
मूलं पृथक् पृथक् स्यान्निष्कं तुत्थं चतुर्निष्कम् ॥
जम्बीरसारपिष्टा गुटिकेयं नेत्ररोगतिमिरहरी ॥३६ ॥
दिनावसाने रुधिरं पलाशादादाय नेत्रे सहसैव दद्यात् ॥ नक्तान्ध्यमाश्वेव विजित्य जीवेच्चन्द्रातपे चाक्षरवाचकः स्यात् ॥ ३७ ॥

पालंक्या (वास्तूकशाकसदृश शाक) के मूलको लेकर पिप्पली, शंख और असगंध पृथक् २ चार २ मासे लेकर

जम्भीरी निम्बूके रससे पीसकर इनकी गोलियां बना लेवे इससे नेत्रोंको आंजनेसे नेत्ररोग दूर होते हैं। सायंकालके समय पलाश (ढाक) से रस निकालकर आंखोंमें डालनेसे नक्तान्धका नाश होता है और पुरुष चन्द्रमाके प्रकाशमें अक्षर पढ सक्ता है ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

खद्योतैः सह भाक्षितं दिनमुखे रम्भाफलं नाशये-
न्नक्तान्ध्यं तिलजोषणाक्षतयुतैः कोशातकीपल्लवैः ।
सिद्धं तद्वदपूपमन्यदपि तज्जम्बूप्रवालान्वितं
स्विन्ना छागशकृत्कणोषणहविःसिद्धा वरिष्ठा तथा२८॥

प्रातःकाल केलेके फलको खद्योत (जुगुनू कीट) के साथ खानेसे नक्तान्धका नाश होता है। तैल, मरिच, चावल और तूरीके पत्तोंसे बनाया पूडा, अथवा तोरीके पत्तोंके स्थानमें जामनके नये पत्तोंको डालकर बनाया हुआ पूडा, तथा बकरीके मेंगने, पिप्पली, मरिच डालकर घृतमें पकाई हुई जो गिलोय अथवा आदित्यभक्ता (सूर्यमुखी) यह योग नक्तांधको नाश करते हैं ॥ ३८ ॥

लूतस्य वृत्तधवलं गृहमाशु किंचि-
द्धृष्टं रसेन तलपोटभवेन (?) पिष्ट्वा ।

कंसद्वयेन महिषीनवनीतयुक्त
पिल्लापहं बहलबाह्यविलेपनेन ॥ ३९ ॥

समुद्रफेनके श्वेत भागको बीचमेंसे लेकर तलपोटके कुछ रससे शीघ्र पीसकर भैंसके मक्खनमें मिलाकर कांसी बर्तनोंमें रखकर आंखके बाहर घनासा लेप लगानेसे पिल्लरोगका नाश होता है ॥ ३९ ॥

पथ्यातुंगजलेनैव पिष्ट्वा स्फटिकजं रजः।
महिषीनवनीतेन कंसघृष्टं तु पिल्लजित् ॥ ४० ॥

हरड और नारियलके जलसेही फिटकरीके चूर्णको पीस-कर तथा भैंसके मक्खनसे कंसको घिसकर लेप करनेसे पिल्ल-रोगका नाश होता है ॥ ४० ॥

घर्माध्वगतसुजातं लवणं संगृह्य पाणिनार्द्रेण।
लिकुचरसक्षौद्राभ्यां कंसे संघृष्य योजयेत् पिल्ले॥४१

घर्माध्वगतसुजातं लवणं (इससे उस लवणका अभिप्राय है जो कि गीली जमीनपर सार्दियोंके दिनोंमें सूर्यकी धूप पडनेसे श्वेतसी वस्तु जम जाती है जिसको कि हम शोरा कहते हैं) उस निमकको गीले हाथोंसे लेकर कांसीके बर्तनोंमें डालकर

बडहरके रस और शहतसे पीसकर बाहिर लेप करनेसे पिल्लरोगका नाश होता है ॥ ४१ ॥

मधुपिष्टो लवणमलो माहिषहय्यंगवीनसमभागः ।
पिल्लजिदाजविषाणं तद्धत्तेनैव लेपितं हपदि ॥ ४२ ॥

नमकके मलको शहतसे पीसकर समभाग भैंसके मक्खनको मिलाकर लेप करनेसे पिल्लरोगका नाश होता है तथा बकरीके सींगकी भस्मको शहतसे पीसकर पूर्वोक्त रीतिके अनुसार प्रयोग करनेसे पिल्लरोगका नाश होता है ॥ ४२ ॥

वर्त्याऽर्कतूलकृतया शशाविट्चूर्णेन पूरितोदरया ।
दीप्ताद्दीपादात्ता मुष्णाति मषी च पिल्लगदम् ॥ ४३ ॥

आककी रुईकी बत्ती बनाकर शशककी विष्ठाके चूर्णसे दी॰कको भरकर जलानेसे इस तरहसे जो बनी हुई भस्म है उसके प्रयोगसे पिल्लरोगका नाश होता है ॥ ४३ ॥

पटुकुनटीवरटीगृहमागधिकाजातिकुसुमरजनिरजः ।
पिल्लं हरेन्निघृष्टं क्षौद्रयुतं कांस्यताम्राभ्याम् ॥ ४४ ॥

लवण, मनासिल, कुसुमबीज, पत्थरफूल, चम्बेलीके फूल, हलदी, इनका चूर्ण बनाकर शहत मिलाकर कांसी और ताम्बेसे रगडे, इसका लेप करनेसे पिल्लरोगका नाश होता है॥४४॥

पोत्रीकरभयोर्दन्तं हृदयास्थि च कुक्कुटात् ।
कौर्मं कपालं स्तन्येन पिष्टं समधु पुष्पहा ॥ ४५ ॥

दश वरसकी हथिनी और बच्चेके दांत लेकर कुक्कडकी हड्डी और दिल तथा कछुवेके कपाल इन सबको दूधसे पीस-कर शहतके साथ डालनेसे आंखका कोला दूर होता है॥४५॥

नयनजनितपुष्पं यक्षदृक्पल्लवस्य
स्वरसमपनयेद्द्राग्वासरान्ते निषिक्तम् ।
सिकततृणकणादीन् पातयत्यक्षिगान् द्राक्
सपदिसुपरिजग्धं तत्र पत्त्रूरमूलम् ॥ ४६ ॥

सायंकालके समय यक्षदृक् (वड) के रससे आंखोंको सिंचन करे तो नेत्रगत पुष्परोगका शीघ्र नाश होता है और शीघ्रही नेत्रमें पडे हुए रेत तिनका वगैरहको शीघ्र निकालकर फेंक देता है, तथा छौंकरवृक्षकी जडको अच्छी तरह शीघ्र पकाकर प्रयोग करनेसेभी नेत्रपुष्पका नाश होता है ॥ ४६ ॥

तृणादिकीटानि तथैव वालुका यदृच्छया नेत्रग-तानि चेत्ततः। क्षणेन निष्ठीवनमुत्तमं विदुः किमौ-षधैः स्तन्यनिषेचनादिभिः ॥ ४७ ॥

अगर दवयोगसे आंखमें तिनका या कीट अथवा रेत गिर पडे तो थोडी देक ठहरकर थूक देवे इसीसे शांति हो सक्ती है तब और औषधियोंकी क्या आवश्यकता ॥ ४७ ॥

अनलेन सुतप्तमृत्सुपिण्डात्स्तनजात्ताज्जनितः सबाष्पयोगः। अभिघातसमुद्भवं विकारं नयनस्याशु विनाशयेदवश्यम् ॥ ४८ ॥

अच्छे गरम मिट्टीके ढेलेपर दूध डालकर जो बाष्प उठे उस बाष्पसे नेत्रको स्वेद दे तो चोट लगी हुई आंखके विकारका शीघ्रही नाश होता है ॥ ४८ ॥

नीरुक्छोफो भवेन्नेत्रे दहेत्सपदि माक्षिकैः।
नवं कपालं कापित्थं मुहुर्लिम्पेत्सनागरम् ॥ ४९ ॥

अगर विना पीडाके आंखपर सूजन हो तो शहतके साथ शीघ्र दाग दे तदनंतर वारम्वार नवीन कपाल कैथ और सुण्ठीका लेप करे ॥ ४९ ॥

तामलकी नेत्ररुजं पिष्टा स्तन्येन ताम्राक्ता।
सैवाक्षिरोगमभिनवमपनयति विलेपनान्मूर्ध्नि ॥ ५० ॥

भूई आंवला और तांबेको दूधसे पीसकर मस्तकपर लेप करनेसे नवीन नेत्ररोगका नाश होता है ॥ ५० ॥

संचूर्णितं तैलसमन्वितं च विघट्टितं माधवमातुला-
भ्याम् ॥ निष्पीड्य वस्त्रेण निषेचनेन पटुः पटु[1]
स्यान्नवनेत्ररोगे ॥ ५१ ॥

लवणके साथ तैल मिलाकर कांसीके बर्तनोंसे पीसकर वस्त्रसे छानकर नेत्रको सिंचन करनेसे नवीन नेत्ररोगका नाश होता है ॥ ५१ ॥

नवनवनीतसनाथं कल्कं कृष्णारिमेदपत्रोत्थम् ।
बहिरालेपेन जयेदर्मादीनश्रुतोदशोफाढ्यान् ॥ ५२ ॥

पिप्पली, इरिमेद, तजपत्र इनका चूर्ण कर तथा नवीन मक्खनके साथ कल्क बनाकर नेत्रके बाहिर लेप करनेसे अर्म-रोग तथा नेत्रमेंसे पानी गिरना और सूजनका नाश होता है॥५२॥

वासादलकाञ्जिकया वासः पीतो दृशि स्पर्शात् ।
अर्माश्रुतोदकण्डूरागोच्छूनादिजित्सहसा ॥ ५३ ॥

अडूसेके पत्तोंसे निर्मित कांजीके पीनेसे तथा नेत्रोंको स्पर्श करनेसे शीघ्रही नेत्रगत रोगोंका नाश होता है ॥ ५३ ॥

मरिचतैलमहौषधदुग्धमित्युभयमर्पितमक्षिण पृथक्

---

१ 'पटु समर्थम्'।

पृथक् । कफमरुद्भवनेत्रविकारान्मदनबाणविकार-
मिवात्मवान् ॥ ५४ ॥

मिरच, तेल, सोंठ, दूध पृथक् २ इनमेंसे दोनों नेत्रोंमें डालते रहें तो कफ और वायुसे उत्पन्न नेत्ररोगका नाश होता है जैसे आत्मज्ञानी पुरुषसे मदनबाणका नाश होता है ॥ ५४ ॥

निशास्वरससंसिक्तचेलप्रवणपाणिना ।
परामृशेदभिष्यन्दजातमश्रुं मुहुर्मुहुः ॥ ५५ ॥

हल्दीके रससे कपडेको भिगोकर लगानेसे अभिष्यंदरोगके कारण वारम्बार आते हुए नेत्रजलका रोध होता है ॥ ५५ ॥

तुत्थमामलकफलत्वङ्मरिचं श्रुतिसागरेन्दुसमभागम् ।
जम्बीररसेन पिष्टं सक्षौद्रं चक्षुषोर्जयेद्रोगम् ॥ ५६ ॥

नीलाथोथा, आंवले फलकी त्वचा, मिरच, समुद्रझाग, कपूर समभाग मिलाकर जम्भीरी नीम्बूका रस और शहतके साथ पीसकर डालनेसे नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ ५६ ॥

मरिचं श्वेतपूलासं हंसपादी च तुत्थकम् ।
एकद्वित्रिचतुर्भागं निमिना गुप्तभाषितम् ॥
चिञ्चापत्ररसे पिष्टा सर्पाक्ष्यक्ष्यामयापहा ॥ ५७ ॥

मरिच एक भाग, सफेद पूलास दो भाग, हंसपदी ३ भाग और नीलाथोथा ४ भाग इमलीके पत्तोंके रसमें पीसकर लेप करनेसे नेत्ररोग दूर होते हैं यह निमिसे कहा हुआ गुप्त योग है। इमलीके पत्तोंके रसमें नाकुलीको पीसकर लेप करनेसे नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ ५७ ॥

कदलीमूलगृञ्जनयुगलार्द्रकलशुनकन्दसंभूतम् ।
अम्बु निहन्ति कदुष्णं कर्णरुजं कर्णपूरणतः ॥ ५८ ॥

केलेकी जड, गाजर, दोनों प्रकारकी अदरक, लहसन इनसे सिद्ध जल कुछ गरम २ कानमें डालनेसे कानकी पीडाको दूर करता है ॥ ५८ ॥

बर्बरीमूलनिर्यूहे छागमूत्राम्भसाऽपि च ।
त्रिसिन्धुरादिभिर्दध्ना तैलं सिद्धं स्रुतिं जयेत् ॥ ५९ ॥

वनतुलसीके क्काथमें और बकरीके मूत्रमेंभी सैंधव तथा सुवर्चल और बिडनमक तथा दहीको मिलाकर इनसे सिद्ध तैल कानमें डालनेसे कर्णस्रावको दूर करता है ॥ ५९ ॥

कृतमालफलत्रिशूलिपादैः स्वरसे तस्य च दुग्ध-
सार्धसिद्धम्। तिलजं श्रुतिशूलपूयकण्डूक्रिमिजालं
विनिहन्ति शीघ्रमेव ॥ ६० ॥

अमलतास त्रिशूली पादोंसे रसमें और उसको दूधके साथ मिलाकर तैलको सिद्ध कर इस तैलको कानोंमें डालनेसे कानकी पीडा, पीप, खुजली तथा क्रिमियोंका नाश होता है ॥६०॥

चिञ्चाफलस्वरससाधिततैलमग्र्यं
जम्बीरनीरशृततैलमपि प्रशस्तम् ।
भूनागसर्जशृततैलमतीव शस्तं
कर्णे सशूलिनि रहस्यपराङ्मुखे च ॥ ६१ ॥

१ इमलीके फलके रससे सिद्ध तैलभी कर्णरोगके लिये हितकर है। २ जंबीरी नींबूके रसमें सिद्ध तैलभी गुणकारी है। ३ गंडूपदी और रालसे सिद्ध तैल तो अत्यंत हितकारी है। शूलयुक्त कर्णके लिये यह गुप्त रहस्ययुक्त प्रयोग कहे गये हैं॥६१॥

वामे पाणौ गृहीत्वा सतिलजलवणान्यर्कपत्राणि
वैद्यः सोपानोत्सेधरूपं हुतवहहतया लोहयष्ट्या
च दीर्घम्। कर्णे नीत्वा तदुत्थैर्जलकणनिकरैः
पूरयेत्कर्णशूले हाहेत्युक्त्वा प्रधावन्त्यहमहमिकया शेषरोगाश्च तत्स्थाः ॥ ६२ ॥

तेल और लवणसे युक्त आकके पत्तोंको वैद्य बायें हाथमें

लेकर और एक लोहेकी कडछीको गरम कर उसमें डाल दे तदनंतर इस तरहसे जो आकके पत्तोंका रस निकले उसे कानमें डालनेसे हा हा करते हुए सम्पूर्ण कर्णरोग मैं पहले मैं पहले यों सभीके सभी कर्णरोग दूर हो जाते हैं ॥ ६२ ॥

तैलं दुग्धं पयो वापि संशृतं श्रवणे क्षिपेत् ।
सपूयपूतीन् जन्त्वादीन् जयेदार्कमथापि वा ॥ ६३ ॥

तेल, दूध अथवा पानी पकाकर कानोंमें डालनेसे दुर्गन्धियुक्त कर्णस्रावभी तथा कर्णक्रिमिका भी नाश होता है, तथा आकके दूधको डालनेसे भी इसी तरह गुण होता है ॥ ६३ ॥

लिकुचफलेऽल्पं लवणं निक्षिप्य विघृष्य तत्स्वरसम् ।
त्रिदिनं श्रवसि विदध्याच्छूलं पूयं च नाशयति ॥ ६४ ॥

बडहरके रसमें थोडासा लवण डालकर तथा पीसकर उसके रसको ३ दिनतक कानमें डालनेसे कर्णस्राव और शूलका नाश होता है ॥ ६४ ॥

माहिषीनवनीतेन जलौकाहयगन्धयोः ।
चूर्णं संमिश्र्य संपक्वं पीतं कर्णं विवर्धयेत् ॥ ६५ ॥

जोक, असगन्ध इनके चूर्णको भैंसके मक्खनके साथ मिलाकर तथा पकाकर पीनेसे कान बढ जाते हैं ॥ ६५ ॥

महिषीनवनीतयुतं गोशृङ्गवचाश्वगन्धबहुमूलम् ।
दिनकरतप्तं कुर्यादंसस्थलल्लम्बिनौ कर्णौ ॥ ६६ ॥

गोशृंग (बबूरका वृक्ष), वच, असगंध, सोहांजना इनके चूर्णको भैंसके मक्खनमें मिलाकर धूपमें रखकर मलनेमे कान स्कन्धोंतक लम्बे हो जाते हैं ॥ ६६ ॥

कबरीशुष्कलांगूलवासितं तिलजं शिशोः ।
कर्णस्रावं जयेत्तूर्णं कुलीरवसया यथा ॥ ६७ ॥

जिस प्रकार कि कुलीरकी वसासे कर्णस्रावका नाश होता है, उसी प्रकार वनतुलसीका सूखा लांगूल तैलमें डालकर रख छोडे और उस तैलको कानमें डालनेसे कर्णस्राव दूर होता है ॥६७॥

कटुत्रयसमानांशा व्रणघ्नी पीनसापहा ।
कषायचूर्णलेह्याद्यैः सेविता निशि सादरम् ॥ ६८ ॥

मघा, मरिच, सोंठ इनको समभाग लेकर इनका क्वाथ कर तथा चूर्ण बनाकर या अवलेह बनाकर रातको प्रयोग करनेसे व्रणोंका तथा पीनस (जुकाम वगैरह) का नाश होता है ॥६८॥

---

१ ' शुण्ठीमरिचकृष्णाभिस्तुल्याभिः साधु योजितम् । समीरितं भिषक्श्रेष्ठैस्त्र्यूषणं च कटुत्रयम् ॥ '

मण्डूकपर्णीमरिचकुलत्थैः साधु साधितः ।
कषायः पीनसार्तिघ्नः कोष्णाम्बु पिबतां नृणाम् ॥ ६९ ॥

मण्डूकपर्णी, मिरच, कुलथी इनसे सिद्ध किया कषाय पीनसका नाश करता है और पीनसरोगसे युक्त मनुष्योंको उष्ण जलका प्रयोग करना चाहिये ॥ ६९ ॥

दुग्धार्कपत्रभूतिर्महिषीनवनीतमिश्रिता लिप्ता ।
दन्तच्छदजातानां रोगाणां नाशने शस्ता ॥ ७० ॥

दुग्धयुक्त आकके पत्तोंकी भस्म भैंसके मक्खनमें लेप करनेसे ओष्ठगत रोग दूर होते हैं ॥ ७० ॥

हिमाम्बुपरिपातेन संजातमधरव्रणम् ।
निशि प्रशमयेन्नाभिस्तैलेन परिपूरि[illegible] ॥ ७१ ॥

शीतजलके ओष्ठोंपर गिरनेसे ओष्ठ फटे जावें तो रात्रिको नाभिमें तैल डालना चाहिये इस तरह करनेसे ओष्ठगत व्रण दूर होते हैं (यह बहुत वार अजमाया हुआ है) ॥ ७१ ॥

चूर्णं हरितमञ्जर्याः सविश्वं श्लक्ष्णमर्दितम् ।
अन्तर्बहिश्च तद्वक्त्रं लिम्पेद्दन्तरुजापहम् ॥ ७२ ॥

हरितमंजरीके चूर्णको सोंठके साथ मिलाकर अच्छी तरह

खरल करलें तदनंतर दांतोंकी पीडाकी शांतिके निमित्त इससे अंदर और बाहिर लेप करे ॥ ७२ ॥

बकुलजटाजिनकल्कः पयसा पीतः प्रगे त्रिदिनम् ।
दृढतरमूलान्कुरुते दन्तान्वृद्धस्य किमुत बालानाम् ॥७३

मौलसिरी, जटामांसी, पेचक इनका कल्क बनाकर तीन दिनतक प्रातःकाल पानीके साथ पीनेसे वृद्ध मनुष्योंके दांतभी अच्छे मजबूत हो जाते हैं तो बालकोंका तो क्याही कहना॥७३॥

बाणपुंखशिका क्षुण्णा दन्तमूले श्रिता जयेत् ।
दन्तरोगांस्तु यावत् प्राग्दन्तधावनमन्वहम् ॥ ७४ ॥

शरपुंखाकी जडको पीसकर दन्तमूलमें रखनेसे दांतके सम्पूर्ण रोगोंका नाश होता है । प्रातःकाल प्रतिदिन पहिलेही दन्तधावन करना चाहिये ॥ ७४ ॥

गाढताडनविलुप्ततण्डुलैस्तुल्यभागलवणं मुखोदरे ।
धारयेद्दिनमुखे मुखामयं वासरत्रितयसेवितं जयेत् ७५

चांवलोंको अच्छी तरह पीसकर समभाग लवण मिलाकर तीन दिनतक मुखमें रखनेसे मुखके रोगोंका नाश होता है॥७५॥

निष्ठीवेद्विष्ठिते मोहात्तच्च कण्ठरुजापहम् ।
गोमये ष्ठीवनं कुर्यात्तत्र मुस्तां च भक्षयेत् ॥ ७६ ॥

मुखमें थूकको रखकर फेंकनेसे कण्ठकी पीडाका नाश होता है । गोबरपर थूके और नागरमोथाको खावे ॥ ७६ ॥

मूलं पराजितायाः समरिचमास्यस्थमाशु शूलहरम् ।
तद्दलमपि दिवसमुखे कुवलयमपि बोधिपत्राख्यम् ॥ ७७

विष्णुक्रान्ताकी जडको मिरचके सहित मुखमें रखनेसे मुखकी पीडा शीघ्र दूर होती है, उसके पत्तोंको भी तथा नील-कमल और पीपलके पत्तोंको भी प्रातःकाल मुखमें रखनेसे मुखकी पीडा दूर होती है ॥ ७७ ॥

सह शुण्ठीपूगफलैर्वा मरिचगोमूत्रनालिकेरजलैः ।
क्वथितैरधिजिह्वादीन् कवलो विहितः प्रणाशयति ७८

नेत्र धोनेसे पूर्व गण्डूष (कुल्ला) करना चाहिये, मुखकी लूताके नाशके लिये चम्बेलीके जलसे तीन दिनतक गण्डूष करना चाहिये ॥ ७८ ॥

नेत्रप्रक्षालनात् पूर्वं प्रातर्गण्डूषधारणम् ।
आस्यलूताविनाशाय केतकं ष्ठीवयेत्र्यहम् ॥ ७९ ॥

सोंठ, सुपारी अथवा मिरच, गोमूत्र और नारियलके जलसे क्वाथ कर कवल करनेसे मुखके अधिजिह्वादि रोगोंका नाश होता है ॥ ७९ ॥

आस्यस्पृष्टं ग्रासमाज्येन मिश्रं रात्रौ दद्यान्मद्य-
पायी त्रिरात्रम् । लूतं हन्यादास्यजं यत्र यत्र
प्रादुर्भूतं तत्र तत्रैव तद्वत् ॥ ८० ॥

मद्य पीनेवाले मनुष्यके मुखसे रोटीके टुकडेको स्पर्श कर घृतसे मिलाकर जहां २ लूत हो उस २ स्थानमें रात्रिमें तीन दिनतक लगावे ॥ ८० ॥

गण्डीराख्यज्वलनहपुषाबाणपुंखाङ्घ्रिवाण-
शौण्डीमूलैः समभिति समैर्विश्वमेषां कषाये ।
सिद्धं तैलं वदननिहितं वक्त्ररोगानशेषा-
नेलाशुण्ठीमगधमरिचोद्भूतकल्कं निहन्ति ॥ ८१ ॥

गण्डीरशाक, चित्रक, हौवेर, शरपुंखाकी जड, झिण्टी, पिप्पलामूल समभाग सभी लेकर तथा इन सबके बराबर सोंठ ले इनका कषाय करे तथा इलायची, सोंठ, पिप्पली, मरिच इनके कल्कसे सिद्ध तैल सम्पूर्ण मुखके रोगोंका नाश करता है ॥ ८१ ॥

सर्पिस्तु नासि विन्यस्तं मधुकेन समायुतम् ।

हन्याच्छिरोर्तिं स्वेदो वा पायसान्नेन मूर्धनि ॥ ८२ ॥

घी और शहत मिलाकर नस्य लेनेसे शिरकी पीडाका नाश होता है अथवा पायसान्न (आठ भाग दूध १ भाग चावल पककर आठवां भाग रह जावे तो उतार ले न तो बहुत गाढा न पतला हो उसे पायसान्न कहते हैं) से स्वेद देनेसे शिरःपीडा दूर होती है ॥ ८२ ॥

मरिचस्य हरिद्रायाः शुण्ठ्या वा रेणुभिः कृता गुलिका।
तैलाक्ता संलिप्ता ललाटपट्टे शिरोरुजं हन्यात् ॥ ८३ ॥

मरिच, हरिद्रा, सोंठ इनके चूर्णसे गोली बनाकर तेलसे घीसकर माथेपर लगानेसे शिरकी पीडा दूर होती है ॥ ८३ ॥

वातपित्तजनितं शिरोरुजं नाशयेन्मधुककल्कसा-
धितम्। नालिकेरपयसा शृतं त्विदं तैलमर्दितहरं
च नावनात् ॥ ८४ ॥

वात पित्तसे उत्पन्न शिरःपीडा नारियलके जलसे और मुलहठीके कल्कसे सिद्ध किये तैलसे अर्दितका नाश होता है ॥८४॥

---

१ 'अष्टावशिष्टे क्वथनात् क्षीरेऽष्टांशांश्च तण्डुलान्। पचेन्नातिद्रववनं पायसान्नमिदं स्मृतम् ॥'

सकृदाघ्राति विश्वोग्राभस्मजातरजांसि यः ।
शिरस्तोदभवं दुःखं न जानात्येव निश्चितम् ॥ ८५ ॥

सोंठ, वच इनकी भस्म कर तथा चूर्ण बनाकर सूंघनेमे शिरकी पीडा दूर होती है ॥ ८५ ॥

सूर्यावर्ते नस्यं कुर्यात्स्तन्येन विश्वयुक्तेन ।
अथवा तस्यागमने भुञ्जीत षड्रसोपेतम् ॥ ८६ ॥

सूर्यावर्तरोगमें दूधसे सोंठ मिलाकर नस्य लेवे अथवा सूर्यके उदयके समय ६ रसोंसे युक्त भोजन करना चाहिये ॥ ८६ ॥

हिममधुकमधूकसेव्यगर्भं भुजगलतारससाधितं तिलोत्थम् । शिरसि रुजमपाकरोति कण्डूं कच-शातनं च करोति हस्तकेशम् ॥ ८७ ॥

कपूर, मुलहटी, मौआ, खसखास इनका कल्क और नागवल्लीके रससे सिद्ध तिलतैलको शिरपर लगानेसे शिरकी पीडा दूर होती है, खुजली तथा बालोंका गिरना दूर होता है और हाथपर बाल उत्पन्न हो जाते हैं ॥ ८७ ॥

वरायाः क्वाथसंसिद्धक्षीरोत्थदधिसाधितम् ।
सर्पिर्मधुकसंसिद्धं नस्याद्धे मूर्धरोगजित् ॥ ८८ ॥

हरड, बहेडा, आँवला इनके काथसे सिद्ध दूधकी दहीसे मुलहठीके चूर्णसहित घृतको पका लेवे, इस घृतकी नस्य लेनेसे मूर्धाके रोग दूर होते हैं ॥ ८८ ॥

कर्दमे निखनेत् केशान् तत्क्षणं शिरासि च्युतान् ।
डुण्डुकीकृत्य (?) सुस्निग्धकेशभारभरो भवेत् ८९
जित्वेन्द्रलुप्तं रोमाणि जनयेद्भृङ्गजो रसः ।
चिञ्चामलकयोश्चापि काललोहसमन्वितः ॥ ९० ॥
अङ्कोलबीजं द्वात्रिंशत्पलं सम्यक् पचेज्जले ।
द्विद्रोणे पादशेषे तु तैलं तत्पातितं क्षिपेत् ॥ ९१ ॥

शिरसे गिरे हुए बालोंको उसी क्षण कीचडमें गाड दे फिर उसकी डुण्डुकी (जोडी) करे तब यह केश स्नेहयुक्त और भारे हो जाते हैं इनको भांगरेके रसके साथ मिलाकर लेप करनेसे इन्द्रलुप्तका नाश होता है और रोम उत्पन्न हो जाते हैं। इमली और आँवलोंके रससे युक्त कृष्णलोह और १२८ तोले अंकोठके बीज लेकर ६४ सेर पानीमें भली भांति पकावे जब चौथा हिस्सा रह जावे तब तेलको डाले ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥

प्रस्थोन्मितं वराक्काथे काललोहसमन्वितम् ।
कालारिमेदसंभूतक्काथप्रस्थेन योजयेत् ॥ ९२ ॥
इन्द्रवल्लीबकुलयोः कुमारीभृङ्गराजयोः ।
चिञ्चामलकयोश्चापि मालतीनालिकेरयोः ॥ ९३ ॥
स्वरसं केतकाच्चैव कल्कं दत्त्वा पचेत् पुनः ।
बिभीतकास्थिसंभूतं कुडवं कुडवं तथा ॥ ९४ ॥
गणादेलादिकाच्चैव, तदभ्यंगे सुयोजितम् ।
केशानां दीर्घकृष्णत्वं करोति च निहन्ति च ॥ ९५ ॥
पीतत्वं पिञ्जरत्वं च पलितं चेन्द्रलुप्तकम् ।
अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं केशजन्मनि पूजितम् ॥९६॥

तदनंतर त्रिफलाके क्काथमें कृष्णलोह एक सेर डालकर अगुरु, इरिमेद इनके क्काथसे भी योजना दे, सोमलता, बकुल-पुष्प, घीकुआरी, भाङ्गरा, इमली, आंवला, चम्बेली, नारियल तथा केतकीके स्वरससे और ३२ तोले भर बहेडेकी गुठलि-योंके कल्कसे तथा ३२ तोले एलादिगण (छोटी तथा बडी

---

१ ' एलायुग्मतुरुष्ककुष्ठफलिनीमांसाजिलध्यामकं स्पृक्काचोरकचोचपत्रतगरस्थौणेयजातीफलम् । शुक्तिर्व्याघ्रनखोऽमराह्वमगरुः श्रीवासकं कुंकुमं चण्डागुग्गुलुदेवधूपखपुराः पुन्नागनागाह्वयम् ॥ ' इत्येलादिगणः ।

इलायची, शिलारस, कुष्ठ त्रायमाणा, जटामांसी, रोहिषतृण, असवरग, धनहर, दालचीनी, तजपत्र, तगर, ग्रन्थिपर्णी, जायफल, सीप, व्याघ्री, नख, गिलोय, अगुरू, सिह्लक, रक्तचंदन, केसर, इमली, गुग्गुल दो भाग, खपुरवृक्ष, चंदन, नागकेशर इत्यादिगण है) से डालकर सिद्ध किये तैलकी मालिश करनेसे केशोंको लम्बा तथा काला करता है, पीतता, पिञ्जरता, पलित और इन्द्रलुप्तका नाश करता है। यह केशोंके उत्पन्न करनेके निमित्त अश्विनीकुमारोंने निर्माण किया है ॥ १२ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

पुराणभित्तौ सलिलं मुहुः क्षिपन् प्रमर्दयित्वा परिगृह्य तन्मृदम्। प्रलेपयेदङ्कुरकामुके व्रणे ह्युपोदकीं वा सघृतां जटीं वा ॥ १७ ॥

पुरानी भित्तीपर बार बार जल सिंचन कर वहांसे मिट्टीको खोद ले उससे व्रणके अंकुरोंको लेप करें अथवा पोईका शाक और कचूरको घीके साथ मिलाकर लेप करे ॥ १७ ॥

---

१ ‘सठीं’ इति पाठांतरम्।

व्रणेषूत्पित्सुषु सदा लालां सिञ्चेन्मुहुर्मुहुः।
कुष्ठेष्वपि जगत्यस्माद्विद्यते न महौषधम्॥ ९८॥

उत्पन्न होते हुए व्रणोंमें वार वार थूकको लगावे, कुष्ठमें बढकर जगत्‌में इसके लिये औषधी नहीं॥ ९८॥

वराटीगेहसंयुक्तं सुगन्धासर्पगन्धयोः।
मूलं तैले विपक्वं स्यादुत्पित्सुव्रणनाशनम्॥ ९९॥

भिरडके गृहको, दारुहरिद्रा, सर्पगन्धाके मूलको तैलमें पकाकर लगानेसे उत्पन्न होते हुए व्रणका नाश होता है॥९९॥

द्रुतजातमतिसुकठिनं नाशयति व्रणं चिरन्तनं चापि।
स्विन्नं विमृज्य लिप्तं स्नुक्पत्रं पञ्चभिर्दिवसैः॥ १००॥

थोहरके पत्तेको गरम कर उसके रससे पांच दिनतक लेप करे तो शीघ्र उत्पन्न अतिकठिन अथवा देरसे हुए व्रणकाभी नाश करता है॥ १००॥

तिलारनालक्वथिता कुमारी पाचयेद्व्रणान्।
केवलाऽथ कुमारी वा पक्वापक्वविशङ्कितान्॥ १०१॥

तिल और कांजीसे क्वाथ किये हुए घीकुआरीके रसको

---

१ 'लिम्पेत्' इति पाठांतरम्।

पकाकर पक्क अपक्ककी शंका है जिनमें उन व्रणोंमें लगावे अथवा केवल घीकुआरीके रससे पकावे ॥ १०१ ॥

आमे वा पच्यमाने वा पक्के वा कन्यकां व्रणे ।
स्विन्नां विनिर्गतान्त्रां च निक्षिपेत्संप्रणश्यति ॥ १०२ ॥

कच्चे व्रणमें तथा पकते हुए व्रणमें अथवा पक्क व्रणमें घीकुआरके तन्तुओंको निकालकर गर्म करके लगानेसे व्रणका नाश होता है ॥ १०२ ॥

कैडर्यस्वरसे सिद्धं तन्मूलच्छदरात्रिभिः ।
तिलतैलं निहन्त्याशु व्रणान् दुर्गन्धदुर्जयान् ॥ १०३ ॥

कायफलके रसमें कायफलकी जड और हलदीके कल्कसे तिलको सिद्ध कर लगानेसे दुर्गन्धयुक्त व्रणका भी नाश होता है ॥ १०३ ॥

तदहः पतितैः पत्रैरश्वत्थोत्थैरशोषितैः ।
संचूर्णितैर्निपिष्टैश्च लेपेनाशु जयेद्व्रणम् ॥ १०४ ॥

विना सूखे पीपलके पत्तोंको पीसकर उसको निचोडकर उसके रसको लगानेसे शीघ्र ही व्रणका नाश होता है ॥ १०४ ॥

परिणतपरिशुद्धं पत्रसंघं कदल्याः
प्रहरति परिकोथोद्भूतपूयं व्रणानाम्।
उपनहविधिना वा लेपयेद्दोषहीनं
तिलजमपि विपक्कं क्षुद्रनाथस्य (?) पत्रैः॥ १०५

पके हुए केलेके पत्तोंको तिलतैलमें पकाकर लगानेसे सडा हुआ दुर्गन्धयुक्त व्रणभी नाशको प्राप्त होता है अथवा क्षुद्रनाथके पत्तोंसे तिलतैल पकाकर दोषरहित व्रणको लगावे॥ १०५॥

स्वरसे मूत्रे च शृतं लिकुचनिशाभ्यां च सुरभिपुरुपाभ्याम्। तैलं लवणांशयुतं व्रणशुद्धिं विरोपणं च तत् कुरुते॥ १०६॥

बडहर, हलदी, गंधक, पुन्नाग इनके कल्क तथा इनके रस और गोमूत्रमें कुछ लवण मिलाकर तैलको पकावे उसके लगानेसे व्रणकी शुद्धि होती है और व्रण भर जाता है॥१०६॥

तिन्तिण्यङ्कोलधत्तूरपुनर्नवशिफान्वितैः।
धान्याम्लक्काथितैः पूर्वं स्वेदयेत्तिलजैर्व्रणम्॥ १०७॥

इमली, अंकोठ, धतूरा, इटसिट्की जड इनका कांजीसे क्काथ कर तदनंतर तिलतैल पकाकर उससे पहले व्रणको स्वेद दे॥ १०७॥

हरिद्राधातकीमूलत्वक्कृष्णामरिचोद्भवैः ।
चूर्णैर्युक्तं भवेत्तप्तं व्रणे तान्तवसंयुतम् ॥ १०८ ॥

हलदी, धावेकी जड तथा त्वचा पिप्पली मिरच इनके चूर्णको गरम कर कपडेसे संयुक्त कर व्रणपर बांधनेसे भी व्रणका नाश होता है ॥ १०८ ॥

निक्षिपेद्बहुशस्तैलं व्रणा रोहन्ति निश्चितम् ।
जीर्णं च नालिकेरस्य तैलं हन्याद्व्रणं द्रुतम् ॥ १०९ ॥

बहुत वार तैलके लगानेसे व्रण भर जाते हैं और पुराने नारियलके तैलको लगानेसे व्रणका नाश होता है ॥ १०९ ॥

तत्क्षणपतितं कोष्णं गवां करीषं व्रणं हन्यात् ।
सुनिषण्णकल्ककलेपस्तद्वत् स्याच्छाकिनी च पटुयुक्ता ११०

तत्क्षण किये हुए गौके गोबरको व्रण पर लगानेसे व्रण दूर होते हैं । चौपतियेके कल्कसे लेप करनेसे अथवा शाकिनीके कल्कसे भी व्रणका नाश होता है ॥ ११० ॥

भूधात्रीमूलसिद्धं पयसि तिलभवं लेपनेनाशु हन्या-
द्दुष्टं स्रावाढ्यमुग्रं व्रणमणुसुचिरं दीर्घकालानुषक्तम् ।

१ श्लोकद्वयमेतन्न दृश्यते केषुचित् पुस्तकेषु । २ 'चाङ्गेरीसदृशैः पत्रैः निसुषण्णश्चतुर्दलः । शाको जलान्विते देशे चतुष्पत्रीति कथ्यते ॥'

दुग्धं न्यग्रोधवृक्षोद्भवमपि निहितं जन्तुजालं व्रणेषु
प्रातर्मध्यंगतेऽर्के दिवसपरिणतौ चाप्तशास्त्रोक्तमे-
तत् ॥ १११ ॥

भूईऑवलाकी जडको पानीमें तिलके तेलको सिद्ध कर लगानेसे दुष्ट तथा बहुत स्रावयुक्त तथा बहुत देरसे हुआ व्रणका नाश होता है। अथवा बडके दूधको प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकालके समय जन्तुओंसे युक्त व्रणमें लगावे यह आप्तोंने कथित है ॥ १११ ॥

व्रणहानत्कमरिचैरेकार्धचरणांशकैः।
क्षुण्णैर्भास्करसंतप्तं तैलं सर्वव्रणप्रणुत् ॥ ११२ ॥

एरण्ड, हलदी, मरिच क्रमसे एक, आधा और चौथा हिस्सा लेकर पीसकर धूपमें गरम किये हुए तैलमें मिलाकर लगानेसे सब व्रणोंका नाश होता है ॥ ११२ ॥

स्तन्येन मसृणं पिष्टं पुष्पकुंभलपल्लवम्।
दुष्टव्रणेषु सर्वेषु युञ्ज्यादेरण्डसंभवम् ॥ ११३ ॥

अलसीको तथा कमलके फूल और पत्तोंको दूधसे पीसकर एरंडके तैलमें मिलाकर लगानेसे दुष्ट व्रणका नाश होता है॥ ११३॥

प्रणाशयेत् समं चैलं तैलाभ्यक्तं व्रणेऽर्पितम् ।
यामादभ्यक्तमुद्धृत्य भित्तौ लग्नं तु रोपयेत् ॥ ११४ ॥

व्रणके बराबर कपडेका फोया बनाकर उसको १ याम-पर्यन्त तैलमें डाल छोडे तदनंतर उसे निकालकर कीलपर टांगदे जब निचुड जाय तो व्रणपर बांध दे तोभी व्रणका नाश होता है ॥ ११४ ॥

कुष्ठोद्भवं व्रणमपोहति शीघ्रमेव
कर्पूरतैलमसकृत् पिचुना निषिक्तम् ।
सारुष्करं तिलमहर्मुखभक्षितं च
भक्तिर्यथा तिमिरवैरिपदार्पिता तम् ॥ ११५ ॥

कपूरके तेलको निरंतर कपडेके फोयेसे लगाता रहे तो कुष्ठसे जनित व्रणभी शीघ्र दूर होता है अथवा भिलावोंके साथ तिलोंके खानेसे इस तरहसे मनुष्य छूट जाता है, जैसे परमात्माकी भक्ति करनेसे अज्ञानसे छूट जाता है ॥ ११५ ॥

प्रतप्य संचूर्ण्य तिलोद्भवान्विता पुराणकुष्ठव्रणहा हरीतकी । तथैव शाखोटकसंभवं पयः पुराकृतं पापमिवेश्वरस्मृतिः ॥ ११६ ॥

जिस प्रकार ईश्वरके स्मरणसे पूर्व जन्मके दुष्ट कर्म दूर हो जाते हैं वैसेही हरीतकीका चूर्ण कर तथा उष्ण कर तल्के साथ लेनेसे व्रणों, पुराने कोढके फोडोंका नाश होता है अथवा सहोडासे बनाये हुए जल्के लगानेसे व्रणका नाश होता है। ११६

सद्योव्रणेषु सहसा विदधीत धीमा-
नक्षीवपत्रातिलकल्कमथाज्यमिश्रम् ।
अव्रीत (?) भूमिरुहवल्कलकल्कमपि-
दाज्येन युक्तमपि रोपयतीति सिद्धम् ॥ ११७ ॥

सद्योव्रणमें जल्दीसे बुद्धिमान् पुरुष सुहांजनेके पत्ते और तिलको मिलाकर तथा इनका कल्क कर और इसमें घृत मिलाकर लगावे अथवा अव्रीत वृक्षकी छालके कल्कको कुछ घृत मिलाकर सेवन करनेसे व्रण भर जाता है ॥ ११७ ॥

क्षुण्णं मृदितं लवणं सिञ्चेन्निष्पीड्य तदनु बध्नीयात् ।
सद्योव्रणे त्रिदिवसं कुक्कुटनिष्पावपल्लवं व्रणजित् ११८॥

कुक्कुटनिष्पावपल्लवं (कुकडछिड्डी) के पत्तोंको नमकके साथ कूटकर फिर निचोडकर सद्योव्रणपर तीन दिनतक बांधना चाहिये ॥ ११८ ॥

दूर्वायाः खरमञ्जर्याः सोमराज्याश्च पल्लवैः।
बध्नाति बन्धनं क्षुण्णैर्व्रणे शोणितनिःसृतिम् ॥११९॥

दूब, पुठकंडा, बावची इनके पत्ते पीसकर बांधनेसे सद्यो-व्रणके कारण प्रवृत्त हुआ रुधिरस्राव बंद हो जाता है॥११९॥

अपामार्गदलालेपः सद्यो बध्नाति शोणितम्।
अतिप्रवृत्तमप्याशु सेतुबन्ध इवोदकम् ॥ १२० ॥

पुठकंडाके पत्तोंका लेप करनेसे शीघ्रही रुधिरका स्राव शान्त हो जाता है, जैसे बन्ध लगा देनेसे पानीका प्रवाह रुक जाता है ॥ १२० ॥

अकिञ्चनानामधिपस्य पत्रं स्तन्येन संपेष्य समर्पयेद्द्राक्। सद्योव्रणे रोपणमाशु वाञ्छन् कल्कं च दद्यादथ किङ्किसस्य॥ १२१ ॥

अकिञ्चनाके पत्रको दूधसे पीसकर सद्योव्रणमें लगावे अथवा शीघ्र रोपणकी इच्छा करता हुआ किङ्किसके कल्कको लगावे ॥ १२१ ॥

कुण्डलीकिसलयं ससैन्धवं नाशयेत्सपदि संभवं व्रणम्। नाशयेदथ तिलोद्भवं तथा तेन सिद्धमपि नात्र कौतुकम् ॥ १२२ ॥

गिलोयके किसलयोंको लवणके साथ लगानेसे उत्पन्न हुए व्रणका शीघ्र नाश होता है, अथवा गिलोयके किसलयोंको तिलतैलमें सिद्ध कर लगानेसे सद्योव्रणका नाश होता है यह क्या ही कौतुक है ॥ १२२ ॥

जीवन्तीवल्कस्य सारं संपेष्य लेपयेत्रिदिनम् ।
पिच्छिलभावाद्रूढं संपीड्य शमयेद्व्रणं नियतम् १२३

जीवन्तीके वल्कलके सारको पीसकर तीन दिनतक पीसकर लेप करे और जो व्रण बहुत पिच्छिल हो तथा गहरा हो उसे दबाकर तदनंतर लेप करना चाहिये ॥ १२३ ॥

भृष्टतण्डुलमषी सुपेषिता स्विन्नपीडितसुधाफलाम्बुना । भिन्नमास्थि पिशितं च वेदनां सा सुखं नयति लेपनाद्ध्रुवम् ॥ १२४ ॥

भूने हुए चावलोंकी मषीको हरीतकीके जलसे पीसकर कुछ गरम कर लगानेसे टूटी हुई हड्डी तथा मांसकी पीडाका शीघ्र नाश होता है ॥ १२४ ॥

भंगे पूर्वमतीव शीतलजलैः सिञ्चेत्तदाऽऽर्द्राम्बरं
संपेष्य त्रिदिनं पुनः पट्टयुतं तैलं प्रलिम्पेन्मुहुः ।

चिञ्चामुष्णजलेन तैलसहितां पीत्वैकरात्रं पुनर्ला-
क्षाचूर्णकृताढ्यमौष्ण्यरहितं गृष्टेश्च दुग्धं पिबेत्१२५

जब कि कोई अंग टूट जावे तो पूर्व शीतल जलसे सिंचन करे और गीले कपडेको रखे तदनंतर ३ दिवसके बाद लवण और तैल मिलाकर कपडेको रखे तथा एक रात इमलीको गरम जलके साथ पीवें, लाखके चूर्णको गौके शीतल दुग्धके साथ पान करे ॥ १२५ ॥

भग्ने नम्रे जाठरे वाऽस्थि सम्यक् स्थाने स्थाने
संनिवेश्याम्बरेण। तैलाक्तेनोद्बध्य तैलैः सुखोष्णैः
सिञ्चेच्छेषं वातभैषज्यवच्च ॥ १२६ ॥

उदरकी हड्डी टूट जाय अथवा झुक जाय तो अपने २ स्थानपर बैठाकर तैलसे आर्द्र कपडेसे बांधकर कुछ २ गरम तैलसे सिंचन करे, बाकीका परिचार वातव्याधिकी चिकित्साकी तरह करना चाहिये ॥ १२६ ॥

कोरदूषाक्षतान् भृष्ट्वा पिष्ट्वा भङ्गे प्रलेपयेत्।
चिञ्चास्थिमृत्कपालाम्रत्वक्कल्कं वा प्रलेपयेत्॥१२७॥

कोदोंके धान्योंको भूनकर तथा पीसकर अस्थिभङ्गमें लेप

लगावे अथवा इमलीके बीज मिट्टीका कपाल आमका छिल्का इनका कल्क कर लेप करे ॥ १२७ ॥

ताक्ष्यं द्विनिशां दन्तीं श्वेतां ज्योतिष्मतीमरिष्टदलम् ।
मञ्जिष्ठां चालिम्पेद्भगन्दरे मूत्रपिष्टानि ॥ १२८ ॥

भगन्दररोगमें रसांजन, दोनों हलदी, दन्ती, चीनी, मालकंगनी, निम्बपत्र और मंजीठ इनको गौके मूत्रमें पीसकर लेप करना चाहिये ॥ १२८ ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।
पाठाविडंगेन्द्रयवैर्हिङ्गुभार्ङ्गीवचासितैः ॥ १२९ ॥
सर्षपातिविषाजाजीजीरकैः कुष्ठसंयुतैः ।
गजकृष्णाजमोदाभ्यां कटुकाचूर्णमिश्रितैः ॥ १३० ॥
समभागान्वितैरेतैस्त्रिफला संमिता भवेत् ।
त्रिफलासहितैरेतैः समभागश्च गुग्गुलः ॥ १३१ ॥
एतत्संचूर्णितं सम्यङ्मधुना सुपरिप्लुतम् ।
योगराज इति नाम्ना भगन्दरहरः परः ॥ १३२ ॥
अर्शांसि वातगुल्मं च पाण्डुरोगमरोचकम् ।
नाभिशूलमुदावर्तं प्रमेहं वातशोणितम् ॥ १३३ ॥

१ श्वेता सिता ।

महान्तमग्निसादं च कासश्वासं च कामलाम् ।
रेतोदोषोत्थितान्रोगान्योनिदोषोत्थितान्गदान् ॥ १३४
निहन्यादाशु तान् सर्वान् दुर्वारानप्यसंशयम् ।
एतन्निष्परिहारं च पानभोजनमैथुने ॥
सन्तताभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ १३५ ॥

पिप्पली, पिप्पलामूल, चव्य, चित्रा, सोंठ, पाठा, वाय-विडंग, इन्द्रजौ, हींग, भारंगी, वच, चीनी, सरसों, अतीस, काला जीरा, श्वेत जीरा, जीरा, कुठ, गजपिप्पली, अजवायन, कोड इन सबको समभाग लेकर और बराबर त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला) डालकर इन सबके बराबर शुद्ध गुग्गुलु डालकर चूर्ण बनाकर शहतमें मिलाना चाहिये तो यह योगराजनामसे प्रसिद्ध गुग्गुलु भगन्दर, ववासीर, वायगोला और पाण्डुरोग, अरोचक तथा नाभिका शूल, उदावर्त, प्रमेह ,वातरक्त, अग्निमांद्य, कास, श्वास और कामलाको तथा सम्पूर्ण वीर्यदोषों और योनिके दोषोंको शीघ्र दूर करता है, इसको सेवन करते हुए आहार विहारमें कोई परिहार करनेकी आवश्यकता नहीं, इसको प्रति दिन सेवन करनेवाले पुरुषके बाल शीघ्र सफेद नहीं होते तथा

मुँहपर वलियें नहीं पडतीं ॥ १२९ ॥ १३० ॥ १३१ ॥ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ १३५ ॥

हरीतकीशिग्रुकरञ्जभास्वत्पुनर्नवासैन्धवविश्व-
मूत्रैः । पिष्टैः प्रशस्तः पिटकासु लेपो ग्रन्थ्या-
मपच्यामथ विद्रधौ च ॥ १३६ ॥

हरीतकी, सोहांजन, करंजुआ, आक, सोंठ, इट्सिट्, लवण इनको गोमूत्रसे पीसकर ग्रन्थि तथा अपचि, फुन्सियों और विद्रधिपर लेप करना चाहिये ॥ १३६ ॥

पाकोन्मुखानि बृहतीकुसुमोद्भवानि
सूत्रावृतानि सुकरीषपुटे निधाय ।
दग्ध्वा कुकूलदहनेन च तानि हन्यु-
र्मेदोविकारजनितानचिरेण कोठान् ॥ १३७ ॥

कटेरीके फूल जो पकनेके लिये तयार हों उनको लेकर सूत्रसे लपेटकर उपलोंके पुटमें रखकर धीरे २ अग्नि देकर जला लेवें फिर इनके सेवन करनेसे जल्दीसेही मेदज कोठोंका नाश हो जाता है ॥ १३७ ॥

गुडगृहधूमचूर्णसमुदायविलेपमिदं
कफपवनोद्भवग्रथितशोफरुजाबहुलम् ।

व्रणमथ हन्त्यनवं जनयेत् सुखमाशुतरं
त्रुटिघृतलेपनं च विपरीतगुणं त्रिदिनात् ॥१३८॥

गुड, घरका धूआं इनका चूर्ण कर कफ और वायुके कारण उत्पन्न सूजनकी पीडाको लेप करनेसे शांति प्राप्त होती है तथा पुराना व्रण जल्दीसे दूर हो जाता है। छोटी इलायचीको घीमें मिलाकर लेप करनेसे तीन दिनके बाद विपरीत गुण दिखाई देता है ॥ १३८ ॥

परिणतसूरणकन्दं सनागरं तोयसंपिष्टम् ।
मेदोग्रन्थिहरार्थं लिम्पेद्बहुशश्च सप्ताहम् ॥ १३९ ॥

पके हुए जिमिकन्दको और शुण्ठीको जलसे पीसकर सात दिनतक बहुत वार मेदासे उत्पन्न ग्रन्थिके नाशके लिये लेप करना चाहिये ॥ १३९ ॥

स्वरसेन काकमाच्याः पिष्टा शुण्ठी जयेत् कोठान् ।
मुनितरुदलरसपिष्टा सा च करीषस्य वा स्वरसे॥१४०

काकमाचीके रससे सोंठको पीसकर लेप लगानेसे अथवा लाल बकवृक्षमें सोंठको पीसकर लेप करनेसे तथा शुष्क गोबरके रसमें सोंठको पीसकर लेप करनेसे कोठरोग शांत होता है ॥ १४० ॥

तैलेन कंसे संघृष्टं कृष्णतण्डुलकण्डनम्।
लेपाद्धुतिपत्सुमनिलाद्ग्रन्थिमन्तर्दधेद्ध्रुवम् ॥ १४१ ॥
इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायामक्षिकर्णव्र-
णग्रन्थिचिकित्साधिकारो नाम षोडशः पटलः ॥ १६ ॥

काले भुने हुए चावलोंकी मुंजीको कांसीके पात्रमें तैलके साथ पीसकर लेप करनेसे वातग्रन्थिका शीघ्र नाश हो जाता है ॥ १४१ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्याविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटीकाया-
मक्षिकर्णव्रणग्रन्थिचिकित्साधिकारो नाम षोडशः पटलः ॥ १६ ॥

अपच्यर्बुदचिकित्साधिकारो नाम सप्तदशः पटलः।

अपच्यर्बुदयोः पूर्वं रक्तं हृत्वा जलौकसा।
शरपुंखाशिफां लिम्पेज्ज्येष्ठाम्भोभिः सुपेषिताम् ॥ १ ॥

अपची तथा अर्बुदरोगमें जोंकसे रक्त निकलवाकर फिर चावलोंके पानीसे शरपुंखाकी जडको पीसकर लेप करना चाहिये ॥ १ ॥

चिञ्चाशलाकां तत्पत्रस्वरसेन सुपेषिताम् ।
कंसद्वयेन संघृष्टां गतिनाशाय योजयेत् ॥ २ ॥

इमलीकी शलाकाको इमलीके पत्तोंकेही रससे पीसकर कांसीके दो बर्तनोंमें घिसकर नाडीव्रणके नाशके लिये प्रयोग करना चाहिये ॥ २ ॥

ताम्बूलघ्राण (?) मरिचवचाधात्रीरसोनकैः ।
दुग्धे क्षीरिशिफातुल्यैः सिद्धं तैलं गतिप्रणुत् ॥ ३ ॥

पान, घ्राण (गन्धग्राह्य), मरिच, वच, आंवला, लहसन इनके समान गूलरकी जडको लेकर व्रणमें इनके सहित तैलको सिद्ध कर नाडीव्रणके नाशके लिये प्रयोग करना चाहिये ॥ ३ ॥

अजापुरीषवल्मीकमृदश्वत्थजलैः कृतः ।
प्रलेपः पातयत्याशु चर्मकीलं दशाहतः ॥ ४ ॥

बकरीकी मेंगनी, दीमककी मिट्टी इनको अश्वत्थके जलसे पीसकर लगानेसे दस दिनमें चर्मकीलोंका नाश हो जाता है ॥४॥

अजापुरीषवल्मी[illegible] फल्गुपुष्पोद्भवस्तथा ।
विकस्यैक क्षिपच्चर्मकीलनुत् शूलरूपकः (?) ॥ ५ ॥

बकरीकी मेंगनी, दीमककी मिट्टी, फल्गुपुष्प इनमेंसे किसी एकके चूर्णको लगानेसे शूलयुक्त चर्मकीलोंका नाश होता है॥५॥

लोष्टमध्ये वृत्तरन्ध्रं कर्णे कमलतन्तुना।
बद्धं हरेद्राविलका (?) मथवा कर्णकार्णिकाम् ॥ ६ ॥

मिट्टीके ढेलेमें एक छिद्र कर उसको कमलतन्तुके साथ कानपर बांधनेसे आविलका रोग तथा कर्णकणिकारोगका नाश होता है ॥ ६ ॥

वारिमज्जनमृतस्य विग्रहं तिन्तिणीदलरसेन सेचितम्। आतपे धृतमथास्य चेन्द्रियेष्वाशु जीवितमवाप्नुयाद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥

पानीमें डूबते हुए पुरुषको निकालकर इमलीके जलसे सेचित कर धूपमें रख देवे तो शीघ्र ही उसकी इन्द्रियोंमें जीवनका संचार होता जावेगा ॥ ७ ॥

कृष्णाष्टमीनिशायां पङ्कजमूलात्तमृत्तिकान्तःस्थम्।
कन्दं तमसि सुपिष्टं निद्रां कुरुतेऽञ्जनात् सायम् ॥ ८॥

कृष्णाष्टमीकी रातमें कमलकी जडको उखाडकर और अंधेरेमें पीसकर आंजनेसे सायंकाल नींद आजाती है ॥ ८ ॥

महान्धकारं संस्मृत्य यः शेते भुवि मानवः।
कुम्भकर्णोऽपि तस्याशु भ्रष्टांगुलिरभूद्ध्रुवम् ॥ ९ ॥

जो मनुष्य महा अंधकारका स्मरण कर सोता है उसकी नींद कुम्भकर्णकी नींदकोभी पार कर जाती है ॥ ९ ॥

निद्रां करोत्यनिद्राणां प्रदोषे शिरसा धृता ।
उपोदिका कपोतायाः शिफा वाऽथ धृता तथा ॥ १० ॥

जिनको नींद नहीं आती ऐसे पुरुषोंको शिरपर प्रदोषमें पोईकी तथा कपोताकी जडको शिरपर रखनेसे निद्रा आ जाती है ॥ १० ॥

हरितालवचाकुष्टचूर्णं पीतवटच्छदम् ।
आद्भिः पिष्ट्वा मुखे लिम्पेद्व्यङ्गलोपनलोलुपः ॥ ११ ॥

हरताल, वच, कुठ इनके चूर्णको पीले वटके पत्तोंके रससे पीसकर व्यंगके नाशके लिये लेप करना चाहिये ॥ ११ ॥

आजेन पयसा पिष्टामारण्यतुलसीशिफाम् ।
आलिप्योद्वर्तयेद्वक्त्रं व्यङ्गलोपमना नरः ॥ १२ ॥

वनतुलसीकी जडको बकरीके दूधसे पीसकर व्यंगके नाशके लिये मुखपर लेप करना चाहिये ॥ १२ ॥

तैलं कषाये मुण्डिन्याः तत्कल्कं साधितं नासि ।
दत्तं पीतं च कुचयोः पतनं विनिवर्तयेत् ॥ १३ ॥

मुण्डिनीके कल्क और मुण्डिनीके ही रसमें तैलको सिद्ध कर नस्य लेनेसे पीनेसे स्तनोंका ढीलापन दूर होता है ॥ १३ ॥

सिद्धेन तिलजेनाक्ता स्वरसे जातिलम्बयोः।
धृता योनिमुखे वर्तिर्नष्टावुद्धर्षयेत् कुचौ ॥ १४ ॥

जायफल और कडवी तुम्बीके रसमें तिलतैल सिद्ध कर उस तैलसे आर्द्र पिचुको योनिमें रखनेसे नष्ट हुए स्तन बढ जाते हैं ॥ १४ ॥

उद्धृत्यार्कक्षीरसेकं प्रकुर्यात् पादे विद्धं कण्टकं कण्टकेन। रात्रौ कन्यामग्नितप्तां घृताक्तां बध्नीयाद्राक्स्वास्थ्यमिच्छन्मनुष्यः ॥ १५ ॥

पैरमें कंटकके विद्ध होनेपर कंटकसे कंटकको निकालकर आकके दूधसे सेक करना चाहिये और रात्रिको घीकुआरको घी लगाकर और गरम कर बांधनेसे शीघ्रही सुख प्राप्त होता है ॥ १५ ॥

तदनु कण्टकवेधसमुद्भवां विकृतिमाशु निहन्ति निशाग्रतः। तपनतप्ततिलोद्भवबिन्दुना लवणमामयदेशसमर्पितम् ॥ १६ ॥

कण्टकवेधकी पीडाकी शांतिके निमित्त रात्रिके प्रारम्भमें नमक मिले हुए तैलको गरम कर बूंद २ कर कण्टकाविद्ध स्थानपर टपकाना चाहिये ॥ १६ ॥

अङ्कोलजातानि बीजानि पिष्ट्वा यः काकमाचीरसेनैव लिम्पेत् । कण्डूतिमिच्छन् विजेतुं मनुष्यस्तां चापि जित्वा सुवर्णं लभेत ॥ १७ ॥

अंकोठके बीजोंको मकोयके रससे पीसकर लगानेसे अत्यन्त खुजलीका भी नाश होता है ॥ १७ ॥

तिलसंभवसंमिश्रा पर्णमषी कुमुदाम्लिकाजम्बूनाम् । एकैकमग्निजनितं व्रणमचिरेणैव नाशयति ॥ १८ ॥

कमल तथा इमली और जामनके पत्तोंकी एक २ की भस्मको तिलतैलमें मिलाकर अग्निदग्ध व्रणपर लगानेसे शीघ्रही शांति प्राप्त होती है ॥ १८ ॥

निष्पावस्य च रागो महिषीक्षीरस्य तिमिरसंकाशम् । व्रणमाशुशुक्षणिभवं रोपयति विदूरकिरणाच्च (?) १९॥

इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायामपच्यर्बुद-चिकित्साधिकारो नाम सप्तदशः पटलः ॥१७॥

राजशिम्बीके बीजोंको भैंसके क्षीरमें भर्जित कर सायंकालके समय व्रणपर लगाना चाहिये इस तरह लगानेसे व्रण शीघ्र भर जाता है क्योंकि सायंकालके समय उष्णता कम होती है ॥ १९ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटीकायामपच्यर्बुदचिकित्साधिकारो नामसप्तदशः पटलः ॥ १७ ॥

अथ गुह्यरोगचिकित्साधिकारो नामाष्टादशः पटलः ।



वृषणभवशोफशांत्यै बृहतीपुष्पोद्भवस्वेदम् ।
कृत्वा विस्राव्य जलं तिलकल्कं घृतयुतं लिम्पेत् ॥ १ ॥

वृषणकी सूजनकी शांतिके निमित्त कंटकारीके फूलोंसे स्वेद देकर जलका स्राव हो जाय तब घीसे युक्त तिलके कल्कका लेप करना चाहिये ॥ १ ॥

लिप्तं साज्यं वराभस्म लिंगलूतविनाशनम् ।
करवीरस्य मूलं वा लिप्तमाज्येन कल्कितम् ॥ २ ॥

हरड, बहेडा, आंवला इनकी लोहेकी कढाईमें भस्म कर, घीके साथ मिलाकर लिङ्गपर लगानेसे लिङ्गकी लूताका नाश होता है अथवा करवीरकी जडका घीसे कल्क कर लगाना चाहिये ॥ २ ॥

कार्पासस्यास्थिभिः पिष्टैः साधितं तिलसंभवम् ।
लिंगलूताविकाराणां प्रतीकारो विलेपनात् ॥ ३ ॥

कपासके बीज (बिनौलों) को पीसकर तिलतैलमें सिद्ध कर लिङ्गलूतके नाशके निमित्त लिङ्गपर लेप करना चाहिये॥३॥

सेव्याब्देन्दीवराम्भोजफलविश्वौषधैः शृतम् ।
तैलं योनेर्हरेत्तांस्तान् रोगान् कामुकगर्हितान् ॥ ४ ॥

खस, नागरमोथा, नीलकमल, कमल, जायफल, सोंठ इन औषधियोंके कषायसे तिलतैलको सिद्ध कर योनिमें लगानेसे वह २ योनिके रोग जो कि कामशास्त्रमें निन्दित हैं दूर होते हैं ॥ ४ ॥

तैल प्रियंगुजातीपुष्पैः सिद्धं स्मरालये लिम्पेत् ।
तेन विनिवृत्तगर्भदोषं सुभगं भगं भवेत्सद्यः ॥ ५ ॥

फूलप्रियंगू और चम्बेलीके पत्तोंसे तिलतैलको सिद्ध कर

भगमें लेप करनेसे गर्भदोष शांत होकर सौभाग्यवती भग बन जाती है ॥ ५ ॥

क्षौद्रेण पौष्करं रेणुमेकविंशतिवासरान्।
लिहेच्च देहदौर्गंध्यं नश्येन्निःशेषमंगिनाम् ॥ ६ ॥

पुहकरमूलके चूर्णको २१ दिनतक शहतसे चाटा जावे तो सम्पूर्ण शरीरकी दुर्गन्धता दूर होती है ॥ ६ ॥

द्विनिशातिलकुष्ठार्जाकल्कोद्वर्तितविग्रहः।
यः स्नाति तस्य देहः स्यात् सुगंधिर्भास्करच्छविः ॥७॥

दोनों हलदी, तिल, कुठ, धनियां इनके कल्कसे उबटन कर जो स्नान करता है उसका शरीर कान्तियुक्त तथा सुगन्धियुक्त हो जाता है ॥ ७ ॥

तण्डुलकण्डनलुलितैर्लशुनवरासर्षपैः कृतो धूपः।
कंदर्पराजधान्यास्तोदं द्रागेव जयति रमणीनाम् ॥८॥

चांवलोंकी भुस्सी, लहसन, हरड, बहेडा, आँवला और सरसोंसे युक्त कर धूप देनेसे स्त्रियोंकी योनिपीडाका शीघ्र नाश होता है ॥ ८ ॥

तप्ते द्विनिष्कभुजगे पारदनिष्कं निधाय संमिलितम्।
पिष्टं क्षौद्रेण जयेद्योनिफलं लिप्तमर्बुदादींश्च ॥ ९ ॥

८ मासे सीसा लेकर तपावें और ४ मासे पारा डालकर मिला लेवें सहतके साथ पीसकर लेप करनेसे योनिदोष और अर्बुदादिका नाश होता है ॥ ९ ॥

लोध्रामलकहरिद्राहरीतकीखदिरसारसंभूतः ।
क्वाथः शौचेन रवेर्वारे स्याद्योनिरोगहरः ॥ १० ॥

लोध्र, आमला, हलदी, हरीतकी, खैरसार इनके क्वाथसे रविवारके दिन योनिको प्रक्षालन करे तो सम्पूर्ण योनिरोग दूर होते हैं ॥ १० ॥

ब्रह्मदण्डीदलैः क्षौद्रसहितैः स्मरमंदिरम् ।
लिप्तमत्यंतिकं नृणां स्नेहमावहयेद्रतौ ॥ ११ ॥

ब्रह्मदण्डीके पत्ते सहतके साथ पीसकर योनिको लिम्पन कर सम्भोग करनेसे अत्यन्त आनन्द प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

भूमिकदम्बस्वरसः सक्षौद्रः शर्करासमायुक्तः ।
योनौ नाभ्यां लिप्तः प्रियमचिराद्दासवत् कुरुते ॥ १२ ॥

भूमिकदम्ब (कदम्बविशेष, कई अलम्बुषाको कहते हैं) के रसको शहत और शक्कर मिलाकर योनि तथा नाभिमें लेप कर सम्भोग करनेवाली स्त्री शीघ्रही अपने प्रीतमको अपना दास बना लेती है ॥ १२ ॥

मालतीपुष्पसंसिद्धतैलाभ्यक्तवरांगया ।
किंकरीक्रियते नार्या संभोगमये पतिः ॥ १३ ॥

चम्बेलीपुष्पसे सिद्ध तैलकी योनिमें मालिश कर सम्भोग करनेवाली स्त्री शीघ्र अपने पतिको अपना नौकर बना लेती है ॥ १३ ॥

रोचनालक्ष्मणामूलकल्कालिप्ततनुर्वधूः ।
रतौ प्राप्नोति सौभाग्यं दयितप्रियतामपि ॥ १४ ॥

गोरोचन, लक्ष्मणाकी जडके कल्कसे योनिको लेप कर सम्भोग करनेसे स्त्री शीघ्रही गर्भको प्राप्त करती है ॥ १४ ॥

निधाय सार्तवे योनौ रुग्यष्टी दिवसत्रयम् ।
ततः स्वमूत्रैः संपिष्य वश्यायान्नादिषु क्षिपेत् ॥ १५ ॥

ऋतुके दिन अपनी योनिमें मुलट्ठीको ३ दिनतक रखकर तदनंतर अपने मूत्रसेही पीसकर अपने पतिको वश करनेके अर्थ देवे ॥ १५ ॥

चूर्णेनाञ्जनमलयजसरसिजदलरोचनाप्रियंगूनाम् ।
अञ्जितदृष्टिस्तरुणीं यां पश्येत् सा भवेद्वश्या ॥ १६ ॥

अंजन (काला सुरमा), कमल, गोरोचन, फूल प्रियंगू इनके चूर्णसे नेत्रोंको अंजन कर जिस स्त्रीकी ओर देखे वह स्त्री उसकी दासी बन जावेगी ॥ १६ ॥

यैः कैश्चिद्रक्तकुसुमैः पञ्चभिः सप्रियङ्गुभिः ।
लिप्तलिङ्गो वशे कुर्यान्नारीं सौभाग्यगर्विताम् ॥१७॥

जो मनुष्य पांच फूलप्रियंगूको लाल फूलोंसे पीसकर लिंगको लेप कर सम्भोग करते हैं वह अवश्यही अभिमानिनी प्रियाको वशमें कर सक्ते हैं ॥ १७ ॥

पारावतस्य शकृता मधुना सैन्धवेन च ।
आलिप्तसाधनः कान्तां स्ववश्यां कुरुते रतौ ॥ १८ ॥

कबूतरकी बीठको सहत तथा नमकसे मिलाकर लिंगपर लेप कर सम्भोगमें स्त्रीको अपनी दासी बना लेता है ॥ १८ ॥

तुरङ्गगन्धमञ्जिष्ठापत्रजातीप्रसूनकैः ।
मकरध्वज एव स्यात् समालिप्तनिजध्वजः ॥ १९ ॥

असगन्ध, मंजीठ, तजपत्र, चम्बेलीके फूल इनको पीसकर लिंगपर लेप करनेसे पुरुष मकरध्वजही बन जाता है ॥ १९ ॥

मण्डूकपर्णीरसमूर्छितं तु लिप्तं ध्वजे पारदमातनोति ।
ध्वजोद्धतिं योनिनिवेशमात्रे रामामनप्रीणनमोहनं च२० ॥

मण्डूकपर्णीके रसमें पारदको मूर्च्छित कर उस मूर्च्छित पारदसे लिंगपर लेप करनेसे लिंग उद्धत होता है, योनिके अन्दर प्रवेशमात्रसेही स्त्रीके मनको हर लेता है ॥ २० ॥

युक्तं रसं पारदशर्कराभ्यां भुवः कदम्बस्य विलेप्य लिङ्गे । एतेन नारीं स्ववशां करोति नारी च नान्यं नरमिच्छतीह ॥ २१ ॥

भूमिकदम्बके रसको पारद और शक्करसे युक्त कर लिंगको लेप करनेवाला जिस स्त्रीसे सम्भोग करता है उसको अपने वशमें कर लेता है वह भी किसी मनुष्यकी इच्छा नहीं करती ॥ २१ ॥

मुखभवजलयुक्तं भूमिसर्पोत्थितं य-
न्मसृणतरसुचूर्णं पिच्छनाले स्थितं तत् ।
सुरतिसमयकाले नाभियुक्तं निरुन्ध्या-
द्विविधमधुररागैः प्रेरितं चाशु बीजम् ॥ २२ ॥

भूमिसर्प (श्यासाकधान्य, समा अन्न) के चूर्ण और अलसीके चूर्णको थूकसे मिलाकर कमलके नालमें रख छोडे और जब सम्भोग करनेका समय हो तो अपनी नाभिपर लगा ले तो इससे वीर्यस्तम्भ हो जाता है, मीठी २ बातोंसे गिरते हुए वीर्यकोभी रोक देता है ॥ २२ ॥

सितेषुपुंखिकामूलं केवलं वदने धृतम् ।
तुषाम्बुपिष्टं लिप्तं च शुक्रं संस्तम्भयेद्रतौ ॥ २३ ॥

सफेद सरफुंकाकी जडको केवल मुखमेंही रखकर और जौके पानीसे पीसकर इन्द्रियको लेप करनेसे सम्भोगके समय शीघ्र पतनका नाश होता है ॥ २३ ॥

मधुपिष्टैर्ध्वजलेपो राजतरुमरिचकपित्थवटविनिर्यासैः ।
रम्भाफलाम्बुकलितैर्वशयेच्च द्रावयेच्च वनितां वै ॥२४॥

अमलतास, मिरच, कैथ, वडका दूध, केलेके फलका जल शहतसे पीसकर लिङ्गपर लेप कर सम्भोग करनेसे स्त्री वशमें हो जाती है और स्त्रीका पहले रेतस्राव हो जाता है ॥ २४ ॥

पारदसितशरपुंखामूलाभ्यां नक्तमालफलकाभ्याम् ।
वदनगताभ्यां बीजं भवति नृणां स्तम्भितं दीर्घम् ॥२५

पारा, सफेद सरफुंका, करंजुआ और जायफलको मुखमें रखनेसे देरतक मनुष्योंके वीर्यका स्तम्भ होता है ॥ २५ ॥

नील्या दीर्घेण पत्रेण वक्त्रगेण निरुध्यते ।
रेतः श्वेतस्य मूलेन नाभिलिप्तेन वा चिरम् ॥ २६ ॥

नीली (पीतशाल) के लम्बे पत्तेको मुखमें रखनेसे अथवा सफेद इट्‌सिट्‌की जडको पीसकर नाभिपर लेप करनेसे देरतक वीर्यका पात नहीं होता ॥ २६ ॥

सितवायसजङ्घाया मूलं मध्वब्जकेसरम्।
पिष्टानि नाभिलिप्तानि रेतःस्तम्भं वितन्वते ॥ २७ ॥

सफेद काकजंघाकी जड, शहत, कमल, केसर इनको पीस-कर नाभिपर लेप करनेसे वीर्यका शीघ्र पतन नहीं होता ॥२७॥

दुरुपशोषणकुष्ठजीरकबला दग्ध्वा पुटे वारिणा
पिष्ट्वा कोलमितां सुगुटिकां कृत्वाऽथ तां शोषयेत्।
नाभौ सा मधुकल्किता विनिहिता रत्युत्सवाडम्बर-
प्रारम्भेष्ववसानकालविकलं कुर्यान्नरं निश्चितम् ॥ २८

इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां गुह्यरोग-चिकित्साधिकारो नामाष्टादशः पटलः ॥ १८ ॥

यवासा, मिरच, कुष्ठ, जीरा, खरेटी इनको संपुटमें दग्ध कर फिर पानीसे पीसकर बेरके समान गोलियां बनाकर सुखालें, फिर उन गोलियोंमेंसे एक गोलीको शहतसे पीसकर नाभिपर लगावे यह क्रिया मैथुनसे पूर्व करनी चाहिये तो मैथुनके अन्तमें मनुष्य अवश्यही व्याकुल हो जाता है॥ २८॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटी-कायां गुह्यरोगचिकित्साधिकारो नामाष्टादशः पटलः ॥ १८ ॥

अथ विषचिकित्साधिकारो नामैकोनविंशतितमः पटलः।

दूतमुखोत्थितवर्णान् द्विगुणीकृत्य त्रिभिर्हरेद्भागम्।
एकद्वयेन जीवेद्दष्टो म्रियतेऽथ शून्येन ॥ १ ॥

दूत जो कि रोगीका समाचार लेकर वैद्यके बुलानेके निमित्त वैद्यके पास आता है, शुभ तथा अशुभ लक्षणवाले दूतका विचार सभी ग्रन्थोंमें है जैसे चरकसंहिताके इन्द्रियस्थानके गोमयचूर्णीय अध्यायमें विचार है पर वह बहुत लम्बा है इससे संक्षेपरूपसे बनाया हुआ तथा वैद्यसम्मत दूतका लक्षण लिखता हूं " यश्चिकित्सकमानेतुं याति दूतः स कथ्यते। दूताः सुजातयोऽव्यङ्गाः पटवो निर्मलाम्बराः। सुखिनोऽश्ववृषारुढा गन्धपुष्पफलैर्युताः। सजातयः सुचेष्टाश्च सजीवादिशि सङ्गताः। भिषजं समये प्राप्ता रोगिणः सुखहेतवे॥" सजाति हो इस बातको दिखानेके लिये अष्टांगहृदयके शारीरस्थानके छठे अध्यायके प्रथमही इस बातका विचार किया है, यथा " पाखण्डाश्रमवर्णानां सवर्णाः कर्मसिद्धये। त एव विपरीताः स्युर्दूताः कर्मविपत्तये॥" अब इसी अरिष्टारिष्टका विवेचन वैद्यमनोरमाकी टीकासे देखिये।

सर्प आदिने जिसको डसा हो उसका समाचार लाया हुआ दूत जब वैद्यके पास आवे और जितने वर्णोंको अपने मुखसे बोले उसको दोसे दुगुना कर तीनसे भाग देवे, अगर शेषमें एक या दो रहें तो सर्पसे डसा हुआ पुरुष जीता रहता है, अगर शेषमें शून्य (सिफर) बचे तो रोगी पंचत्वको प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥

चन्द्रमार्गगतो वायुर्दूतस्तन्मुखमागतः ।
तदा जानीहि दष्टस्य जीवितं मृतिरन्यथा ॥ २ ॥

अगर उत्तरकी वायु दूतके मुखमें प्राप्त हो तो वैद्य जान ले कि जिस सर्पसे डसेका यह दूत समाचार लाया है वह जीता रहेगा, नहीं तो वह पंचत्वको प्राप्त होगा। (उत्तरकी वायु इसलिये गृहीत की गई है कि उत्तरकी हवा ठंडी होती है अगर वह ठंडी पवन दूतको लगती होगी तो वह घबरायेगा नहीं, न घबरानेसे वह वैद्यके सन्मुख स्पष्ट रीतिसे बात करनेमें समर्थ हो सक्ता है) ॥ २ ॥

अग्निनिर्ऋतिदिक्स्थः पृच्छति दूतो भुजङ्गदष्टस्य ।
अन्तकनिवासवासः प्रत्यासन्नो भवेत्तस्य ॥ ३ ॥

सर्पसे डसे पुरुषका दूत आग्नेय तथा नैर्ऋतदिशामें खडा होकर वैद्यको समाचार देता है तो वैद्य जानले कि वह सर्पसे डसा पुरुष अवश्यही यमलोकको प्राप्त होगा (ऐसा जानकर रोगीकी चिकित्सा करनेका विचार न करे) ॥ ३ ॥

विद्धि महादिशि दूते स्थितवति दर्वीकरेण दष्ट इति।
विदिशि तु मण्डलिनाऽदंशि दिशोर्मध्ये तु राजिलेनैव४

महादिशामें अगर दूत आकर खडा हो तो वैद्य जान ले कि दर्वीकर अर्थात् जिसपर रथ तथा छत्रादिके चिह्न हो और फणायुक्त तथा शीघ्र गतिसे चले उसे दर्वीकर जानना चाहिये। अगर किसी भी दिशामें ठीक तरह न खडा हो तो जान ले कि उसको मण्डलिन सर्प अर्थात् जिसपर गोल २ चकत्ते हों और आहिस्ता २ चलता है उस सर्पने काटा है, अगर दूत दो दिशाओंके बीचमें स्थित होकर वैद्यको समाचार देता हो तो वैद्य जान ले कि उसको राजिलसर्प (डुण्डुभसर्प) ने डसा है ॥ ४ ॥

पृष्टा यदि वामाङ्घ्रौ स्थितः स्त्रिया दष्टकं तमवगच्छेत्।
अन्यतरेण तु पुंसा द्वितयेन नपुंसकेन सर्पेण ॥ ५ ॥

अगर दूत वाम चरण (बायां पैर) आगे कर खडा हो तो जानना चाहिये कि सर्पिणीने उसको काटा है अगर दायां पैर आगे कर खडा हो तो सर्पने, अगर दोनों पैर बराबर कर खडा हो तो नपुंसक सर्पने काटा है ऐसा विचार कर लेना चाहिये ॥ ५ ॥

दूतस्य मन्त्रिणो वा वहेदिडापिङ्गलाद्वयं वायुः ।
स्त्रीपुन्नपुंसकैस्तैः क्रमेण दष्टं विजानीयात् ॥ ६ ॥

दूत अथवा मन्त्रीके इडा (शरीरके वामभागमें स्थित नाडी जो बायीं तरफके मुष्कसे लेकर वामनासिकापर्यन्त धनुषकी तरह टेढी हुई आती है) से श्वास आता हो तो जान ले कि सर्पणीने उस पुरुषको डसा है अगर पिंगला (दक्षिण अण्डकोषसे दक्षिणनासिकापर्यन्त धनुषकी तरह टेढी हुई नाडी आती है) से श्वास आता हो तो जान ले कि उस पुरुषको सर्पने डसा है अगर इडा और पिंगला दोनोंसे आता हो तो जानले कि उस पुरुषको नपुंसक सर्पने डसा है ॥ ६ ॥

जीर्णदेवकुलवृक्षकोटरे वंशमूलमृतकाननेऽह्रयः ।
ये वसन्ति विविधा हि गह्वरे ते भवन्ति जनमृत्यु-
कारणम् ॥ ७ ॥

कौनसे स्थानोंके सर्प विषैले होते हैं इसका विवेचन करते हैं। जो सर्प टूटे हुए मन्दिरोंके, दरख्तोंकी खोखलोंमें, बांसकी जडमें, पुराने जंगलोंमें और जो २ अनेक प्रकारकी बिलोंमें रहते हैं वेही सर्प पुरुषोंकी मृत्युका कारण होते हैं ॥ ७ ॥

सिन्धुसङ्गतिषु पादपे बिले द्वीपकूपकुलिशेषु शिग्रुषु।
वेत्रपत्रगहने चतुष्पथे व्यापदे भवति पन्नगो दशत् ॥ ८

दो नदियोंके मिलापके पास जिनकी बिल है अथवा खराब कूए और द्वीपके पास जिनकी बिल है और जो सोहांजन तथा बेंतके जंगलमें तथा चौरस्तेमें रहते हैं वह सर्प विषैले होते हैं ॥ ८ ॥

गुलिकस्योदयकाले (?)यो यो वारेषु मन्त्रिभिः कथितः
तस्मिन् फणिदष्टस्य प्रतिकारविधिर्न भवेज्जातु ॥ ९॥

जिस २ दिनके प्रति ज्योतिषवेत्ता (मंत्रवेत्ताओं) ने सर्पका डसना बुरा बतलाया है, अगर सूर्योदय होते हुए सर्प उस दिन काट ले तो उसकी चिकित्सा नहीं हो सक्ती ॥ ९ ॥

पूर्वस्मिन् दक्षिणे वामे पृष्ठे स्ववपुषः क्रमात् ।
भागे दंशन्ति भुजगा द्विजात्याद्यन्वयोद्भवाः ॥ १० ॥

अगर सर्प अपने शरीरके पूर्वमें अथवा दक्षिणमें और ऐसेही उत्तरमें तथा पश्चिममें होकर डसे तो क्रमसेही उसको ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जातिका जाने ॥ १० ॥

एकोऽथवा त्रयो वा दंशा बहुवेदनाः स्रवद्रुधिराः ।
काकांघ्रिचक्रकूर्माकाराश्च नयन्ति यमसदनम् ॥ ११ ॥

एकही अथवा तीन दंश (डसन) पर्यन्त काटे हुए सर्पसे और जिसमें अधिक पीडा तथा रुधिरका स्राव हो अथवा कौएके पाँवोंके सदृश तथा रथ और कूर्म (कछुए) के सदृश काटे हुएका चिह्न हो वह अवश्यही मर जाता है ॥ ११ ॥

भ्रूमध्ये त्रिकवक्षस्तनोष्ठतालुहृदयनाभिगले ।
शंखयुगचिबुककुक्षिस्कन्धशिरस्तालुमूलफलगुदेषु १२
कक्षे सन्धिषु नृणां स्याद्यदि दंशा भुजङ्गदशनकृताः ।
तमसाध्यविषं प्राहुर्मन्त्रध्यानौषधादीनाम् ॥ १२ ॥

अब स्थानको निर्देश करते हैं कि शरीरके किस अंगपर सर्प काटे तो असाध्य होता है यथा भ्रू (भौंओं) के मध्यमें, त्रिक (कमरका हिस्सा), वक्षस्थल, स्तन, ओष्ठ, तालु, हृदय, नाभि, गल, शंखमर्ममें (ललाटके अन्तमें कानके पासमें जो मर्म

है उसे शंख कहते हैं), चिबुक, कोख, कन्धे, शिर, तालु, जननेन्द्रिय, गुदा, कक्ष तथा सन्धिस्थानोंमें काटे तो चिकित्सा नहीं हो सक्ती ॥ १२ ॥ १३ ॥

नखेष्वधरयोर्हस्ततलयोरपि नीलिमा ।
दृश्यते यत्र तं मन्त्री मृतमेवाध्यवस्यतु ॥ १४ ॥

अगर नखोंमें तथा ओष्ठोंमें अथवा हाथके तलमें भी सापके काटनेसे नीला रंग दिखाई देता हो तो मंत्रवेत्ताओंको असाध्य समझना चाहिये ॥ १४ ॥

देहेऽप्यसाधनस्पर्शे कृतेऽप्यङ्गं न कम्पते ।
यस्य जीवयितुं तं न प्रभवेदपि पक्षिराट् ॥ १५ ॥

जिस पुरुषको सर्पने अच्छी तरह स्पर्श किया है तबभी उसका अंग कम्पायमान नहीं हुआ तो उसको गरुडभी जिन्दा नहीं कर सक्ता ॥ १५ ॥

प्रतिमां स्वामादर्शे सलिले वा नावलोकेत ।
घ्राणाग्रं भ्रूमध्यं दष्टो यः स क्षणान्म्रियते ॥ १६ ॥

जो कि अपनी प्रतिमाको शीशेमें तथा पानीमें न देख सके और जिसके नाकके अग्रभागमें तथा भ्रूके मध्यमें काटे तो क्षण पीछे मरही जाता है ॥ १६ ॥

नखाग्रभागेषु नखान्तरे वा प्रपीडनं वेत्ति न योऽहिदष्टः । यो हस्तरुद्धश्रुतियुग्मरन्ध्रो नादं नितान्तं शृणुयान्महान्तम् ॥ १७ ॥ ज्वलनदीपशिखेन्दुदिवाकरान् यदि न पश्यति भोगिविषार्दितः । स्वकरमूर्धजसंचयलुञ्चनः स च यमालयमाविशति ध्रुवम् ॥ १८ ॥

जिसको सर्पने काटा है अगर उस पुरुषके नखोंके अग्रभागमें तथा नखोंके बीचमें दबानेसे पीडा न हो अथवा जो कि कानोंको बन्द कर निरंतर बडे भारी शब्दको सुनता हो, और ऐसेही जलते हुए दीपककी शिखाको तथा चन्द्रमा और सूर्यको न देखता हो अथवा अपने शिरके बालोंको अपने हाथोंसे नोचता हो इस तरहका सर्पसे डसा हुआ पुरुष अवश्यही यमराजकी सेवामें चला जाता है ॥ १७ ॥ १८ ॥

स्वरैः षोडशभिर्जप्तं (?) वार्यन्तर्यदि गच्छति ।
दष्टस्य यस्य तस्य स्याज्जीवितं मृतिरन्यथा ॥ १९ ॥

जिस पुरुषको सर्पने काटा है अगर वह १६ वार स्वरसे ओंकारका जाप करता हुआ पानीमें चला जाता है तो वह जीवनको प्राप्त होता है अन्यथा मरणको प्राप्त होता है ॥ १९ ॥

दंशस्योपरि सहसा ज्वलनं चतुरङ्गुले प्रयुञ्जीत ।
तस्याचूषणमथवा प्लोतान्तरितस्य विदधीत ॥ २० ॥

सर्पने जिस स्थानपर काटा हो उस जगह चार अंगुल परिमाणमें अग्निसे दग्ध करे और रक्तको निकालदे अथवा दग्ध कर लेपादि लगाकर पट्टी वगैरह बांध दे ॥ २० ॥

विषं जयेत् स्थावजरङ्गमानां छर्द्या विरेकेण च शोधितस्य । नस्याञ्जनालेपनपानयोगैः सेव्यादिना रात्रियुगादिना च ॥ २१ ॥

स्थावरविष (मीठा तेलिया वगैरह) जंगम विष (सर्पादिविष) इन दोनों विषोंकी सामान्य चिकित्साकी रीति कहते हैं यथा कोई पुरुष जंगम अथवा स्थावर विषसे पीडित हो उसको वमन तथा विरेचन देकर शुद्ध करे अथवा विषहारी नुस्वार तथा अंजन और लेपसे तथा आषधपान जैसे सेव्य (खस) के योगसे और दोनों हलदियोंसे सिद्ध औषधिको देवे ॥ २१॥

दन्ताद्घ्राणादक्ष्णोर्देहाद्वा दंशदेशमात्रेण ।
लिम्पेन्मलेन च ततो नातिक्रामेद्विषं दंशात् ॥ २२ ॥

दांत, नासिका, नेत्र अथवा देहके ही मलसे उस स्थानको

लेप दे जहां कि किसीने काटा है तो विष उस स्थानके अतिरिक्त और स्थानपर नहीं जाती ॥ २२ ॥

आस्याम्बुसमुपेतेन मलेन श्रोत्रजन्मना ।
सद्यो लेपाद्विषं दंशान्नातिक्रामति जातुचित् ॥ २३ ॥

मुखकी लारसे कानकी मैलको मिलाकर तत्काल दंशस्थानमें लगा देनेसे विष आगेको नहीं फैलता है ॥ २३ ॥

कृतव्रणे नखाग्रेण दंशे दन्तमलेन वा ।
विशाखां मर्दयेत् सर्वविषघ्नामथ भक्षयेत् ॥ २४ ॥

दंश (काटे हुए) स्थानमें नखोंसे छीलनेसे व्रण हो जावे अथवा दांतोंके मलसे व्रण हो जावे तो विशाखा (इट्टसिट्) को मले अथवा सम्पूर्ण विषोंके दूर करनेके निमित्त इट्टसिट्का भक्षण करे ॥ २४ ॥

सद्यो लोहादिभिस्तप्तैर्ज्वलनज्वालयाऽथवा ।
दंशप्रदेशे दष्टस्य दाहो विषविकारजित् ॥ २५ ॥

सर्प आदिके दंशस्थानपर तत्काल लोहा वगैरह तपाकर अथवा अग्निकी ज्वालासे ही उस स्थानको दग्ध करे तो सम्पूर्ण विष दूर होते हैं ॥ २५ ॥

क्षां क्षीं क्षुं क्षैः क्षौः क्षः संजप्त्वा वारिभिर्मुहुः सेकात्।
दष्टमनुष्यस्य स्यान्निर्विषता तु क्षणेनैव ॥ २६ ॥

सर्पादिसे काटे हुए पुरुषपर ॐ क्षां क्षीं क्षुं क्षैः क्षौः क्षः इस मन्त्रसे जाप किये जलको बार २ छिडकनेसे ही तत्क्षणमें विष दूर हो जाता है ॥ २६ ॥

ॐ सुवर्णरेखे कुक्कुटविहगरूपि स्वाहा।
विद्यात् सुवर्णरेखेयमेतज्जप्तेन वारिणा ॥ २७ ॥

सुवर्णरेखे ॐ कुक्कुट विहगरूपि स्वाहा इस सुवर्णरेखासे जाप किये जलको भी बार २ काटे हुए पुरुषपर छिडकनेसे विष दूर हो जाता है ॥ २७ ॥

दष्टस्यांगसमासेकः कृतः स्याद्विषवेगजित्।
वामहस्ते स्वरैश्चंद्रमण्डलेन च वेष्टितम् ॥ २८ ॥

दंशस्थानपर जलका सिंचन करनेसे तथा बायें हाथमें उपरोक्त मंत्रोंको लिखकर स्वच्छ कपडेमें बांधकर बांधनेसे विषका वेग कम हो जाता है ॥ २८ ॥

ध्यायेच्छंकरममलं स्रवन्तममृतं मुहुः।
तेन हस्तेन संस्पृष्टं भस्मवाय्वौषधादिकम् ॥

विकीर्णे द्रागपाकुर्याद्विषरोगग्रहादिकान् ॥ २९ ॥

शुद्ध पवित्र अमृतके दाता श्रीशंकरका ध्यान करना चाहिये, उसके हाथसे स्पर्श किये हुए भस्म जल औषध आदिको भी दंशस्थानपर डालनेसे विषरोग तथा ग्रह आदिके दोषोंका नाश होता है ॥ २९ ॥

न्यस्य वकारं शीर्षे वर्षंतं श्वेतममृतधाराभिः ।
स्नपयंतं सकलतनुं संपूर्णं शशधरं पुनर्हृदये ॥ ३० ॥
चिंतयति पूर्णमेवं विषणिर्नाशं समुपयाति ।
क्षणमात्रादपि लोके भूतग्रहडाकिनीदोषाः ॥ ३१ ॥

वकार (कर्पूर) को शिरमें रखकर ऊपरसे ठण्डे अमृत-तुल्य शीतल जलकी धाराओंको डालकर स्नान करे तदनंतर कर्पूरको हृदयपर रखे, इससे सब प्रकारके विष और भूतग्रहादि दूर हो जाते हैं ॥ ३० ॥ ३१ ॥

लवणार्धपलोपेतश्चिञ्चापल्लवजो रसः ।
कुडवप्रमितः पीतो विषं हंति फणाभृताम् ॥ ३२ ॥

दो तोले लवणको पावसेर इमलीके रसमें मिलाकर पीनेसे काले सांपकी विष दूर हो जाती है ॥ ३२ ॥

अन्नैर्हिंगूपेतैः सुरदाल्याश्चूर्णितैः शकलैः ।
दत्तं नस्यं त्रिदिनात् सर्पविषध्वान्तमार्तण्डः ॥ ३३ ॥

घगरवेलके टुकडोंका चूर्ण करके और हींगसे मिले हुए अन्नसे तीन दिनतक नुस्वार देनेसे सांपकी विष दूर हो जाती है ॥ ३३ ॥

अपनयति घातकहस्तः परिभावितो बहून् वारान् ।
फणिवल्लीदलसलिलैः सकलं गरलं न संदेहः ॥ ३४ ॥

हाथपर सांपके काटे जानेपर फणिवल्ली (पान) के रसको बहुत बार उस जगहपर डालनेसे सम्पूर्ण विष दूर हो जाता है इसमें संशय नहीं ॥ ३४ ॥

तदहर्जवत्सशकृता तगरेणापि प्रवर्तिता वर्तिः ।
नृजलेन कल्किता स्याद्विषहन्नस्यादिषु विकीर्णा३५॥

तत्काल किये हुए बछडेकी विष्ठा लेकर तगर मिलाकर और मनुष्यके मूत्रसे पीसकर बत्ती बना ले उसकी नस्य वगैरह देनेसे विषका नाश होता है ॥ ३५ ॥

व्योषनवनीतदधिमधुसैंधूत्थमधूकवृक्षसाराणाम् ।
उपयोगाद्वासुकिना दष्टोऽपि भवेत् क्षणादविषः॥३६॥

मघा, मरिच, सोंठ, मक्खन, दही, शहत, नमक, मोआ वृक्षका सार इनको पीसकर इसके प्रयोगसे क्षण पीछे ही विष दूर हो जाता है ॥ ३६ ॥

भूनागं मरिचं हिंगु लवणं केसरास्थि च ।
नृजलेनैव नस्याद्यैः सर्पादिविषनाशनम् ॥ ३७ ॥

भूनाग (गण्डोये), मरिच, हींग, नमक और केसरकी जडको मनुष्यके मूत्रसे पीसकर सर्पादिकी विष दूर करनेके निमित्त नस्य वगैरहमें प्रयोग करना चाहिये ॥ ३७ ॥

काकमाचीरसेनैव रसोनमरिचौ भिषक् ।
पिष्ट्वा नस्याञ्जनालेपैरहेर्विषमपोहति ॥ ३८ ॥

लहसन और मिरचको कैंचमैंचके रससे पीसकर विषके नाशके लिये नस्य, अंजन तथा लेप वगैरहसे प्रयोग करना चाहिये ॥ ३८ ॥

आस्फोतमूलं विश्वेन श्वेतार्कक्षीरभावितम् ।
नृजले नस्ययोगेन बोधयेद्देहिनं मृतम् ॥ ३९ ॥

लाल आककी जडको तथा सोंठको सफेद आकके दूधमें तथा मनुष्यके मूत्रमें पीसकर नस्य देनेसे मरा हुआभी पुरुष जीवित हो जाता है ॥ ३९ ॥

अग्निमन्थमधूकसारहरितमञ्जरीमूलरु-
ङ्माणिमन्थमथाशु गोपयसा विलिप्य तमापिबेत् ।
नासिकाङ्घ्रिकृकाटिकाहृदयोरुचूतपालिकान् (?)
बिंदुषट्ककबिडालमूषिकजं विषं विनिवारयेत् ॥४०॥

अगेथु गनियार, मौआका सार, तुलसीकी जड, कुठ, लवण इन चूर्णको गोमूत्रमें मिलाकर पीवे तथा नासिका, पाद, कृकाटिका (शिर और ग्रीवाकी संधि) हृदय, ऊरु और चूतपालिक पर लेप करनेसे बिन्दुषट्क, बिल्ली और चूहेके विषका नाश होता है ॥ ४० ॥

संचूर्ण्य वस्त्रबद्धं केसरपुष्पं च त्रिकटुं च ।
वृश्चिकविद्धे देशे तिलजयुतं स्वेदितं जयेत्तोदम् ॥४१

केसरके फूलोंको और मघा, मरिच, सोंठका चूर्ण कर और कपडेमें बांधकर उष्ण तिलतैलमें डालकर बिच्छूसे काटे स्थानमें स्वेद देनेसे बिच्छूके दंशकी पीडाका नाश होता है॥४१॥

दिवसकरदुग्धतुल्यं तीक्ष्णतरचूर्णमाशु संलितम् ।
घनरव इव नागकुलं वृश्चिकविषमाशु नाशयति॥४२॥

आकके दुधके तुल्य मरिचके चूर्णको मिलाकर बिच्छूसे

काटे स्थानपर लेप करनेसे विच्छूकी विषका इस तरहसे नाश होता है जैसे मेघोंकी घरघराहटको सुनकर सांप दौड जाते हैं॥४२

हरति वृश्चिकजं विषमञ्जसा लवणनागवलान्वितले-
पनम् । मदनमाशु यथा रतिवल्लभं हरललाटदृगु-
त्थितपावकः ॥ ४३ ॥

जिस तरहसे शिवजीके नेत्रसे निकली हुई चिनगारीसे कामदेव मदनका नाश होता है उसी तरह लवण तथा पानका अञ्जसाके साथ लेप करनेसे वृश्चिक (विच्छू) की विषका नाश होता है ॥ ४३ ॥

ताम्बूलं गोमयोपेतं भक्षयेद्वृश्चिकातुरः ।
सहसैव तु तद्व्याधिर्नाशं याति न संशयः ॥ ४४ ॥

विच्छूके दंशसे पीडित पुरुष अगर गोवरसे संयुक्त पानको खा लेता है तो निस्सन्देह विच्छूकी विषका नाश हो जाता है४४॥

विशुद्धवारनक्षत्रे गृहीता काश्मरीशिफा ।
दूर्वासहस्रं तत्स्पर्शो दंशं वृश्चिकजं जयेत् ॥ ४५ ॥

शुभ दिन तथा शुभ नक्षत्रमें गम्भारीकी जडको तथा सहस्रदूर्वको उखेडकर रख ले जब विच्छू काटे तो इनके स्पर्श-मात्रसे ही विच्छूकी पीडाका नाश होता है ॥ ४५ ॥

शीता वृश्चिकविद्धस्य स्विद्यते कम्पते तनुः ।
आतपं वाञ्छति सदा रेतश्च स्रवति क्षणात् ॥ ४६ ॥

बिच्छूसे काटे हुए पुरुषका शरीर शीत गरम होता है और कांपता है और सर्वदा वह धूपमें जाना चाहता है तथा क्षणके पीछे उसका वीर्य निकलता रहता है ॥ ४६ ॥

निर्गुण्ड्यर्कदलैः क्षुण्णैः सकरीषैर्विपाचितैः ।
ऊष्मस्वेदो हितस्तस्य वचालवणनागरैः ॥ ४७ ॥
साहिगन्धैः सतक्रैश्च सुपिष्टैः स्वेदयेत् पुनः ।
तान् पाययेद्भिषक् तं च मर्दयेत् कोष्णभस्मना ॥
सुखीभवेद्विषघ्नैश्च भोजनैस्त्रिदिनान्तरम् ॥ ४८ ॥

सम्भालू तथा आकके पत्ते पीसकर जंगली उपलोंसे पकाकर ऊष्मस्वेद करना चाहिये फिर वच, लवण, सोंठ और असगंधके चूर्णको तक्रसे पीसकर स्वेद करे अथवा इस चूर्णका पान करे और गरम राखसे उस दंशस्थानको मर्दन करे इसी तरहसे तीन दिनतक विषको हरनेवाले भोजनके सेवनसे सुख प्राप्त होता है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

उपानत्प्रहारो मयूरप्रलेपो विषं हन्त्यलर्कोद्भवं सद्य एव । तथा सर्पिषा चाशु कोष्णेन सेकस्त्वलर्कारिपत्रोपनाहश्च रात्रौ ॥ ४९ ॥

उपानत्प्रहार (मंत्रयंत्रके प्रयोग) से और पुठकंडेका लेप लगानेसे शीघ्रही अलर्कविष (आककी विष) का नाश होता है, अथवा कुछ गरम घीसे शरीरपर सेक करे और रात्रि अलर्कारिके पत्तोंसे उपनाह (स्वेद) दे अर्थात् गरम कर २ के शरीर पर लगावे ॥ ४९ ॥

घननादशिफा पिष्टा पीता तण्डुलवारिणा ।
प्रणाशयेद्धृतोपेता निखिलं कृत्रिमं विषम् ॥
वरागूढकृतः स्वेदो दंशे श्वविषनाशनः ॥ ५० ॥

चौलाईकी जडको चांवलोंके पानीसे पीसकर पीनेसे सम्पूर्ण बनावटी विषोंका नाश होता है । कुत्तेकी विषके नाशके लिये त्रिफलाके चूर्णको गरम कर स्वेद देना चाहिये ॥ ५० ॥

आढकार्धवसुभागपेषितं नालिकेरफलवल्कलोकदम् ।
आखुसंभवविषं विनाशयेत्तिन्तिणीकमिव साम्लकाञ्जिकम् ॥ ५१ ॥

नारियलके फलके छीलडको १६ तोले जलसे पीसे इसका लेप चूहेकी विषका इस प्रकार नाश करता है जैसे अम्ल काञ्जी इमलीकी खटाईको दूर करती है ॥ ५१ ॥

अलर्कस्वरसं प्रातस्तैलयुक्तं दिनत्रयम् ।
यः पिबेन्मौषिकी बाधा तस्य जन्मान्तरेऽपि न ॥५२॥

आकके रसमें तेल मिलाकर प्रातःकाल तीन दिनतक पीनेसे जन्मान्तरमें भी चूहेकी विषका भय नहीं होता ॥ ५२ ॥

बहुलं प्रलिप्य सर्पिः क्षणमभितः सपदि दष्टवत्याखौ ।
मार्जारेण त्रिदिनं त्रिसन्ध्यमवलेहयेन्मतिमान् ॥ ५३॥

जहां चूहेने काटा हो उस स्थानमें बहुतसे घीका शीघ्र लेप करदे और जब बिल्लीने काटा हो तो प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकाल घीको चाटना चाहिये (?)॥ ५३ ॥

प्रलेपः स्यात्तु वातारिशाल्मलीक्काथितैर्जलैः ।
गैरिकद्विनिशाभिर्वा नखदन्तविषे हितः ॥ ५४ ॥

एरण्ड और सिम्बलके क्काथसे गैरिक और दोनों हलदियोंके चूर्णको पीसकर दांत और नखके लग जानेसे उत्पन्न विषके स्थानपर लेप करना उत्तम होता है ॥ ५४ ॥

रक्तपुच्छफलालिकानिशितिंत्रिणीसहितोदन-
स्पर्शमापदमाशु निर्विषमं भवेदथवाक्षतम् (?) ।
भुक्तवानध ऊर्ध्वमप्यतिसार्यते हृतसंज्ञक-
स्तं भिषग्घननादवारिजलेपनैः परिपालयेत् ॥ ५५ ॥

रक्तपुच्छ (रत्ती), फलालिका तथा हलदी, इमली इनके सहित चांवलोंके स्पर्शमात्रसे विष दूर हो जाता है, विष पिये हुएको दस्त और कै कराकर उस वेहोशको नागरमोथा और कमलको पीसकर लेप करके उसकी परिचर्याको करे ॥५५॥

लीढः क्षौद्रसितायुक्तश्चूर्णस्ताम्रसुवर्णयोः ।
स्यात् स्थावरविषध्वान्तसन्तानैकदिवाकरः ॥ ५६ ॥

ताम्बेकी भस्म और सोनेकी भस्मको शहत और मिसरी मिलाकर चाटनेसे स्थावर विषके नाशके लिये यह योग सूर्यके समान है ॥ ५६ ॥

तिलमद्यदिवास्वप्नव्यायामातपमैथुनम् ।
कोपं तैलं कुलत्थांश्च विषार्तो वर्जयेत्सदा ॥ ५७ ॥

इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां वैद्यमनोरमायां विषचिकित्साधिकारो नामैकोनविंशतितमः पटलः ॥ १९ ॥

तिल, मदिरा, दिनमें सोना, कसरत, धूपका सेकना, मैथुन, क्रोध, तैल, कुलथी इन सबका सर्वदा विषरोगीको परिहार करना चाहिये ॥ ५७ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनी-टीकायां विषचिकित्साधिकारो नामैकोनविंशतितमः पटलः ॥ १९ ॥

अथ रसायनवाजीकरणाधिकारो नाम विंशतितमः पटलः।

इस पटलके शीर्षकको देखतेही यह मनमें विचार उठता है कि रसायन तथा वाजीकरण किसका नाम है इसलिये रसायन तथा वाजीकरणके लक्षणको लिखकर तथा संक्षेपसे व्याख्या की जाती है। रसायनका विचार हरएक वैद्यकके छोटे ग्रन्थसे लेकर बडेसे बडे चरक सुश्रुत वगैरह पर्यन्त एकसाही विचार है यथा—

रसायनलक्षणम्।

रसायनं तु तज्ज्ञेयं यज्जराव्याधिनाशनम्। शा० सं०।
स्वस्थस्यौजस्करं यत्तु तद्वृष्यं तद्रसायनम्। चरके०।

जो औषधि देहकी वृद्धावस्था और ज्वरादि रोगोंका नाश करे उसको रसायन कहते हैं। जो स्वस्थकी बलकारक है, वहीं

वृष्य तथा रसायन है। इसके आगे चरकऋषिने रसायनके दो भेद किये हैं जैसे १ कुटिप्रावेशिक २ वातातपिक । इसके आगे रसायनके सेवनका फल बतलाते हैं जैसे—

दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः।
प्रभावर्णस्वरौदार्यं देहेन्द्रियबलं परम् ॥
वाक्सिद्धिं प्रणतिं कान्तिं लभते ना रसायनात् ॥

दीर्घ आयु, स्मृति, मेधा, आरोग्य, तरुण अवस्था, प्रभा, वर्ण, स्वर, उदारता, देह तथा इन्द्रियोंमें परम बल, वाणीकी सिद्धि, भिन्नता तथा शरीरकी कान्ति रसायनसेवी पुरुष प्राप्त होता है। अब इसके आगे यह विचार उठता है वह किस अवस्था तथा किसको सेवन करनी चाहिये इस बातका विचार सुश्रुतऋषिने किया है जैसे—

पूर्वे वयसि मध्ये वा मनुष्यस्य रसायनम्।
प्रयुंजीत भिषक् प्राज्ञः स्निग्धशुद्धतनोः सदा ॥

प्रथम अवस्थामें अथवा मध्यम अवस्थामें मनुष्यको विरेचनादिसे शुद्ध कर वैद्य रसायनका प्रयोग करवावे। अब इस बातका विचार करना चाहिये कि कौनसी औष-

थिये रसायन. वैसे तो वैद्यमनोरमामें रासायनिक योग आपको मिले पर संक्षेपरूपसे शार्ङ्गधरमें लिखा है, जैसे ' यथामृता रुदन्ती च गुग्गुलश्च हरीतकी ' अब वाजीकरणका विचार करते हैं।

वाजीकरणलक्षणम्।

सेवमानो यदौचित्याद्वाजीवात्यर्थवेगवान्।
नारीस्तर्पयते तेन वाजीकरणमुच्यते ॥ सुश्रुते।

जिस पदार्थके उचित प्रकारसे सेवन करनेसे मनुष्य घोडेकी तरह अत्यंत वेग और पराक्रमवाला होकर स्त्रियोंको (मैथुनसे) तृप्त करे उसे वाजीकरण कहते हैं। अब इसका विचार करते हैं कि यह वाजीकरण औषधियां किसको सेवन करनी चाहिये।

स्थविराणां रिरंसूनां स्त्रीणां वाल्लभ्यमिच्छताम्।
योषित्प्रसंगात्क्षीणानां क्लीबानामल्परेतसाम् ॥
विलासिनामर्थवतां रूपयौवनशालिनाम्।
नृणां च बहुभार्याणां योगा वाजीकरा हिताः ॥

स्थविर (जिनकी युवावस्था ढल गई हो जैसे चालीसवर्षसे ऊपरकी अवस्थावाले) रिरंसु (जिनकी रमणक्रीडाकी इच्छा

अधिक हो) जो स्त्रियोंके प्यारे होनेकी इच्छा रखते हों और जो अधिक स्त्रीप्रसंगसे क्षीण नपुंसक हो गये हों, जो नपुंसक हों, जिनमें शक्तिही न रही हो अर्थात् चैतन्यता न होती हो, तथा जिनका वीर्य थोडा होगया हो या ध्वजभंग हो, विलासी (भोगविलास करनेवाले), द्रव्यवान्, सुन्दररूप और यौवनवाले, जिनके घरमें वहुत रमणियां हों उन मनुष्योंको वाजीकरणयोगोंका प्रयोग करना चाहिये. शार्ङ्गधरमेंभी वाजीकरणका लक्षण तथा संक्षेपसे वाजीकर औषधियां लिखी हैं यथा । " यस्माद्द्रव्याद्भवेत्स्त्रीषु हर्षो वाजीकरं च तत् । यथा नागवलाद्यास्तु वीजं च कपिकच्छुजम् ॥ "

मम सत्यप्रतिज्ञेयं यूयं शृणुत पण्डिताः ।
पथ्यायाः सदृशं किञ्चित् कुत्रचिन्नैव विद्यते ॥ १ ॥

मैं सत्य प्रतिज्ञा करता हुआ कहता हूं, कि हरडके जैसी कोई रसायन औषधी कहींभी नहीं है ॥ १ ॥

पथ्याशी व्यायामी स्त्रीषु जितात्मा नरो न रोगी स्यात् । यदि मनसा वचसा वा द्रुह्यति नित्यं न भूतेभ्यः ॥ २ ॥

हरडका ठीक रीतिके अनुसार ' सिन्धूत्थशर्कराशुण्ठीकणामधुगुडैः क्रमात् । वर्षादिष्वभया प्राश्या रसायनगुणैषिणा ॥ " अर्थात् हरडके सेवनकी रीति भावप्रकाशमें इस तरहसे लिखी है कि छहों ऋतुओंमें जो हरडको सेवन करना चाहते हैं वह वर्षाऋतु (बारिष) में सेन्धे लूनके साथ, शरदृतु (सरदीके मौसिम) में शक्करके साथ, हेमन्तऋतुमें सोंठके साथ, शिशिरऋतुमें पीपलिके चूर्णके साथ, वसन्तऋतुमें शहतके साथ और ग्रीष्मऋतुमें गुडके साथ हरडको खाना चाहिये. इस रीतिके अनुसार सेवन करनेवाला, व्यायाम करनेवाला और स्त्रियोंमें मनको न लगानेवाला और मनसे तथा वाणीसे प्राणिमात्रके साथ द्वेष न करनेवाला हो तो कभी रोगी नहीं होता ॥ २ ॥

त्रिफलाभोजिनः पुंसः पथ्यान्नमितभोजिनः ।
रोगा भवन्ति निर्वीर्या विप्रा इव निरग्नयः ॥ ३ ॥

त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला) के सेवन करनेवाले तथा हितकारक तथा परिमित भोजनको करनेवाले पुरुषको अगर व्याधि होगी तो निर्बल होती है जैसे अग्निहोत्रादिको न करनेवाले ब्राह्मण निर्बल होते हैं ॥ ३ ॥

छेदं च शाल्मलितरौ रन्ध्रे संस्थाप्य जीवतः ।
आदाय भक्षयेत् पथ्यां क्षीराशी विजरो भवेत् ॥ ४ ॥

शाल्मलि (सेंवल) वृक्षमें छिद्र करके हरड भर दे फिर कुछ दिन पीछे उसे निकालकर खाया जावे और ऊपरसे दुग्धका सेवन किया जावे तो बुढापा नहीं आता ॥ ४ ॥

आमलकीफलचूर्णं क्षौद्रेणाज्येन वा सायम् ।
लीढं नासाहक्श्रुतियौवनबुद्ध्यग्निसंजननम् ॥ ५ ॥

आमलेके चूर्णमें शहत और घी मिलाकर सायंकालके समय चाटनेसे नाक, कान तथा नेत्र अपना काम भली प्रकारसे करते रहते हैं, पुरुष सदा युवाही रहता है, बुद्धि बढती है तथा मन्दाग्निव्याधिसे कभी पीडित नहीं होता ॥ ५ ॥

चूर्णं धात्र्यभयाक्षाणां नीलीं वा नलदानपि ।
लीढ्वा कालेषु नीरोगी हविर्गुडमधुक्रमात् ॥ ६ ॥

हरड, बहेडा, आंवलेके चूर्णको घृतके साथ अथवा नीली-के चूर्णको गुडके साथ अथवा खसखसके चूर्णको शहतके साथ समयपर चाटनेसे मनुष्य व्याधिसे पीडित नहीं होता ॥ ६ ॥

पथ्याधात्रीमुस्तकविडङ्गलोहाग्नयः क्रमाद्वृद्धाः ।
चूर्णीभूता लीढाः क्षौद्रेण समस्तरोगहराः ॥ ७ ॥

हरड १ भाग, आंवले २ भाग, नागरमोथा ३ भाग, वाय-विडंग ४ भाग, अगुरु ५ भाग, चित्रक ६ भाग लेकर चूर्ण कर ले, इस चूर्णको शहतके साथ खानेसे सब रोग दूर होते हैं ॥ ७ ॥

प्रातःकाले धात्रीं भुक्त्वा पथ्यां रात्रौ चाक्षं नित्यम् ।
खादन् सर्वान् व्याधीन् जित्वा जीवेत्सूर्यो यावच्चेन्दुः ८

जो पुरुष प्रातःकाल आँवलोंको तथा सायंकालको हरडके चूर्णको और नित्यही (अर्थात् जिस समय इच्छा हो उस समय) बहेडेको खाता हो तो वह जबतक चन्द्रमा तारागण विद्यमान हैं तबतक जीवित रहता है (अर्थात् चिरकालतक जीवित रहता है) ॥ ८ ॥

लौहे पात्रे लिप्तां पथ्यां लीढाऽन्येद्युः सर्पिः क्षौद्रम् ।
व्याधीन् जित्वा स्थायीकुर्यान्नित्यं देहं निःसन्देहम् ॥ ९ ॥

हरडका चूर्ण कर और उस चूर्णको पानीमें मिलाकर लोहेके पात्रमें लेप करदे और दूसरे दिन शहत और घी मिला-कर चाटनेसे व्याधियोंका नाश होकर दृढ शरीर हो जाता है ॥ ९ ॥

माधवमधुगुडसैन्धवसितोपलानागरैः पृथक् पथ्या ।
शिशिरादिष्वभ्यस्ता व्याधिचयं विजयते नॄणाम् १०

शिशिरऋतुमें जीरेके साथ, वसन्तमें शहतके साथ, गरमीमें गुडके साथ, वर्षामें सेंधे निमकके साथ, शरदृतुमें चीनीके साथ और हेमन्तऋतुमें सोंठके साथ हरडके चूर्णको खानेसे सम्पूर्ण व्याधियोंका नाश हो जाता है ॥ १० ॥

कुष्ठचूर्णं समध्वाज्यं प्रत्यूषे प्रपिबेन्नरः ।
सुगन्धसुन्दरवपुश्चिरं जीवेदनामयः ॥ ११ ॥

जो पुरुष घृत और शहत मिलाकर (घी और शहत बराबर २ नहीं लेने चाहिये) प्रातःकाल कुठके चूर्णको पीता है, उसका शरीर सुन्दर तथा सुगन्धिमय बन जाता है और वह देरतक संसारके सुखोंका भोग करता रहता है ॥ ११ ॥

मुस्ताहपुषयोश्चूर्णं पयसा सह यः पिबेत् ।
सघृतं तस्य देहः स्याद्धुवभावमनोहरः ॥ १२ ॥

हपुषा (हौवेर) और नागरमोथाके चूर्णको जो पुरुष दूध और घीसे मिलाकर पीता है वहभी पूर्वोक्त गुणोंको प्राप्त करता है ॥ १२ ॥

पथ्याशुण्ठ्योश्च यच्चूर्णं प्रभाते मधुसर्पिषा ।
लीढं रसायनं श्रेष्ठं वलीपलितनाशनम् ॥ १३ ॥

हरड और सोंठके चूर्णको जो पुरुष प्रातःकाल शहत तथा घीसे मिलाकर चाटता है उसके मुखकी वलियोंका तथा अकालपलित (सफेद बाल) का नाश होता है ॥ १३ ॥

शुण्ठीसितोपलासिन्धुगुडक्षौद्रकणायुता ।
हिमादिषु पृथक् पथ्या सेविता स्याद्रसायनी ॥ १४ ॥

हरडको हेमंतऋतुमें सोंठके साथ, शिशिरमें चीनीके साथ, वसन्तमें सेंधे निमकके साथ, गरमीमें गुडके साथ, वर्षामें शहतके साथ और शरदृतुमें पिप्पलीके चूर्णके साथ खाया जावे तो रसायनके गुण प्राप्त होते हैं ॥ १४ ॥

तिलधात्रीफलचूर्णं समधुघृतं प्रतिदिनं प्रगे लीढम् ।
जनयेन्मासेन मतिं महतीं हन्याज्जरां च पराम् ॥१५॥

तिल और आंवलोंके चूर्णको एक मासतक प्रातःकाल घी और शहतके साथ खानेसे बुद्धि अत्यंत विकासको प्राप्त होती है और बुढापा दूर हो जाता है ॥ १५ ॥

प्रातः प्रातर्नसा पीतं वारि हन्ति जरागमम् ।
कासं श्वासं वलिं व्यङ्गं पालित्यं तिमिरं तथा ॥१६॥

सर्वदा प्रातःकालके समय नासिकासे पानी पीनेसे बुढापा,

खांसी, श्वास, वलिपलित, अंगविकार तथा बालोंका सफेद हो जाना और मन्ददृष्टिके दोषका नाश होता है ॥ १६ ॥

उदकं शाल्मलीमूलाद्व्रणिताद्गलितं घटे ।
शोषितं सतिलं खादेत् केवलं वा वृपायते ॥ १७ ॥

सींवलकी जडमें छिद्र कर नीचे घडा रख दे तब सींवलका जल घडेमें आ जायगा उस घडेमें तिल डालदे जब सींवलका जल जो घडेमें है सूख जावे तब उन तिलोंको खानेसे पुरुष घोडेके सदृश मैथुन करनेमें समर्थ हो जाता है ॥ १७ ॥

स्वप्याद्वामेन पार्श्वेन रात्रौ वाच्छन् सुखायुषी ।
उत्तिष्ठेत्तु ततः प्रातः शयनाद्दक्षिणेन च ॥ १८ ॥

अगर सुखकी इच्छा करते हो तो बाईं करवटसे सोओ और दाईं करवटसे उठो ॥ १८ ॥

पिप्पलस्य शृतं मूलफलपल्लववल्कलैः ।
क्षीरं घृतसितोपेतं पीतं रेतोविवर्धनम् ॥ १९ ॥

पीपलकी जड, फल पत्तों और त्वचासे दूध पकाकर घी और मिश्री मिलाकर पीनेसे वीर्य बढता है ॥ १९ ॥

श्वेतगिरिकर्णिकायाः पत्रं पयसा विपक्कमश्नीयात् ।
प्रातर्नरोऽङ्गनानां शतमपि गच्छेदपूर्ववद्रात्रौ ॥२०॥

श्वेत विष्णुक्रान्ताके पत्तोंको जलसे पकाकर प्रातःकाल खानेसे पहलेकी तरहही रात्रिमें १०० स्त्रियोंसे सम्भोग कर सक्ता है ॥ २० ॥

माषाक्षताश्वगन्धातिलमुसलीनां क्रमेण भागाः स्युः ।
सप्त नवैकैकं द्वे सर्पिषः पातिताः परं वृष्याः ॥ २१ ॥

माष ७ भाग, चावल ९ भाग, असगन्ध एक भाग, तिल एक भाग, मुसली २ भाग लेकर इनको घीमें पकावे वह घृत बहुतही बलकारक होता है ॥ २१ ॥

दशगुणदुग्धे सिद्धं शतावरीरसे घृतं प्राश्नन् ।
मधुमागधिकासहितं सशर्करं भवति रतिमल्लः ॥ २२ ॥

दशगुणा दूधमें तथा सतावरके रसमें सिद्ध घृतको शहत, पिप्पली और चीनी मिलाकर खानेसे पुरुष सम्भोग भली प्रकार कर सक्ता है ॥ २२ ॥

कुम्भे निधाय शकलीकृतमूरुपूगं
तत्रैव शाल्मलिजटागलितोदकेन ।
संभावितं दिनमुखे च रतौ च खादन्
वृद्धो भवेत् सुरतनाटकचक्रवर्ती ॥ २३ ॥

सुपारीके टुकडे कर एक वर्तनमें डालकर और ऊपरसे सीम्बलका जल डालदे, उन भीगी हुई सुपारियोंको प्रातःकाल और सम्भोगके समय खानेसे वृद्ध पुरुषभी ठीक तरहसे सम्भोग कर सक्ता है ॥ २३ ॥

अधुना शिवपादसेवकेन पृथगेषा सकलागमार्थरूपा । भिषजां मनोरमा जन्तुषां रोगसमाप्तये समाप्ता ॥ २४ ॥

इति श्रीवैद्यकालिदासविरचितायां समस्तायुर्वेदार्थरूपायां वैद्यमनोरमायां रसायनवाजीकरणाधिकारो नाम विंशतितमः पटलः२०

अब श्रीशिवके चरणोंके सेवक कवि कालिदासने सकल शास्त्रोंकी अर्थोंकी जतानेवाली वैद्यमनोरमा सकल मनुष्योंके रोगके नाशके निमित्त कर समाप्त की है ॥ २४ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यविरचितायां वैद्यमनोरमासुखबोधिनीटीकायां रसायनवाजीकरणाधिकारो नाम विंशतितमः पटलः ॥ २० ॥

इति भाषाटीकासहिता वैद्यमनोरमा समाप्ता ।

---

१ 'शिवपादशेखरेण' इति पाठांतरम् ।

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ धाराकल्पः ।

भाषाटीकासहितः ।

मंगलाचरणम् ।

अनन्तकल्याणगुणैकभाजनं निरन्तरानन्दचिदेक-
विग्रहम् । अनन्तरायेप्सितसिद्धये वयं तमेकदन्तं
सततं भजामहे ॥ १ ॥

अनन्तकल्याणकारी गुणोंका एक पात्र है तथा निरंतर आनन्द चित् और एक विग्रह (सत्) है उस गजाननको विघ्ननाशके लिये और अभीष्ट सिद्धिके लिये हम निरंतर भजन करें ॥ १ ॥

मङ्गलाचरण तथा टीकाकारका परिचय ।

यो वेदैरगुणोऽपि सन्ततरतैः संस्तूयते शक्तिमान्,
यो मूर्त्या रहितोऽपि योगनिरतैर्दृग्गोचरं प्राप्यते ।
यत्तेजश्च चकास्ति सर्वजगतां ध्वान्तापहं तापहं
तं वन्दे परमव्ययायममलं शान्तं महान्तं विभुम् ॥ १ ॥

---

१ 'कल्याणं मङ्गलं शुभम्' इत्यमरः । २ 'अप्येकदन्तहेरम्बलम्बोदरगजाननाः' इत्यमरः ।

ताराचन्द्रस्य तनयो लक्ष्मीदेव्यास्तु गर्भजः ।
सुखदेवाभिधो धीमान् वैद्यशास्त्रविशारदः ॥ २ ॥
विद्वज्जनविनोदाय बालानां सुखबुद्धये ।
तनुते धाराकल्पस्य विवृत्तिसुखबोधिनीम् ॥ ३ ॥

स्नेहधारागुणाः ।

धातूनां दृढतां करोति वृषतां देहाग्निवर्णौजसां
स्थैर्यं पाटवमिन्द्रियस्य जरसो मान्द्यं चिरञ्जीवितम् ।
अस्थ्नां भंगमपाकरोति नितरां दोषान् समीरादिकान्
सर्वस्नेहकृता सुखोष्णसुभगा सर्वाङ्गधारा नृणाम् ॥ २ ॥

मनुष्योंको तैलादि स्नेहकी सर्वांग धाराका सेवन धातुओंको दृढ करता है, शरीर, अग्नि, वर्ण और ओजको पुष्ट करता है, तथा इन्द्रियोंकी स्थिरता तथा इन्द्रियोंमें चालाकी, बुढापेका देरसे आना, चिरकालतक जीवित रहना, हड्डियोंके भंगको दूर करता है, निरंतर सभी वातादि दोषशान्त हो जाते हैं। हर प्रकारके स्नेहकी धारा न बहुत गरम आवै न बहुत ठंढी होवे । ऐसी धाराका सेवन सुखकोभी बढाता है ॥ २ ॥

सेचनविधौ द्रोणीकरणयोग्या वृक्षाः ।

प्लक्षोदुम्बरगन्धसारवरुणन्यग्रोधदेवद्रुमाः
पुन्नागाह्वकपित्थचोचबकुलाशोकासनाम्रास्तथा ।
डोलाचम्पकबिल्वनिम्बखदिरामोघाग्निमन्थार्जुना
इत्याद्यन्यतमेन सेचनविधौ द्रोणीं प्रकुर्याद्बुधः ॥ ३ ॥

बड, गूलर, चन्दन, वरना, पीपल, देवदार, नागकेसर, कैथ, तजवृक्ष, मौलसरी, अशोक, विजयसार, आम, डोला, चम्पा, बेल, नीम, खैर, पाढर, अगेथू गनियार, कोहू इनमेंसे किसी एक वृक्षकी लकडीका हौज बनावे इस सेचनपात्रको द्रोणी कहते हैं ॥ ३ ॥

द्रोणीप्रमाणम् ।

द्रोणी हस्तचतुष्कदीर्घकरमात्रव्यासतत्पादमा-
त्रोद्यद्भित्तियुता दृढा समतला पादान्तरन्ध्रा बहिः ।
शीर्षस्थान इहोन्नतैककरमत्रात्तानविस्तारका
निम्ना किञ्चन मध्यतश्च चरणैर्हस्तैश्च युक्ता दृढैः ॥ ४ ॥

द्रोणीपात्र (हौज) चार हाथ लम्बा, एक हाथ चौडा हो

---

१ गन्धसारश्चन्दनः । 'गन्धसारो मलयजो भद्रश्रीश्चन्दनोऽस्त्रियाम्' इत्यमरः ।

उसमें हाथ २ भर ऊँची दीवारें हों, वह दृढ (मजबूत) हो, नीचेका भाग समान हो, पाँवोंकी ओर अन्तमें छिद्र हो इसका यह अभिप्राय है जिससे स्नानका जल वगैरह निकल जाय। मस्तककी ओर एक हाथ ऊंचा लम्बा चौडा पट्टा लगा हो (जिससे शिर ऊँचा रह सके) और बीचमें गहरा हो, दृढ पाँवोंसे वैठाया गया हो तथा सुंदर हो इसको द्रोणी कहते हैं ॥ ४ ॥

धारासेचनाविधिः ।

एवं मारुतहारिभिश्च तरुभिर्द्रोणीं विधायादरा-
द्देवं चेभमुखं द्विजानपि भिषग्वृद्धान् प्रपूज्यातिथीन् ।
पूर्वाह्ने दिवसे शुभेऽतिमहिते लग्ने शयानस्य त-
द्द्रोण्यां सेचनमाचरेत् पटुमतिर्द्रव्यैर्यथोक्तैर्भिषक् ॥५॥

इस प्रकारसे वायुनाशक वृक्षोंकी द्रोणी बनाकर फिर शुभ मुहूर्तयुक्त दिनमें अपने इष्ट देव, गणपति, ब्राह्मण, वृद्ध, वैद्य और अतिथियोंका पूजन कर प्रातःकालके समय उस द्रोणीपात्र (हौज) में रोगी सो जावे इस प्रकार सोये हुए मनुष्यके ऊपर अतिकुशल वैद्य शास्त्रोक्त द्रव्योंके स्नेहसे सेचन करे ॥५॥

---

१ ' इभमुखं ' गजाननम् ।

सेचनार्थं कलशविधानम्।

स्वर्णाद्युत्तमलोहजस्तु करको मृत्संभवो वाऽत्र त-
न्नालाग्रं तु कनिष्ठिकाङ्गुलिपरीणाहोन्मितं रोगिणः।
द्विप्रस्थप्रमितो विधेय इति वा मध्यस्थरन्ध्रादधो
गच्छद्वर्तिरथोर्ध्वलम्ब्यपि घटः कार्यः शिरःसेचने॥ ६॥

सोना चांदीसे लेकर उत्तम लोहेपर्यन्त किसी एकका कमण्डलु बनाया जाय, उसके नालका अगला भाग (टूटी) रोगीकी कनिष्ठिका (सबसे छोटी अंगुली हाथकी) के बराबर मोटी लगानी चाहिये। अगर किसी कारणसे कोई धातुका कमण्डलु न मिले तब मिट्टीकेही कमण्डलुसे काम लेलेना चाहिये। इस प्रकारके कमण्डलुकी टूटी ऐसी होनी चाहिये जिसके छिद्रके बीचमें बराबर बत्ती निकल सके (अर्थात् नालिका साफ होनी चाहिये) और यह कमण्डलु इतना बडा होना चाहिये जिसमें दो सेर जल वगैरह आजाय शिरःसेचनमें ऐसा कमण्डलु बनाना चाहिये॥ ६॥

---

१ करकः कमण्डलुः। 'करकस्तु पुमान् पक्षिविशेषे दाडिमेऽपि च। द्वयोर्मेघे जले न स्त्री करकश्च कमण्डलौ॥" इति मेदिनी।

सेचनविधौ योग्याः परिचारकाः सेचनविधिश्च । दोषविशेषे योज्याः स्नेहाः ।

ग्राह्यास्ते परिचारकाः स्युरनुरक्ताः सावधानाः शुभा
ये तद्धस्तदृढावलम्बनवशात्तत्पात्रपातादितः ।
भीतिर्जातुचिदातुरस्य तु यथा न स्यात्तथा कारये-
द्धारां मूर्धनि हस्तयोरपि पृथग्वक्षःस्थले पादयोः ॥७॥

यद्वा हस्ततलप्रपूर्णपिचुना सेकं क्वचित्कारये-
द्योज्यं स्नेहचतुष्टयं च तिलजं वा तत्र शुद्धेऽनिले ।
पित्तेऽस्रे च घृतं, कफे तु तिलजं, वातेऽस्रपित्तान्विते
तैलाज्यं तु समं, कफेन सहिते तैलार्धभागं घृतम् ॥८॥

जो सेवक स्वामिभक्त हों तथा सावधान होकर कार्य करने-वाले और साफ हों औरभी जिनके हाथसे कलश छूट जानेका डर न हो, अथवा धाराके बाहर दवाईके इधर उधर गिरजानेका भय न हो अर्थात् बलवान् हो इस प्रकारके सेवकोंके हाथमें औषधिके कमण्डलुको देकर अलग २ हाथोंमें वक्षःस्थलमें और पाँवोंमें धारासे सिंचन करावे । और कहीं २ मर्मस्थानोंमें हाथोंमें रुई लेकर उसे भिगो २ कर सिंचन करे । केवल वायु-

---

१ 'सर्पिर्मज्जा वसा तैलं स्नेहेषु प्रवरं मतम् । इति वाग्भटः ।

रोगमें तो स्नेहचतुष्टय (घी, तैल, वसा, मज्जा) से सिंचन करे अथवा केवल तिलतैलसे ही सिंचन करना चाहिये । पित्त और रक्तदोषमें घृतसे, कफमें तो तिलतैलसे, रक्तपित्तसहित वायु हो तो तेल और घृत दोनों समानसे, कफसहित वात हो तो आधा हिस्सा तेलसे मिलाकर घीसे सिंचन करे ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथ तक्रधारां विवक्षुः पूर्वं चतुर्धा मूर्धनि तैलं निर्दिशति।

अभ्यङ्गः परिषेचनं पिचुशिरोबस्ती च विद्याच्चतु-
र्भेदं मूर्धनि तैलमप्यतिगुणं चैतत्क्रमेणोत्तरम् ।
अभ्यङ्गो विनिहन्ति रौक्ष्यमपि कण्डूं, दाहशो-
फव्रणक्लेदादीन् परिषेचनं, पिचु कचस्फोटादि,
चान्त्योऽनिलम् ॥ ९ ॥

इसके बाद सेचनमें तथा धाराके विधानके लिये प्रथम चार प्रकारके तैलका निर्देश करते हैं । मस्तकपर सेचन करनेके निमित्त चार प्रकार होते हैं, जैसे १ अभ्यंग, २ परिषेचन, ३ पिचु (फोहा रखना), ४ शिरोबस्ति यह उत्तरोत्तर अतिगुणदायक होतेहैं । जैसे अभ्यंग (मालिश) से शरीर और मूर्धाका रूक्षपन और खुजली दूर

होती है । परिषेचनसे दाह (जलन), सूजन, व्रण और ग्लानि दूर होते हैं, पिचु रखनेसे बालोंके रोग और फोडे फुंसी आदि आराम होते हैं और शिरोवस्तिसे वायुरोग आराम होता है ॥ ९ ॥

तक्रधाराविधानम् ।

धारायास्त्वेकवर्षातपहिमपरिशोषातिशुष्कप्रकीर्णं
धात्रीप्रस्थं सपादं भिषगथ पटुधीः संत्यजेद्वीज-
मस्याः । उत्क्वाथ्याष्टादशाख्यामितकुडवजले
षष्ठभागावशिष्टं तत्तुल्यं चाऽम्लतक्रं विधिरिति
मुनिभिः प्रोक्त आत्रेयमुख्यैः ॥ १० ॥

आत्रेयादि मुख्य ऋषियोंने कहा है कि एक वर्षकी बरसात गरमी और शीतमें पडे रहे ऐसे एक बरसके पुराने सूखे हुए आंवलोंको सवासेर लेकर और बीज निकालकर कूट ले तदनंतर अठारह पाव जलमें काढा करे छटा हिस्सा रहनेपर उतारकर छान ले फिर उतनाही खट्टा तक्र लेना चाहिये ॥ १० ॥

धारायोग्यपात्राणि ।

धारायां स्फटिकप्रवर्णरजतप्लक्षादिपूर्वोक्तवृ-
क्षायस्ताम्रवराटिकाप्रथितमृत्पात्रं त्वतीवोत्तमम् ।

---

१ ' द्विगुणिते वारिणि शृतात्क्षीराज्जातं तक्रं इति क्रमः केरलेषु ।

क्वचिद्रोगिकनिष्ठिकान्तविवरं शंसन्ति केचित्त वा ।
तत्पर्वोपमविस्तृतं तु सुषिरं पात्रस्य मध्ये कृतम् ॥ ११

स्फटिकमणि, मूंगा, चांदी और पूर्वमें कहे वटादि वृक्षोंका काष्ठ, लोह, ताम्बा, मिट्टीका पात्र अथवा चीनी अथवा मिट्टीका पात्र अति श्रेष्ठ होता है । पात्र टूटीदार होना चाहिये । कई कहते हैं कि यह टूटीका छिद्र रोगीकी कनिष्ठिका अंगुलीके बराबर होना चाहिये और कई कहते हैं अंगुलियोंके पोरके समान मोटा छिद्र होना चाहिये । अगर टूटीदार न मिले तब पात्रकी पेंदीके बीचमें पूर्वोक्त छिद्रके नियमके अनुसार साफ छिद्र करे ॥ ११ ॥

सेचनविधेः पश्चात्कर्म ।

धारायाश्चावसाने निजगदशमनप्रोक्तसर्पिश्च सेव्यं
तत्काले चावसंस्थः कथमपि वसतु प्रीतिमानेष रोगी ।
कायक्लेशानशेषान्मनसि सुखहरान्वक्रजिह्वासुखादीं-
स्त्यक्त्वा पाटीरशुद्धाम्बरविधृतवपुर्ब्रह्मविज्ञाने-
तुल्यः ॥ १२ ॥

उपरोक्त विधिसे सेचन समाप्त हो जानेपर वैद्यशास्त्रोक्त विधिसे बने हुए उस रोगको निवृत्त योग्य घृतका सेवन करावे ।

कोई सिद्ध तैलको अथवा घीको लेकर प्रयोग करे। स्वस्थमें तो सदा अभ्यंजन सेचनादि तैल और घीको मिलाकर प्रयोग करे। रोगीके रोगका बल, शरीरका बल देखकर प्रति दिन अथवा एक दिन छोडकर अथवा २-३-४-५-६ दिन बीचमें छोड २ कर स्नेहस्वेद करे॥ १५॥

पित्ते कोष्णमथोष्णमेव विहितं शुद्धे समीरामये
तत्स्नेहं द्रवमात्रमेव कफयुक्ते रक्तपित्तेऽपि च।
ऊर्ध्वाङ्गे तु सुशीतमेव विहितं सिञ्चेदविच्छिन्नमे-
वात्यर्थोच्चविलम्बितद्रुतनतं कुत्रापि नैवाचरेत्॥ १६॥

पित्तविकारमें तेल थोडा गरम और केवल वायुके रोगमें गरम, कफयुक्तमें अथवा रक्तपित्तमें द्रवधातु अर्थात् इतना गरम करे कि पिघल जाय, ऊर्ध्वाङ्ग (शिरादि ऊर्ध्वजत्रु) के सिंचनमें तो शीतका ही प्रयोग करना चाहिये अर्थात् गरम कर ठण्डा होनेपर प्रयोग करे, अविच्छिन्न धारासे सिंचन करे, बहुत ऊँचेसे तथा बहुत जल्दीसे कहींभी प्रयोग न करे॥ १६॥

सेचनकालप्रमाणं तथा सेचनविधौ धारोच्चतायाः प्रमाणम्।

रूक्षे पित्तयुतेऽनिले च परमः कालो मुहूर्तद्वयं
सार्धं तत्र, तदर्धमात्र उदितः स्निग्धे कफोन्मिश्रिते।

यावत्स्वेदसमुद्भवो भवति तत्तावन्निवर्तेत वा
स्नेहोऽत्र त्रिभिरेति रोमविवरं मात्राशतैश्च क्रमात् ॥१७॥
सप्तापि त्वच एति सप्तभिरथो षड्भिस्तथाऽस्रादिकान्।
षड्धातूनिषुसिन्धुदिग्ग्रहमिता मात्रा मुहूर्तो भवेत्।
धारोच्चं चतुरंगुलं तु शिरसः सेके तदन्यत्र त-
त्प्रोक्तं तत्त्रिगुणं च मन्दपतनात्तद्रोगवृद्धिर्भवेत् ॥१८॥

रूक्षमें और पित्तयुक्त वातरोगमें दो प्रहर और डेढ प्रहर क्रमसे धारासिंचनके निमित्त समय अधिकसे अधिक है। तथा चिकने कफमिश्रित वायुमें आधा समय पहलेसे रखना चाहिये अथवा जब अच्छी प्रकार पसीना आ जाय तब बन्द कर दे। इस धारासिंचनविधिसे ३०० मात्रामें स्नेह बालोंके छिद्रोंमें प्रविष्ट होता है। और ७०० मात्राओंमें सातों त्वचाओंमें स्नेह प्राप्त हो जाता है। ६०० मात्रामें रक्तादि छहों धातुओंमें प्राप्त होता है। ९५४५ मात्राका एक मुहूर्त होता है। शिरःसेचनमें शिरसे केवल ४ अंगुल ऊपरसेही धारा छोडनी चाहिये। शिरसे अन्यान्य स्थानमें तीन गुण बारह अंगुलकी ऊँचाईसे सिंचन करना चाहिये इसमें कम अथवा

अधिक होनेसे तथा धाराके बराबर न पडनेसे उसी रोगकी जिस रोगके नाशके लिये धाराका सेवन किया है उसकी वृद्धि होती है ॥ १७ ॥ १८ ॥

अविधिधाराकरणदोषास्तच्चिकित्सा च ।

अत्युच्चद्रुतभूरिकालपरिषेकाद्दाहवीसर्परु-
ङ्मूर्च्छाङ्गस्वरसादसन्धिदलनच्छर्द्यस्रपित्तज्वराः ।
कोठाद्याश्च भवन्त्यतः परदिने गण्डूषनस्यादिकं
कृत्वा शुद्धमहौषधेन सुशृतं तोयं पुनः पाययेत् १९॥
सायाह्ने लघु भोजयेत्कटुतरं यूषान्वितं वाऽप्यथो
बस्तिं स्नेहकृतं च सैन्धवकृतं कुर्यात्तृतीयेऽहनि ।
स्नेहव्यापदि चोक्तकर्म निखिलं कुर्याच्चतुर्थेऽह्नचतः
प्राग्वत्स्नेहनिषेवणं च विधिवत्कुर्याद्दिने पञ्चमे ॥२०॥

विधिरहित धारासे सिंचन करनेसे उत्पन्न दोष और उसकी चिकित्सा । धाराकल्पमें कही हुई विधिसे विरुद्ध अधिक ऊँचेसे जल्दी करनेसे अथवा अधिक देरके साथ परिषेक करनेसे शरीरमें जलन, विसर्प, मूर्च्छा, स्वरका विगड जाना, सन्धियोंमें पीडा, वमन, रक्तपित्त ज्वर और कोठादि उत्पन्न

हो जाते हैं इससे जिस दिन धारासे सिंचन हुआ हो उसके दूसरे दिन गण्डूष तथा नस्यादि करके सोंठ डालकर किये कषायको फिर पिलावे । सायंकाल हलका भोजन, काली मरिच आदि मिला हुआ यूष पिलाना चाहिये, तीसरे दिन सैंधानमक मिलाकर तेलकी बस्ति लेनी चाहिये, अगर विधिपूर्वक तेलकी धारा ली गई हो तो उक्त कार्य चौथे दिन करके पांचवें दिन फिर धारासे सिंचन करे ॥ १९ ॥ २० ॥

सेचनविधौ क्षीरादिपरिवर्तनकालः ।

एकाहादपरं च सेचनविधौ क्षीरादिकं गृह्यते
धान्याम्लं त्रिदिनात्परं विधिरयं स्नेहस्य तु प्रायशः ।
एकेन त्रिदिनं परेण च तथा सिञ्चेत्त्र्यहं तद्द्वयं
मिश्रीकृत्य च सप्तमेऽहनि पुनस्त्यक्त्वैनमेवं चरेत् २१

जहां दूधसे अभिषेक करना कहा हो वहा दूध प्रति दिन नवीन (ताजा) लेना चाहिये और जहां धान्याम्लसे कहा हो वहां एक दिनके बनाये हुए धान्याम्लसे तीन दिनतक सेचन कर सक्ते हैं अर्थात् एक दिनका बनाया धान्याम्ल ३ दिनतक अच्छा रहता है, चौथे दिन खराब हो जाता है इससे फिर नया

धान्याम्ल चौथे दिनके लिये बनावे। इसी प्रकारसे तैलादि स्नेहकी भी यही विधि है अर्थात् एक दिनका बनाया हुआ स्नेह तीन दिनतक काम दे सक्ता है। एक स्नेहसे प्रथम तीन दिनतक सेचन करे तदनंतर और तीन दिनतक दूसरे स्नेहसे अथवा धान्याम्लसे सेचन करे इसके बाद सातवें दिन दोनों प्रथम सेचित द्रव्योंको मिलाकर सेचन करे। इस प्रकारसे धारामें तैलादि स्नेहभी सप्ताहभरमें बिगड जाते हैं। अत एव सप्ताह बीत जानेपर उन प्रथम बनाये तैलादि स्नेहोंको छोड देना चाहिये ॥ २१ ॥

सेचनद्रव्याणां नूतनादिभेदेन गुणदोषाः। सेचनविधावयोग्यः कालः ।

यन्नूतेन निषेचनं प्रतिदिनं तन्नूत्तमं, मध्यमं
तेनैव त्रिदिनं, ततोऽपि च परं मिश्रीकृतं चाधमम्।
अत्युष्णेऽपि च मन्दकोपसमये मन्दातपे शीतले
कुर्यान्न त्वपराह्णकेऽपि च भिषग्रात्रौ तथा सेचनम् २२

जो प्रतिदिन नवीन औषधिको बनाकर उससे सिंचन करना है वह उत्तम और जो एक बारकी बनाई औषधिसे तीन दिन-

तक सेचन करना है वह मध्यम है। अधिक दिनकी बनी हुई औषधिसे मिलाकर सेचन करना अधम होता है। अत्यन्त उष्णतामें तथा थोडेसे रोगमें, तथा धूप तेज न हो, बहुत ठण्डकमें, तथा दिनके तीसरे प्रहरमें और रात्रिमें वैद्य सिंचन न करावे ॥ २२ ॥

सेचनविधेः पश्चात्कर्म ।

सेकानन्तरमातुरस्तु शिशिराम्बुप्रोक्षणैः ष्ठीवनै-
श्चोत्क्षेपैर्मृदुमारुतैरनुगुणं विश्राम्य तत्रोत्थितः ।
मन्दं किञ्चन मर्दितोऽनु च रसैः स्नेहं कषायैस्त्यजे-
त्स्नात्वा कोष्णजलैः सुगंधसुभगो धान्यौषधांभःपिबेत् ॥
पेयं वा लघु सोषणाज्यकटु तक्रं यूषयुक्तं मितं
भक्तं कोष्णमथाचरेद्विधिमतः स्नेहोक्तमत्राखिलम् ।
एवं सप्तदिनं व्यतीत्य पुनरन्येद्युर्विरेकं ततो
बस्तिं तत्र तु कारयेदिति विधिर्नासत्यसंभाषितः ॥ २४ ॥

सेचन करनेके रोगी ठण्डे जलसे आँखोंको धोवे, खांसकर कफको निकाले, शरीरको ऊपर नीचे करे तथा धारासे उठकर

मन्द २ थोडी वायु खावे और फिर कुछ विश्राम करे, फिर धाराके कषायोंके स्नेहको मालिश कर सुखा देवे, फिर शीत गरम जलसे स्नान करे, सुगन्धित तथा हलके द्रव्यका भोजन करे तथा वातनाशक औषधियोंसे सिद्ध किये जलको पीवे, स्नेहोक्त विधिके अनुसार बने हुए कुछ गरम भक्तको सेवन करे, इस प्रकार सात दिन पथ्यसे रहकर आठवें दिन विरेचनको ले तदनंतर बस्तिको करे । इसमें कुछभी असत्य भाषण नहीं है ॥ २३ ॥ २४ ॥

सेचनविधौ परिहारकालः । सेचनविधौ परिहार्याणि ।

यावन्त्यौषधयोजितानि दिवसान्येतानि तावन्त्यहा-
न्यन्यान्यप्यथ सर्वकर्मसु बुधो नित्यं जितात्मा नयेत् ।
स्त्रीणां स्पर्शनदर्शनस्मृतिवशाच्छुक्रे च्युते सन्ति त-
त्संपर्केण विनाऽपि तद्भवगदास्तस्मात्त्यजेत्सर्वदा ॥ २५ ॥
व्यायामातपवेगरोधहिमधूमात्युच्चनीचोपधा-
नाहःस्वप्नरजःप्रवातचिरकालासीनताः संस्थितिम् ।
शोकं जागरपादयानगमनक्रोधातिभाष्यादिकां-
स्त्यक्त्वाथोष्णजलोपचार्यनतिभुक्स्याद्ब्रह्मचारी सदा॥२६

जितने दिन औषधियोंसे सेचनविधिका कर्म करता रहे उतने दिनतक जितेंद्रिय और पथ्यसेवी रहे। स्त्रियोंके दर्शन, स्पर्शन, स्मृति आदिसे शुक्र स्खलित हो जानेसे विनाभी स्त्रीके सम्पर्कसे शुक्रसम्बन्धी रोग हो सकते हैं। अत एव बिलकुल चित्त हटाकर अन्यान्य कार्योंमें चित्तको लगा देना चाहिये। कसरत, घाम, भूख, प्यास, दस्त, मूत्र आदि वेगोंका रोकना, बहुत ठंड, धूआँ, बहुत ऊँची और नीची गद्दीपर बैठना, दिनमें सोना, आंधी, धूल, बडी देरतक बैठाही रहना, शोक, रात्रिमें जागना, पैदल तथा गाडीपर चढकर चलना, अतिक्रोध, अतिभाषण इत्यादि छोड दे, उष्ण जलका सेवन करे और ब्रह्मचर्यसे रहे ॥ २५ ॥ २६ ॥

रोगविशेषे परिषेचनविधिविशेषः।

गुल्मानाहभगन्दरव्रणतुनीशूलाभिघातास्रवा-
तोदावर्तककोठमूढमरुदष्ठीलाविसर्पादिषु।
प्लीहाध्मानकविद्रधिप्रतितुनीष्वेकाङ्गसेकं तथा
कुर्याद्धस्ततलप्रपूर्णपिचुना मन्दं सुखोष्णं भिषक् ॥२७

इति धाराकल्पः समाप्तः।

गुल्म, आनाह (पेटका फूलना), भगंदर, व्रण, तूनि (वातरोग), शूल, चोट, रक्तस्राव, वायुका उदावर्त, कोठ, मूढवात, अष्ठीला, विसर्प, प्लीहा, आध्मान, विद्रधि, प्रतितूनी इन रोगोंमें एकाङ्ग सेक करना चाहिये और वहभी हाथोंमें रुई लेकर सुखोष्ण औषधिसे मन्द २ सिंचन करना चाहिये ॥ २७ ॥

इति कविराजसुखदेववैद्यवाचस्पतिविरचिता धाराकल्पविवृत्तिसुखबोधिनीटीका समाप्ता ।

इति भाषाटीकासहितो धाराकल्पः समाप्तः ।



पुस्तक मिलनेका ठिकाना ।

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम् प्रेस,
कल्याण–मुम्बई.

खेमराज श्रीकृष्णदास
" श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम् प्रेस
खेतवाडी–मुम्बई

इलाजुलगुर्वा—वैद्य और हकीमोंके लिये बडे कामकी वस्तु है इसमें शिरसे पांवतकके सब रोगोंके लक्षण निदान और उनके नुसखे एक २ रोगपर दश दश बीस २ दिये हैं. .... १—४

आयुर्वेदचिन्तामणि अर्थात् मिश्रनिघंटु—चरक, सुश्रुत, वाग्भट, भावप्रकाश, राजनिघण्टु, आत्रेय-संहिता, राजवल्लभ और वैद्यक निघंटु इत्यादि अनेक ग्रंथोंसे संगृहीत और अनुवादित. ... १—१२

कूटमुद्गर भा० टी० .... ०—२

कुमारतंत्र रावणकृत भाषाटीका .... ०—८

केशकल्पद्रुम इस पुस्तकमें १०१ उत्तम नुसखे बहुत उत्तम बालोंको काला करनेके लिखे हैं. .... ०—४

चर्य्याचंद्रोदय भाषाटीका व्यंजन बनानेका ग्रंथ. .... १—८

चिकित्साधातुसार भाषा .... ०—५

चिकित्साखण्ड भाषाटीका प्रथम भाग ... ... ४—०

ज्वरतिमिरनाशक भाषाटीका सर्व प्रकारके ज्वरोंकी अच्छी २ अनुभवी दवाओंका संग्रह .... १—०

चरकसंहिता--(चरकऋषिप्रणीत) टीका टकसाल निवासी वैद्यपञ्चानन पं० रामप्रसाद वैद्योपाध्याय-कृत प्रसादनी भाषाटीकासहित । चरकके आठों-स्थान एकसे एक अपूर्व होनेपरभी " चिकित्सा-स्थान " तो अद्वितीय है उसमें निरोग मनुष्यके लिये वे सहजप्रयोग लिखे हैं कि, वह कभी बीमारहीं न हो और रोगी चिकित्सा करनेपर तत्काल निरोग हो। वैद्यमात्रको यह ग्रन्थ अवश्य संग्रह करना चाहिये । पहलेसे अबकी बार बहुत वडा होगया है जिसकी सुन्दर सुनहरी दो जिल्द बन्धी हैं. .... ९—०

जर्राही प्रकाश—जर्राही (शस्त्रक्रिया) संबंधी सब प्रकारके विषयोंका वर्णन है. .... १—८

डाक्टरी चिकित्सासार भाषा .... ०—१०

नपुंसकचिकित्सा भाषाटीका (नूतन) .... ०—६

नपुंसकसंजीवनी प्रथम भाग .... ०—६

नपुंसकसंजीवनी दूसरा भाग .... ०—६

धन्वंतरी भाषाटीका (वैद्यकग्रंथ) लाला शालिग्राम वैश्यकृत भाषाटीका जिसमें समस्त रोगोंका निदान कारण लक्षण और चिकित्सा औषधी संग्रह कर लिखा है द्वितीयावृत्ति .... ५—०

नाडीदर्पण नांडी देखनेमें अत्यन्त उत्कृष्ट .... ०—६

नाडीपरीक्षा भाषाटीका अतिसुलभ .... ०—१॥

निदानदीपिका संस्कृत .... १—८

पथ्यापथ्यभाषाटीका .... ०—१२

पशुचिकित्सा अर्थात्—वृषकल्पद्रुम .... १—०

पाकप्रदीप वाजीकरण भा० टी० .... ०—८

पाकमाला बालबोधोदय भा० टी० .... ०—३

बालतंत्रभाषावार्तिक .... ०—१४

बालसंजीवन (वार्तिकमें) .... ०—८

बालबोधपाकावली .... ०—२

बूटीप्रचार प्रथम भाग—अनुभव किये हुए चुटकुले इसमें जडी बूटीयोंके २०० से ऊपर ऐसे अनुपम चित्र दिये गये हैं. .... १—०

बृहन्निघण्टुरत्नाकर प्रथमभाग.	३–०
बृहन्निघण्टुरत्नाकर द्वितियभाग	३–८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर तृतीयभाग	३–८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर चतुर्थभाग	२–८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर पंचम भाग	५–८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर छठा भाग	४–८
बृहन्निघण्टुरत्नाकर–सप्तम अष्टम भाग जिसमें अनेक देशादेशांतरीय संस्कृत, हिन्दी, बंगला, महाराष्ट्री, गौर्जरी, द्राविडी, तैलंगी, औत्कली, इंग्लिश, लैटिन, फारसी, आरबी भाषाओंमें सर्व औषधियोंके नाम और गुणोंका वर्णन औषधियोंके चित्रोंसमेत	८–०
बृहन्निघण्टुरत्नाकर संपूर्ण आठों भाग	३०–०
बोपदेवशतकवैद्यक भाषाटीका समेत	०–६
भावप्रकाश भा० टी० अति उत्तम	७–०
माधवनिदान–मधुकोष और आतंकदर्पण संस्कृत-टीकासमेत	३–०

मदनपालनिघंटु भाषाटीका ग्लेज	२—०
” ” रफ	१—१२
हिकमतप्रकाश	१—४
माधवनिदान भाषाटीका उत्तम ग्लेज	२—०
माधवनिदान ” रफ	१—८
मिजान तिब्ब सर्वांग चिकित्सा	२—०
योगतरङ्गिणी बहुतही उत्तम भा० टी०	२—०
योगचिन्तामणि भाषाटीका	१—४
रसायनतन्त्र भाषाटीका	०—२
रसरत्नाकर भाषाटीकासमेत	५—०
राजवल्लभ निघण्टु भाषाटीका	१—८
लोलिम्बराज वैद्यजीवन संस्कृतटीका और भाषाटीका	०—१४
विषचिकित्सादर्पण	०—४

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना—
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
“लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर” छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.